दौड़ (उपन्यास) – ममता कालिया

लेखक - शीतला प्रसाद दुबे

१

दौड़ (उपन्यास) – ममता कालिया

इकाई की रूपरेखा :

१.१ प्रस्तावना
१.२ उद्देश्य
१.३ लेखिका परिचय
१.३.१ रचनाएँ
१.३.२ पुरस्कार एवं सम्मान
१.४ कथासार

१.१ प्रस्तावना

ममता कालिया लिखित उपन्यास 'दौड़' को आधार बनाकर यहाँ पर पाठ्यक्रम हेतु निर्धारित मुद्दों को अध्ययन करना अपेक्षित है। पहले लेखिका का संक्षिप्त परिचय देते हुए उपन्यास के उद्देश्य पर प्रकाश डाला गया है। तत्पश्चात् विद्यार्थियों को ध्यान में रखते हुए उपन्यास का कथासार दिया गया है। कथासार में ही लेखिका दौड़ के माध्यम से क्या कहना चाहती हैं इसका भी विस्तार सहित वर्णन किया गया है । 'बाजारवाद और उपभोक्तावाद' तथा विज्ञापन और नैतिकता' के बारे मे भी प्रस्तुत अध्ययन में उपन्यास के आधार पर विवेचन किया गया है। पवन, रेखा, राकेश, अभिषेक और राजुल तथा सघन के चरित्र तथा उनके स्वभाव का प्रस्तुतीकरण भी यहाँ हुआ है जिससे विद्यार्थियों को परीक्षा की तैयारी करने में आसानी हो। सरल मार्ग मिशन तथा कॉलोनी का भी वर्णन करके उसकी सच्चाई बताई गयी है।

सविस्तार अध्ययन के साथ ही कुछ अवतरणों को देकर उनका स्पष्टीकरण नमूने के तौर पर दिया गया है। विद्यार्थियों को ध्यान में रखते हुए अभ्यास हेतु अवतरण, प्रश्न, टिप्पणियाँ और कुछ वस्तुनिष्ठ प्रश्न उनके उत्तर के साथ दिए गए हैं।

१.२ उद्देश्य

दूरस्थ शिक्षा की अवधारणा नियमित शिक्षा से अलग है। नियमित शिक्षा ग्रहण कर रहे विद्यार्थी विश्वविद्यालय अथवा किसी महाविद्यालय से सम्बद्ध होते हैं, जहाँ नियमित रूप से उन्हें पाठ्यक्रम पर आधारित शिक्षा दी जाती है। लेकिन दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थी या तो कहीं आजीविका के कार्य से जुड़े रहते हैं अथवा किसी अन्य कारण से नियमित कक्षाएँ नहीं ले सकते। उनमें पढ़ने का उत्साह तो रहता है लेकिन समयाभाव के कारण वे नियमित रूप से पढाई नहीं कर सकते। उच्च शिक्षा से ऐसे विद्यार्थी महरूम न हो जाएँ इसलिए दूरस्थ शिक्षा शुरू

की गई है। अत: विश्वविद्यालय का उत्तरदायित्व है कि वह ऐसे जरुरतमंद विद्यार्थियों हेतु शिक्षा का अवसर उपलब्ध कराए और उन्हें यथा संभव पाठ्यक्रम से संबधित सामग्री भी मुहैया कराये।

इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए मुंबई विश्वविद्यालय के द्वितीय वर्ष हिन्दी प्रश्नपत्र-३ के विद्यार्थियों हेतु 'दौड़' उपन्यास से संबन्धित सामग्री यहाँ देने का प्रयास किया गया है। दूरस्थ शिक्षा के उद्देश्य के अनुसार यहाँ यह पूरा प्रयास किया गया है कि विद्यार्थियों को 'दौड़' उपन्यास संबन्धित पूरी जानकारी प्राप्त हो जाए।

मुझे पूरा विश्वास है कि यह सामग्री विद्यार्थियों की आवश्यकता को पूरी करने में सहयोगी सिद्ध होकर अपने उद्देश्य को पूर्ण करेगी ।

१.३ लेखिका परिचय

ममता कालिया का जन्म उत्तर प्रदेश में वृन्दावन क्षेत्र में हुआ था। वे सन् १९६० से साहित्य लेखन में सक्रिय हैं। उन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं को समृध्द किया है और कविता, कहानी, उपन्यास तथा नाटक विधा में अपनी लेखनी को आजमाया है। आजीविका के लिए उन्होंने दिल्ली तथा मुंबई एस. एन. डी. टी. विश्वविद्यालय के महाविद्यालयों में अंग्रेजी की प्राध्यपिका के रूप में कार्य किया। वे १९७३से २००१ तक इलाहाबाद के एक महाविद्यालय में प्राचार्य के पद पर रहीं और बाद में भारतीय भाषा परिषद कोलकत्ता की निदेशक के रुप में कार्य किया। वर्तमान में वे पूर्ण रूप से सक्रिय लेखन से जुड़ी हैं।

१.३.१ रचनाएँ

ममता कालिया ने 'बेघर' 'नरक दर नरक' ' प्रेमकहानी', 'लड़कियाँ', 'एक पत्नी के नोट्स ' तथा 'दौड़' (उपन्यास) और 'यहाँ रोना मना है ' एवं 'आप न बदलेंगे' एकांकी संग्रहों की रचना की है। इन्होंने अंग्रेजी में 'Tribute to Papa and other Poems' तथा 'Poems 78' शीर्षक से काव्य – संग्रहों की भी रचना की है। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रकाशित अनेक काव्य तथा कहानी संकलनों में इनकी रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं।

१.३.२ पुरस्कार एवं सम्मान :-

ममता कालिया को उनकी रचनाओं पर उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का ' महादेवी ' स्मृति पुरस्कार' तथा 'यशपाल स्मृति सम्मानों के साथ ही कलकत्ता का 'अभिनव भारती' रचना सम्मान प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त उन्हें 'सावित्री बाई फुले सम्मान' ' हिन्दी साहित्य परिषद सम्मान ' और हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अमृत सम्मान भी प्राप्त हुआ है।

वे अभी भी लेखन कार्य में संलग्न हैं।

१.४ कथासार

वर्तमान युग, नए युग तथा नई युवा – पीढ़ी की भागती दौड़ती जिंदगी का युग है। आधुनिकता के नाम पर समाज में आ रहे चतुर्मुखी परिवर्तन का प्रभाव मानव संबन्धों पर भी पड़ा है । सफलता की चाहत ने नवीन समाज के युवा की सोच को पूरी तरह बदल दिया है। माँ –

पिता की महत्वाकांक्षा को पूरी करने के लिए आज का युवा जीवन की ऐसी 'दौड़' में शामिल हो जाता है कि न तो उसे पीछे देखने का मौका मिलता है और न ही वह पीछे मुड़कर देखना ही चाहता है। उसे लगने लगता है कि सामाजिक तथा पारिवारिक संबन्ध, भावुकता, अपनापन आदि सबकुछ केवल एक धोखा है। सच है तो मात्र सफलता । सफलता की चोटी पर चढ़ने के लिए नयी पीढ़ी किसी को भी सीढ़ी बना सकती है। वह, कैरियर की सरपट दौड़ में इस कदर शामिल है कि उसे केवल अपना जीवन, अपनी मान्यता तथा अपना मार्ग ही सर्वोत्तम लगता है। किसी की भी टोका – टोकी, दखलन्दाजी उन्हें जरा भी सहन नहीं होती।

लेखिका ममता कालिया ने राकेश, रेखा, पवन, स्टैला और सघन आदि के इई- गिर्द ऐसी कथा बुनी है जो शहरों की तेज दौड़ती जिंदगी में सामान्य होती जा रही है। माँ – पिता पहले तो अपने बच्चों को इस दौड़ में धकेल कर उन्हें सबसे आगे देखना चाहते हैं, लेकिन उस दौड़ में जब वे इतने आगे निकल जाते हैं कि उन्हें पहचान पाना मुश्किल हो जाता है, तो इनकी व्यथा बढ़ जाती है। महत्वांकाक्षा की उलझन उन्हें जीवन में कभी सुलझने नहीं देती। पवन पहले तो माता पिता की इच्छा को पूरी करने के लिए एम. बी. ए. करता है, लेकिन बहुराष्ट्रीय कंपनी की नौकरी उसे बाजारवाद के बीच लाकर खड़ा कर देती है जहाँ माता- पिता के लिए कोई स्थान नहीं। पवन अपने माता पिता के कहे अनुसार धर्म पत्नी नहीं लाता बल्कि प्रबुध्द, कॅरियरिस्ट और नए जमाने की स्टैला को अपना लाइफ पार्टनर बनाता है । रेखा, राकेश का छोटा बेटा सघन भी जब कॅम्प्यूटर शिक्षा हेतु विदेश चला जाता है तो उनके दु:ख का ओर छोर नहीं रहता, क्योंकि उनके पास रहने और उनकी बातें सुनने तो दूर अपना कहने वाला कोई नहीं उनके पास। पारंपारिक रुप से बेटों को अपने बुढ़ापे का सहारा मानने वाले लोगों को जब अपने आस-पास कोई नजर नहीं आता तो उनकी पीड़ा की कोई सीमा नहीं रहती। समय की तेज गति के साथ वे कदम नहीं मिला पाते तो भाविष्य को सँवारने वाले इन बूढ़ों को वर्तमान बड़ा दुखदायी लगने लगता है।

नैतिकता को बोझ मानने वाली नयी पीढ़ी अपने कॅरियर और प्रतिस्पर्धा की दौड़ में आगे निकल जाना चाहती है। इसके लिए उन्हें अपना घर परिवार छोड़कर दूर रहना पड़ता है । माँ के हाथ का बना खाना उन्हें नसीब नहीं होता, उन्हें तो 'मौसिमों' का बनाया खाना, खाना होता है। घर में गरम खाने की जिद तथा पसंद का स्वाद न होने पर न खाने की धौंस देते ये बच्चे, तय समय में यदि मौसी के यहाँ खाने नहीं पहुँचते तो पिज्जाहट का सहारा लेना पड़ता है। सफलता की 'दौड़' में शामिल नये युवा, अपनी सुख- सुविधाओं की तिलांजलि दे देते हैं। अपने पसंद की वस्तु, घर और खाना न मिलने पर भी उन्हें कोई तकलीफ नहीं होती। वस्तुत: तकलीफ होते हुए भी इन्हें मालूम ही नहीं पड़ता कि कोई परेशानी है।

आजीविका की दौड़ तथा उस दौड़ में आगे निकल जाने कि प्रतिस्पर्धा उनकी संवेदनाओं और भावुकता को खत्म कर देती है। अभिषेक ने सोच समझकर राजुल से विवाह किया था। दोंनो एक दूसरे को प्यार भी करते थे, लेकिन कंपनी के लिए विज्ञापन तैयार करने में मशगूल अभिषेक, अपनी पत्नी राजुल की बात पर बिफर पड़ता है। वह राजुल पर गुस्सा करते हुए कहता है - ' क्या मतलब तुम्हारा। तुम हमेशा टेढ़ा सोचती हो। जैसे तुम्हारे टेढ़े दात हैं वैसा टेढ़ी तुम्हारी सोच है। उधर राजुल भी सोचती है कि नौकरी करते समय वह जितनी स्वतंत्रता महसूस करती थी, नौकरी छूटने पर उतना ही बंधन हो गया है। लेखिका ने इसे बड़ी शिद्दत के साथ महसूस किया है, और समाज में नौकरी शुदा लड़किंयों की सोच तथा उनकी दशा को

स्पष्ट करते हुए कहती है - ' जब से राजुल ने नौकरी छोड़ी उसके अंन्दर असुरक्षा की भावना घर कर गई थी । साढ़े चार साल की नौकरी के बाद वह सिर्फ इसलिए हटा दी गई क्योंकि उसने विवाह कर लिया था।'

राजुल को स्वयं यह महसूस होता है कि विवाह के पूर्व भले ही पुरुष प्यार दिखाए परन्तु शादी के पश्चात वह जिम्मेदारी नहीं निभाता, नहीं निभाना चाहता। भारतीय परंपरा में शादी, परिवारिक अवधारणा के साथ जीने और संतुष्टि के साथ जीने के लिए मानी जाती है। शादी, भावुकता के साथ जीवन जीने और रिश्तों की ऊष्मा को महसूस करने के लिए जानी जाती है। लेकिन आधुनिक पीढ़ी अपनी आजादी को संतुष्टि से ज्यादा महत्व देती है। राजुल कहती है – मेरी सब कलीग्स कहती कि राजुल शादी करके अपनी आजादी चौपट करोगी और कुछ नहीं। आजकल तो ड्रिंक्स का जमाना है । डबल इनकम नो किड्स । मैं सेन्टिमेंट के चक्कर में कैंसे पड़ गई ।'

इस उपन्यास में भौतिक जीवन के यथार्थ को जिस तरह स्पष्ट किया गया है उसी तरह आध्यमिक जीवन दर्शन की नवीन दृष्टि को भी प्रकट किया गया है । सरल मार्ग मिशन के रुप में लेखिका ने आध्यात्मिक जीवन, दृष्टि की नयी सोच को प्रकट करना चाहा है । सरल मार्ग मिशन के ' स्वामी कृष्ण स्वामी जी महाराज के भक्त समुदाय में एक से एक सुशिक्षित उच्च पदस्थ अधिकारी और व्यवसायी थे । कोई डॉक्टर था तो कोई इंजीनियर कोई बँक अफसर तो कोई प्राइवेट सेक्टर का मॅनेजर यहॉ तक कि कई चोटी के कलाकार भी उनके भक्तों में शुमार थे। उनके कुछ विदेंशी भक्त भी थे जो भारतीयों से ज्यादा स्वदेशी बनने और दिखने की कोशिश करते।" लेखिका ने साफ साफ यह कहने की कोशिश की है कि पहले जहाँ भौतिकता से हटकर आध्यात्मिकता को देखा जाता था वहीं अब उसे यथार्थ के चश्में से देखा जाता है। ' उनका यथार्थवादी जीवन दर्शन उनके भक्तों को बहुत सही लगाता। वे सब भी अपने यथार्थ को त्याग कर नहीं उसमें से चार दिन की मोहलत निकालकर इस आध्यात्मिक हॉलिडे के लिए आते।' यहाँ लेखिका यह बताना चाहती है कि वर्तमान समय क्षणजीवी है इसलिए भौतिक त्याग के बदले उसमें से कुछ समय को अलग करना ही आज की भक्ति तथा आध्यात्म को रेंखाकित करता है।

उपन्यास में सोनी साहब की दिल के दौरे से हुई मौत, केवल मातम लेकर नहीं आती बल्कि कॉलोनी के बुजुर्गो की मुसीबत तथा नयी पीढ़ी की संवेदनहीनता का दस्तावेज बन जाती है। मिसेज सोनी तो विदेश में रह रहे अपने पुत्र सिद्दार्थ से पिता की मृत्यु का संदेश भी नहीं दे पातीं, लेकिन पुत्र बिना किसी संकोच के मिन्हाज साहब से कहता है कि वह हप्ते भर नहीं जा सकता। मिन्हाज साहब के आश्चर्य प्रकट करने पर कि एक हफ्ते डेड बॉडी कैसे पड़ी रहेगी ? वह उत्तर देता है - ' आप मुरदाघर में रखवा दीजिए । यहॉ तो महीनों बाँडी मारच्यूरी में रखी रहती है। जब बच्चों को फुरसत होती है प्यूनरल कर देते हैं। वह अपनी माँ से यह दुख नहीं व्यक्त करता कि पिता कि मृत्यु हो गयी बल्कि उनका शव हप्ते भर नहीं रखा जा सकता इसकी चिन्ता व्यक्त करता है । वह कहता है 'हम सब लुट गए ममा । लोग बता रहे हैं मेरे आने तक डैडी को रखा नहीं जा सकता। आप ऐसा कीजिए, इस काम के लिए किसी को बेटा बनाकर दाह-संस्कार करवाइए ।'

कॉलोनी की दशा को देखकर रेखा और राकेश को दुख भी हुआ और वे संशकित भी हुए पंरन्तु उन्होंने अपने मन को मनाया कि न तो उनकी हालत वैसी है और न ही उनके बच्चे ऐसे हैं ? रात को पवन का फोन आया तो रेखा खुश हो गयी। पवन ने बताया कि वह ढाका गया था । रेखा को जब उसने बताया कि वह उसके लिए ढाका की साड़ी लाया है तो वह बेहद खुश हो गयी कि इतनी दूर जाकर भी उसे माँ की याद बनी रही। लेकिन जब पवन ने कहा की स्टैला और उसकी माँ के लिए लायी साड़ी उन्हें पसंद नहीं आई इसलिए उसके लिए तीन साड़ियाँ हो गईं तो उसका दिल बैठ गया ।

पवन ने पिता राकेश से मनपक्कम में स्वामी जी के ध्यान शिविर में आने का न्योता देते हुए कहा कि ' अपने अखबार का एक विशेषांक प्लान कर लीजिए स्वामी जी पर विज्ञापन खूब मिलेंगे। यहाँ उनकी बहुत बड़ी शिष्य मंडली है। यानी कि हर किसी हाल में अपने फायदे को केंन्द्र में रखना नयी पीढ़ी का जीवन दर्शन है। आवश्यक नहीं कि पुराने लोग भी हर किसी घटना को लाभ हानि के तराजू पर तौल कर ही देंखें।

राजेश ने जब सघन के बारे में पूछा तो उसने यह तो बताया कि सघन ताइवे की स्थानीय राजनीति में हिस्सा लेकर गलत कर रहा है। लेकिन जब माँ ने उसे समझाने के लिए कहा तो उसने बड़े गैरजिम्मेदार तरीके से जवाब दे दिया कि 'वह जो करता है उसकी जिम्मेदारी है। कई लोग ठोकर खाकर ही संभलते हैं। सघन के बारे में रेखा और राकेश को विश्वास था कि वह सीधा साधा लड़का है, उसे सँभालने की जरुरत है। लेकिन जब सघन से उसकी बात हुई तो वह कॅरियर की दौड़ में पवन से भी आगे निकल चुका है। राकेश जब उसे भारत आकर जमने की बात करते हैं तो वह तीस - चालीस लाख की जरुरत बताते हुए अपना खुद का काम शुरू करने पर जोर दिया। पिता ने जब इतनी रक्कम न होने की बात की तो वह बिक्कर पड़ा। यह न सोचते हुए कि उसकी बातो का पिता पर क्या असर होगा, उसने कहा कि -'आपने इतने बरसों में क्या किया ? दोनों बच्चों का खर्च आपके सिर से उठ गया। घूमने आप जाते नहीं, पिक्चर आप देखते नहीं दारु आप पीते नहीं फिर आपके पैसों का क्या हुआ ? राकेश जो सबको समझाने की कोशिश करते की, अपने बच्चे के सवाल पर निरुत्तर हो गए क्योंकि उनसे उनका ही बच्चा रुपये, आने पाई क्या हिसाब माँग रहा था।

इस प्रकार लेखिका यह बताना चाहती है कि भूमंडलीकरण और बाजारवाद के प्रभाव ने नयी पीढ़ी को उनके कॅरियर का मार्ग तो प्रशस्त किया है, लेकिन संबधों की गाँठ ढीली पड़ गई। बाजार ने मनुष्य को आर्थिक प्रगति की ऐसी दौड़ में शामिल कर लिया है कि वह मनुष्य की संवेदना से दूर हो गया है।

२

उपन्यास पर आधारित प्रश्न

इकाई की रूपरेखा :

२.१ प्रस्तावना
२.२ उद्देश्य
२.३ 'दौड़' उपन्यास के माध्यम से लेखिका क्या कहना चाहती है ?
२.४ 'दौड़' उपन्यास में वर्तमान समाज का चित्रण किस प्रकार किया गया है

२.१ प्रस्तावना

'दौड़' उपन्यास में लेखिका ममता कालिया ने आधुनिक भारतीय समाज के यथार्थ को व्यक्त किया हैं। इस उपन्यास से संबन्धित दीर्घोत्तरी प्रश्न परीक्षा में पूछे जाते हैं, अत: यह आवश्यक है कि प्रश्नों के आधार पर भी अध्ययन प्रस्तुत किया जाय। इस इकाई के अन्तर्गत दीर्घोत्तरी प्रश्नों को ध्यान में रखा गया है। विद्यार्थी दिए गए प्रश्नों के आधार पर अन्य प्रश्नों के उत्तर भी लिख पाएँगे।

२.२ उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य निम्नलिखित है-

- विद्यार्थियों की उपन्यास के बारे में ज्ञान होना ।
- विद्यार्थियों को दीर्घोत्तरी प्रश्नों के बारे में जानकारी होना।
- विद्यार्थियों को प्रश्नों के उत्तर लिखने संबन्धी जानकारी होना।

२.३ 'दौड़' उपन्यास के माध्यम से लेखिका क्या कहना चाहती है?

ममता कालिया अपने उपन्यास 'दौड़' के माध्यम से वर्तमान समाज की सच्चाई को व्यक्त करना चाहती है। पहले के समय में न तो शिक्षा का इतना बोलबाला और न ही लोगों में अपना घर-परिवार छोड़कर दूर किसी शहर में जाकर आजीबिका की तलाश करने की महत्त्वाकांक्षा ही थी। समय के बदलाव के साथ आए औद्योगिकीकरण ने ग्रामीण अंचल तथा छोटे

कस्बों से लोगों को शहरों में आने का निमंत्रण दिया। उस समय लोग शहरों में आए अवश्य, परन्तु उनका मन अपने गाँव या कस्बों में ही लगा रहता था । इक्कीसवी सदी की आहट के साथ आर्थिक उदारीकरण के दौर ने शहरों में रोजगार के अधिक अवसरों को उपलब्ध कराया। परिणामस्वरूप नयी पीढ़ी के नवयुवक युवतियों में नये अवसरों को प्राप्त करने की अभिलाषा बलवती हुई और वे व्यापार-प्रबंधन की शिक्षा की ओर उन्मुख हुए। भूमंडलीकरण तथा आर्थिक-उदारीकरण ने नयी पीढ़ी को अपनी ओर आकर्षित किया । उन्हों लगा कि नए ज़माने का नया सूरज उदित हुआ है, जिसकी रोशनी उनका इंतजार कर रही है। अभिभावकों ने भी अपने नौनिहालों को नए जमाने की स्पर्धा में जाकर सफलता के चरम पर पहुंचने का आशीर्वाद दिया। लेकिन सफलता की सीढ़ी पर चढ़ते हुए नए युवक-युवतियों ने पीछे पीछे देखने को अपनी तौहीन मानी। इस तरह से नयी पीढ़ी के माता-पिता, उनका अपना गाँव-कस्बा, अपने संस्कार तथा अपने मूल्य उनके लिए बेमानी हो गए, क्योंकि उनको साथ लेकर जीवन की सरपट दौड़ में आगे निकलने में बाधा दिखाई दे रही थी। लेखिका ने इन्हीं बिन्दुओं के प्रकाश में 'दौड़' उपन्यास की कथावस्तु को आकार दिया है।

रेखा और राकेश दोनों की यह महत्त्वाकांक्षा थी कि उनका बड़ा बेटा पवन ऊँची शिक्षा प्राप्त कर के ऐसे पद पर आसीन हो जिससे उनका मान-सम्मान बढ़ जाए। पवन डॉक्टर इंजीनियर नहीं बन पाया तो उन्होंने उसे अहमदाबाद के आई.आई.एम. (भारतीय प्रबंधन संस्थान) में दाखिला दिलवा दिया। उन्हें पहले तो बड़ी खुशी हुई कि उनका बेटा ऊँचे वेतन पर काम कर के उनके लिए खुशियों का संसार बसाएगा । परन्तु पवन जिस दौड़ में शामिल हो गया था वहाँ न तो परंपरा को कोई महत्व था और न ही रिश्तों की कोई पहचान । वहाँ महत्त्वपूर्ण थी तो केवल सफलता, सबसे आगे निकल जाने की प्रतिस्पर्धा।

पवन अहमदाबाद आया था अपने माता-पिता की खुशियों का संसार बसाने, लेकिन उसे वहाँ जो नयी दुनिया मिली थी, वह ज्यादा आकर्षक थी। सच्चाई तो यह थी कि कंपनी के काम की भाग दौड़ में उसे कुछ याद नहीं रहता था। यहाँ तक कि वह खाने के लिए भी मुश्लिक से समय निकाल पाता था । रह-रहकर उसे यहाँ माता-पिता की याद आती रहती थी। जब से उसका तबादला राजकोट हुआ है तबसे उसे और भी समय नहीं मिलता। राजकोट के नजदीक वीरपुर में उसने बाबा जलाराम के पुजारी को समझाकर वहाँ सबसे अधिक गैस सिलिंडर बेचा। लेखिका यहाँ यह बताना चाहती है कि वर्तमान युग में आधुनिक तकनीक के साथ ही साथ बाबाओं का आकर्षण भी बना हुआ है।

किरीट ने जब पवन से चार दिन की छुट्टी माँगी तो उसे बहुत बुरा लगा। पूछने पर उसने बताया कि वह सरल मार्ग के कैम्प में जान चाहता है। पवन ने कहा 'जो काम तुम्हारे माँ-बाप के लायक है वह तुम अभी से करोगे? लेकिन किरीट ने उससे कहा कि 'नहीं सर, आप एक दिन कैम्प के मेडिटेशन में भाग लीजिए। मन को बहुत शान्ति मिलती है।' पवन ने किरीट को छुट्टी तो दे दी, परन्तु उसकी सच्चाई जाँचने की उत्कंठा वश वह स्वयं कैम्प में चला गया। उसने देखा कि स्वामी जी निहायत ही संमत, शांत और गंभीर वाणी में बोल रहे थे- 'प्रेम करो, प्राणिमात्र से प्रेम करो। प्रेम टेलिफोन कनेक्शन नहीं है जो आप सिर्फ एक मनुष्य से बात करें। प्रेम वह आलोक है जो समूचे कमरे को, समूचे जीवन को आलोकित करता है।' उनके कहने पर सभी ने पाँच मीनट के लिए मौन रहकर आँखें बंद कर ली। आँख बंद कर पाँच मिनट बैठने पर

पवन को भी असीम शांती का अनुभव हुआ। कुछ कुछ वैसा जैसा तब होता जब वह लड़कपन में बहुत भाग दौड़ कर लेता था तो माँ उसे जबरदस्ती अपने साथ लिटा लेती और थपकते हुए डपटती- "बच्चा है कि आफत। चुपचाप आँख बंद कर, ओर सो जा ।" पवन ने आँख खोलकर देखा तो सभी ध्यानमग्न थे- 'देखने से सभी वी.आइ.पी. किस्म के भक्त थे, जेब में झाँकता मोबाइल फोन और घुटनों के बीच दबी मिनरल वाटर की बोतल उन्हें एक अलग दर्जा दे रही थी। सफलता के कीर्तिमान तलाशते ये भक्त जाने किस जॅट रफ्तार से दिन भर दौड़ते थे, अपनी बिजनेस या नौकरी की लक्ष्य पूर्ति के कलपुर्जे बने मनुष्य। पर यहाँ इस वक्त में शांति के शरणागत थे।'

पवन को आरंभ में भले ही किरीट की बात का बुरा लगा था परन्तु अब उसका गुस्सा शीत हो चुका था। उसे स्वयं अपनी स्थिति बड़ी शांत लग रही थी। अब उसे यह उचित लग रहा था कि जीवन की भाग दौड़ में से ध्यान के लिए चार दिन का समय निकालना चाहिए। जिस स्वामी जी से व्यापार की हानि दिखाई दे रही थी, अब उन्हीं के विचार उसे मौलिकता और ताज़गी भरे लगने लगे।

पवन को अपने शहर प्रयाग में माघ में लगने वाले मेलो की याद हो आयी । मेले में आने वाले लोग मैले-कुचैले कपड़े पहने बूढ़ी दादी या माँ को गठरी लिए गंगा मैया से अपनी मुक्ति की कामना करते-करते घर वापस लौटे जाते। उनका कोई अस्तित्व अथवा पहचान नहीं होती बल्कि वे भीड़ का हिस्सा भर होते। न कही कोई तर्क, न किसी तरह की जिज्ञासा।

प्रयाग के माघ मेले में आने वाले इन लोगों के ठीक विपरीत स्वामी कृष्णा स्वामीजी के भक्तों में सभी उच्च शिक्षा प्राप्त अधिकारी और अमीर व्यवसायी थे । कोई डॉक्टर था कोई इंजीनियर कोई बँक अफसर था तो कोई प्राइवेट सेक्टर का मॅनेजर । यहाँ तक कि चोटी के कलाकार भी उनके भक्त थे। कुछ विदेशी भक्त भी थे जो विदेशी होने के बावजूद स्वदेशी बनने और दिखने की कोशिश करते। पवन ने देखा कि उनके अनुसार मनुष्य को अपने हृदय की तरह ही बाहरी रूप को भी साफ-सुथरा रखना चाहिए। उनका यथार्थवादी जीवन-दर्शन उनके भक्तों को बहुत सही लगता। वहाँ सभी भक्त अपने जीवन की यथार्थ को त्याग कर नहीं, बल्कि उसमें से चार दिन की मोहलत निकालकर इस आध्यत्मिक हॉलिड़े के लिए आते। पवन भी स्वामीजी की व्यक्तित्व और उनकी प्रभाव क्षमता का कायल होता जा रहा था। यहाँ पर लेखिका यह बताना चाहती है कि परंपरागत तरीके से लगने वाला माघ मेला अब पवन को उतना ठीक नहीं लगता जितना सरल मार्ग मिशन का कैम्प।

अभिषेक और राजुला के माध्यम से लेखिका यह बताना चाहती है कि परिवार में रहने वाला व्यक्ति जहाँ पारंपरिक मूल्यों तथा नैतिकता को छोड़ने में अपनी तौहीन समझता है वहीं बाज़ार के आकर्षण से बँधा हुआ व्यवस्थापक केवल अपेने प्रॉडक्ट को बेचने से मतलब रखता है। उसके लिए किसी भी नैतिकता और सच्चाई की बातें भारी भरकम सवाल खड़ा कर देती है। विज्ञापन के बारे में भी लेखिका राजुल के शब्दों में कहती है- 'नहीं में सोच रही थी, विज्ञापन कितनी अतिशयोक्ति करते हैं। सच्चाई यह है कि न किसी के हँसने से फूल झरते हैं न मोती, फिर भी मुहावरा है कि लीक पीट रहा है।'

लेखिका 'दौड़' के माध्यम से बताना चाहती है कि वर्तमान युग के युवक-युवतियों के लिए स्थान का कोई महत्त्व नहीं रह गया है। यदि कुछ महत्त्वपूर्ण है तो उनका कैरियर। राकेश के समझाने पर कि यदि पवन दिल्ली या इलाहाबाद आ जाये तो अच्छा हो जाए। पवन बिना किसी संकोच के कह उठता है- 'पापा मेरे लिए शहर महत्वपूर्ण नहीं है, कैरियर है।'

ममता कालिया इस उपन्यास के माध्यम से यह भी कहना चाहती हैं कि आज की पीढ़ी संस्कार और संस्कृति को नहीं चाहती, उसे उपभोक्ता संस्कृति चाहिए। पवन अपने पिता से कहता है- 'मुझे संस्कृति नहीं उपभोक्ता संस्कृति चाहिए, तभी में कामयाब रहूँगा।'

लेखिका ममता कालिया ने 'दौड़' में रिश्तों की ऊष्मा के बारे में नयी पीढ़ी की सोच को भी प्रकट करने का सफल प्रयास किया है। पवन तथा स्टैलाने अपने विवाह को भावनात्मक रिश्ते के रूप में देखने के बदले एक कुशल प्रबंधन की निगाह से देखा जिसमे किसी भी तरह की संवेदना का नामो-निशान नहीं । ऐसा इसलिए भी संभव हुआ, क्योकि दोनों को अपने कैरियर की ज़्यादा चिन्ता थी। लेखिका बताना चाहती है कि वर्तमान पीढ़ी इतनी कैरियरिस्ट है कि उसे संबन्धें से अधिक अपना कॅरियर महत्त्वपूर्ण लगता है। वर्तमान जीवन में इतनी विसंगतियाँ हैं कि पारंपरिक रूप से जीवन को जीने की कला बेमानी लगने लगती है। होस्टल से लौटकर आने के बाद जब रेखा और राकेश अपने बेटे सघन से कहते हैं कि वहाँ कपड़े धोने का भी समय नहीं मिलता क्या? तो सघन महँगाई की चर्चा कर अपने अभावों की ओर संकेत करता है। वह साफ-साफ कहता है - 'उस जमाने की बात पुरानी हो गई पापा। अब तो अकेली चिप सौ रूपये की आती हैं' लेकिन माता-पिता के मन में एक बात की चिन्ता घर किए हुए है कि उसका छोटा बेटा, बड़े बेटे से कम पद पर नहीं रहे। सघन जब अपने माता-पिता से कहता है कि वह कंप्यूटर के सॉफ्टवेअर के साथ हार्डवेयर कोर्स भी कर रहा है ताकि किसी भी दशा में उसे कोई कमतर नहीं आँके, तो रेखा ने कहा 'जो मैं नहीं चाहती थी वह कर रहा है छोटू। हार्डवेयर का मतलब है मैकेनिक बनकर रह जाएगा। एक भाई मॅनेजर, दूसरा मैकेनिक।'

लेखिका ममता कालिया आज की सच्चाई का वर्णन करते हुए कहना चाहती है कि वर्तमान पीढ़ी के माता-पिता एक तरफ तो अपने बच्चों को विदेश भेजकर दुखी रहते हैं कि वे वहाँ जाकर अपने घर-परिवार को भूल जाते है तो दूसरी ओर अपने मन को तसल्ली देने के लिए उसी पर खुश भी होते है। राकेश कहते हैं - 'ठीक ही किया छोटू ने। जितनी तरक्की यहाँ दससाल में करता उतनी वह वहाँ दस महीने में कर लेगा। जीनियस तो है ही' लेकिन लेखिकाने मिस्टर सोनी की मृत्यु और उसके बेटे सिद्धार्थ का आने से इनकार करने की घटना का वर्णन करके वर्तमान सच को रेखांकित किया है।

इस प्रकार लेखिका ने इस उपन्यास के माध्यम से एक ओर आर्थिक उदारीकरण तथा वैश्वीकरण का चित्रण किया है तो दूसरी तरफ उसके प्रभाव को भी सफल तरीके से प्रस्तुत कर उपन्यास की सार्थकता प्रदान की है।

२.४ 'दौड़' उपन्यास में वर्तमान समाज का चित्रण किस प्रकार किया गया है

लेखिका ममता कालिया ने अपने उपन्यास 'दौड़' में वर्तमान समाज को उसके पूरे यथार्थ के साथ चित्रित किया है। आज का समाज वही नहीं है जो एक दशक पूर्व था। भूमंडलीकरण, बाजारीकरण और आर्थिक उदारीकरण ने समाज में ऐसा परिवर्तन लाया है कि पारंपरिक जीवन-दर्शन और मूल्यों का महत्त्व समाप्त-सा हो गया है। लेखिका ने इस उपन्यास के बारे में स्पष्ट करते हुए कहा है- 'आर्थिक उदारीकरण ने भारतीय बाजार को शक्तिशाली बनाया। इसने व्यापार प्रबन्धन की शिक्षा के द्वारा खोले और छात्र वर्ग को व्यापार प्रबन्धन में विशेषता हासिल करने के अवसर प्रदान किए। युवा वर्ग ने अपने कैरियर को सफलता दिलाने के लिए इसे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण माना। इस तरह वर्तमान सदी में समस्त वाद के साथ एक नया वाद प्रारम्भ हो गया – बाजारवाद और उपभोक्तावाद।' अर्थात इक्कीसवीं सदी की आहटने समाज में बाजारवाद को अधिक महत्त्वपूर्ण बना दिया, जिसकी प्रभावक्षमता के सामने सबकी शक्ति क्षीण पड़ गयी। सारे रिश्ते-नाते, मूल्य, परंपराएँ तथा संस्कृति, बाजार के सामने छोटे लगने लगे।

लेखिका ने इस सचाई को प्रस्तुत करने के लिए 'पवन' नामक पात्र को माध्यम बनाया है। पवन को उसके माता-पिता एम.बी.बी.एस. में भेजना चाहते थे लेकिन उसमें सफलता नहीं मिलने पर उसे एम.बी.ए. करने के लिए अहमदाबाद भेज दिया। अहमदाबाद से एम.बी.ए. करने और उसके पश्चात वहीं विभिन्न कंपनियों में मैनेजर की नौकरी करने के अवसर ने उसे एकदम बदल दिया। उसकी माँ चिन्ता करते हुए उसके खाने-पहनने तथा आराम से रहने के बारे में जानना चाहती हैं लेकिन पवन को इन बातों से ज्यादा अपने कैरियर की चिन्ता लगी रहती है।

साहित्य प्रेमी माता-पिता के कारण पवन अपने पाठ्यक्रम से अलग प्रेमचन्द की कहानियों को न केवल पढ़ने लिखने का समय ही नहीं मिलता। पवन अपने माता-पिता से बहुत सारी बातें करना चाहता है लेकिन एस.टी.डी. का बिल देखकर वह परेशान हो जाता है। उसे यह समझ में आ जाता है - 'टाइम इज मनी।' वह अपने को धिक्कारता कि घर वालों से बात करने में भी वह महाजनी दिखा रहा है पर शहर में अन्य मदों में इतना खर्च हो जाता कि फोन के लिए पाँच सौ से ज्यादा की गुंजाइश बजट में नहीं रख पाता। उसकी प्राथमिकता अब परिवार न होकर पैसा हो जाती है।

पवन अहमदाबाद के सांस्कृतिक आयोजन में भीमसेन जोशी को सुनने गया था। वहाँ उसने देखा कि लोग जोशी के शास्त्रीय गायन का आनंद उठाने के बदले अंकल चिप्स खाने में मशगूल हैं। उसे अपना शहर इलाहाबाद याद आता है जहाँ सांस्कृतिक समारोहों में आज भी लोग रस लेने आते हैं। यानी बाज़ार ने हमारी प्राथमिकता और आनंद लेने की कुशलता के मायने को बदल दिया है।

लेखिका ने सरल मार्ग मिशन के माध्यम से भी सामाजिक परिवर्तन को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। भारतीय परंपरा में जहाँ पर व्यक्ति अपने भौतिक जीवन और जरूरतों को छोड़कर आध्यात्मिकता की ओर बढ़ता है वहीं नए समाज ने इसे भी बदल दिया है। पवन जब

सरल मार्ग मिशन के कैम्प में जाता है तो देखता है कि पढ़े-लिखे, अधिकारी, इंजीनियर आदि वहाँ जमा हैं। लेखिका कहती है - 'स्वामी जी मानते थे कि मनुष्य को अपना बाह्य स्वरूप भी अन्तःस्वरूप की तरह स्वच्छ रखना चाहिए। उनका यथार्थवादी जीवन-दर्शन उनके भक्तों को बहुत सही लगता । वे सब भी अपने यथार्थ को त्याग कर नहीं, उसमें से चार दिन की मोहलत निकालकर इस आध्यत्मिक हॉलिडे के लिए आते।' कहने का आशय यह कि जहाँ पारंपरिक रूप में आध्यात्म आदर्श को लेकर चलता है वहीं मिशन का दर्शन यथार्थ को लेकर चलता है। जीवन में शांति प्राप्त करने के बदले क्षणिक रूप से शांति प्राप्त कर फिर से जीवन की भाग-दौड़ में शामिल हो जाना ही उसका उद्देश्य है।

लेखिका ने अभिषेक और राजुल के माध्यम से विज्ञापन की आवश्यकता, महत्व और उसकी सच्चाई को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। सच यह है की मनुष्य अपने लिए आवश्यक चीजों को बिना किसी विज्ञापन के पहचान लेता है अर्थात विज्ञापित की जाने वाली चीज़ो की कोई ख़ास जरूरत नहीं होती। वर्तमान समय में बाज़ार का इतना ज़ादा दबाव है और अपने उत्पादों को उपभोक्ता तक पहुँचाने की इतनी गलाकार स्पर्धा है कि सारे मूल्य धराशायी हो गए है। बाजार ने समाज से नैतिकता और मूल्यों को बाहर कर दिया है। लेखिका ने विज्ञापन के सच को रेखांकित करते हुए अभिषेक से कहलवाया है- 'आखिर हम टूथपेस्ट की जगह टूथपेस्ट ही दिखा रहे हैं, घोड़े की लीद नहीं, सभी टूथपेस्टों में एक-सी चीजें पड़ी होती हैं। 'किसी में रंग ज्यादा होता है किसी में कम। 'किसी में फोम ज्यादा, किसी में कम।' अर्थात् एक जैसे सामानों में एक जैसे ही तत्व रहते हैं लेकिन स्पर्धा - बाजार में एक-दूसरे को कम बताकर ही अपना उत्पादन बेचा जा सकता है। अतः विज्ञापन में अपने उत्पादों की तारीफ तथा दूसरों की निंदा की जाती है। लेखिका ने मैनेजमेंट के गुण सीख कर आए नये मैनेजरों की इस सच्चाई को स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि उनकी आँखों के सामने कोई नीति और नैतिकता नही होती केवल अपना उत्पाद बेचने की कला होती है। अभिषेक कहता है- 'सीधा-सादा एक प्रोडक्ट बेचना है, इसमें तुम नैतिकता और सच्चाई जैसे भारी भरकम सवाल मेरे सिर पर दे मार रही हो। मैंने आई-आई.एम. में दो साल भाड़ नहीं झोंका। वहाँ से मार्केटिंग सीखकर निकला हूँ। आई कैन सैल ए डैड रेट (मैं मरा चूहा भी बेच सकता हूँ।) यह सच्चाई, नैतिकता सब मैं दर्जा चार तक मॉरल साइंस में पढ़कर भूल चुका हूँ।' अर्थात् नैतिकता और सच्चाई बचपना की बातें है। पढ़-लिखकर आदर्शों को भूल जाना ही आज के समाज का सच है। महत्वपूर्ण बात सच्चाई नहीं है बल्कि अपने सामान को बाजार में बेंचना है। लेखिका ने विवाह जैसे जीवन भर के भावुक रिश्तों में आ रहे बदलाव को भी उपन्यास का विषय बनाया है। स्टैला से पवन का विवाह संवेदनशीलता तथा भावुकतापूर्ण नहीं बल्कि महज एक समझौता है। भले ही पवन की माँ उसे समझाती है कि, 'तुम अभी शादी जैसे रिश्ते की गम्भीरता नहीं जानते। शादी और व्यापार अलग-अलग चीजें है।' परन्तु पवन के गले के नीचे यह तर्क नहीं उतरता। माँ के बार-बार समझाने पर वह कहता है कि 'तुमने इलाबाद को छोड़कर कुछ देखा ही नहीं इसीलिए ऐसी दकियानूसी बाते करती हो।' अर्थात् समाज में हो रहे परिवर्तन की आँधी ने रिश्तों की गर्माहट को केवल समझौते तक लाकर सीमित कर दिया है। पिता के समझाने पर भी पवन कैरियर को सबसे अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध करना चाहता है।

लेखिका ने इक्कीसवीं सदी की परिवर्तन की आँधी को इलाहबाद की कॉलोनी की मिसेज सोनी और उनके बेटे सिद्धार्थ के माध्यम से स्पष्ट किया है। पिता की मृत्यू पर अमेरिका

में रह रहा सिद्धार्थ दुखी नहीं होता हैं बल्कि कहता है कि उसके आने तक यदि पिता के शव को रखा जा सकता तो अच्छा होता। वह माँ को सलाह देता है कि वह किसी और को बेटा बनाकर दाहसंस्कार करवा ले, उसे आने में एक सप्ताह का समय लग जाएगा। अर्थात् वर्तमान समय की नयी पीढ़ी को अपने काम तथा अपनी सुविधा से ज्यादा कुछ भी नहीं दिखाई देता । भावुक क्षणों की भी उनके लिए कोई कीमत नहीं।

समय के परिवर्तन ने आज सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण धन को बना दिया है। माता-पिता के न चाहते हुए भी सघन ताइवान के ताइपे शहर चला गया। जब उसके पिता राकेश ने उससे वापस आने के लिए कहा तो उसने बिना सोचे-समझे पैसे की बात की। इतना ही नहीं सवाल करते हुए उसने कहा- 'आपने इतने बरसों में किया क्या?'अर्थात् माता-पिता अपने जीवन के महत्वपूर्ण समय को बच्चों के पालने-पोसने में लगा देते हैं लेकिन बड़े होकर बच्चे उनसे सीधे सवाल दागने लगते हैं कि उन्होने किया क्या?

इस प्रकार 'दौड़' अभ्यास में लेखिका ने भूमंडलीकरण और आर्थिक उदारीकरण के प्रभाव से बदलते सामाजिक मूल्यों को स्वर दिया है।

३

पात्रों का चरित्र-चित्रण

इकाई की रूपरेखा :

३.१ प्रस्तावना
३.२ उद्देश्य
३.३ पवन का चरित्र
३.४ स्टैला का स्वभाव
३.५ अभिषेक एवं राजुल
३.६ सघन

३.१ प्रस्तावना

ममता कालिया के उपन्यास 'दौड़' में पात्रों के माध्यम से लेखिका ने अपनी बात को प्रस्तुत किया है। परीक्षा में पूछे गए प्रश्नों को पात्रों के चरित्र के माध्यम से विद्यार्थी स्पष्ट कर सकेंगे। अत: इकाई-तीन में पात्रों का चरित्र-चित्रण किया गया है।

३.२ उद्देश्य

इन इकाई का उद्देश्य निम्नलिखित है-

१) पात्रों के चरित्र-चित्रण की जानकारी देना।
२) पात्रों के चरित्र-चित्रण के माध्यम से दौड़ उपन्यास के केन्द्र-बिन्दु की समझना।
३) पात्रों के आधार पर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर की जानकारी प्राप्त करना।

३.३ पवन का चरित्र

लेखिका ममता कालिया ने अपने उपन्यास दौड़ में मुख्य पात्र 'पवन' के माध्यम से अपने विचारों को स्पष्ट किया है।

'उपन्यास में लेखिका ने भूमंडलीकरण को केंन्द्र में रखते हुए यह चित्रित किया है कि एक समय था जब हर विद्यार्थी पढ़- लिखकर प्रशासनिक सेवा में चुने जाने का सपना देखता था। कुछ युवकों की पारम्पारिक महत्वाकांक्षाएँ भी रहती थी । इनके आधार पर डॉक्टर और

इंजीनियर का बेटा डॉक्टर और इंजीनियर बनना चाहता था। तब बाजार इतना आकर्षक विशाल और व्यापक नहीं हुआ था कि युवा इसे अपने सपनों में शामिल करे । तब बाजार का मतलब था एक ऐसी जगह जहाँ से लोग अपनी जरूरते पूरी करते और थककर घर चले आते थे । 'दौड़' उपन्यास का पवन शिक्षा प्राप्त करने के लिए जब अपने शहर से बाहर निकलता है तो उसे पता चलता है कि आजीविका के साधन कम और व्यवसाय के साधन अधिक और मँहगे होते जा रहे हैं। उदाहरण के लिए बाजार में बिकने वाली वस्तुओं की प्रजातियों का अंबार लगा है । उनके आकार भी बड़े – बड़े और आकर्षक हैं। टमाटर का आकार इतना बड़ा है कि एक पाव में एक ही टमाटर चढ़ सकता है । दस रुपये का एक टमाटर, चालीस रुपये किलो इतना ही नहीं शिकागो में एक डॉलर का एक टमाटर मिलता है। भारत में भी टमाटर की कीमत इसी दिशा में बढ़ रही है। तरकारियाँ विश्व बाजार कि जिन्स बनती जा रही हैं। इनका भूमंडलीकरण हो रहा है। यह सब बाजारवाद का कमाल है, जो व्यवसाय पर हावी हो चला है।

बीसवीं सदी के अन्तिम दशक और आरक्षण की आँधी से सकपकाए परिवारों को अपने बच्चों की आजीविका के लिए कोई न कोई मार्ग ढूँढना जरुरी हो गया है। इस असमय में एम. बी. ए. पूरे समाज को अपनी और आकर्षित करता है । पवन भी एम.बी. ए.करके व्यवसाय की दृष्टि से अपने कैरियर को और भी मजबूत बनाने के लिए नित नई-नई कंपनियाँ बदलते रहता है। अध्ययन के लिए उसे अवकाश नहीं मिलता है । कंपनी की कर्मभूमि उसे युग का अभिमन्यु बना देती है । पवन देखता है कि उसके समान ही अन्य अनेक नौजवान हैं। जो आये दिनों आजीविका की खोज में शहर चले आ रहे हैं। अटैची मे कपड़े, आँखो में सपने और अन्तर में आकुलता लिए न जाने कहाँ से युवा लड़के –लड़कियाँ नौकरी की खातिर शहरों में आ पँहुचे हैं।

आजीविका (नौकरी) पुरुषों के लिए ही नहीं, स्त्रियों की दृष्टि में भी बड़ी अहमियत रखती है। राजुल जैसी युवतियाँ नौकरी छोड़कर असुरक्षा की भावना से पीड़ित हैं। साढ़े चार साल की नौकरी के बाद राजुल सिर्फ इसलिए हटा दी जाती है कि उसने विवाह कर लिया। उसकी विज्ञापन एजेंसी जानती है कि घर और दप्तर दोनों मोर्चे सँभालना लड़कियों के बस की बात नहीं है । खास तौर पर गर्भवती होने पर उसके हाथ से सारे महत्वपूर्ण कार्य लेकर दूसरों को दे दिए जाते हैं। आज व्यवसाय या धंधे व्यापार में कोई उसूल और सिध्दांत नहीं होते। सभी अपना स्वार्थ देखते हैं। इसीलिए पवन अपने छोटे भाई सघन को समझाते हुए कहता है कि किसी व्यवसाय या धंधे से जुड़ी नौकरी को नौकरी की तरह लेना चाहिए । उसमें उसूल या सिध्दांत लागू करने की कोई जरूरत नहीं है।

इस तरह 'दौड़' उपन्यास का पवन वर्तमान समाज का ऐसा पात्र है, जो पहले तो अपने माता – पिता की महत्वाकांक्षा को पूरी करने के लिए एम.बी.ए. करता है, लेकिन एक बार घर से बाहर निकल जाने के बाद वह वापस घर नहीं लौट पाता है। कॅरियर की 'दौड़' में शामिल होकर देखना, भावना को महत्व देना तथा संबधों को सहेजकर रखना अब उसके लिए आवश्यक नहीं है।

३.४ स्टैला का स्वभाव

लेखिका ने 'स्टैला के रूप में आधुनिक जीवन के एक ऐसे चित्र को प्रस्तुत किया है जो सूचना प्रॉद्योगिकी की विशेषज्ञ है लेकिन संबन्धों से अधिक वह आर्थिक दृढ़ता को महत्व देती

है। उपन्यास में स्टैला आज के आधुनिक समाज की नारी का प्रतिनिधित्व करती है। वह 'डिमैलो एंटर प्राइज कार्पोरेशन में बराबर की पार्टनर है । उसकी कम्पनी 'गुर्जर गैस कंपनी' को कम्प्यूटर सप्लाई करती है । स्टैला की उम्र मुश्किल से चौबीस साल है, पर अपने माता – पिता के साथ वह आधी दुनिया घूम चुकी है। उसकी माँ सिन्धी और पिता ईसाई हैं। माँ से उसे गोरी रंगत मिली है और पिता से तराशदार नाक नक्श। जीन्स और टॉप में वह लड़का ज्यादा और लड़की कम नजर आती है। अपने व्यवसाय के हर पहलू पर उसकी तेज नजर रहती है ।

स्टैला कम्प्यूटर से जब अपनी और पवन की जन्मपत्रियाँ मैच करती है तो पाती है कि छत्तीस में से उनके छब्बीस गुण मिलते हैं। वह पवन से विवाह करने का निर्णय लेती है। स्टैला लाखों का कारोबार करती है ? पवन से विवाह करने के बाद वह सलवार सूट पहनने की कोशिश करती है किन्तु दो दिनो में ही वह वापस अपनी प्रिय पोशाक जीन्स और टॉप अपना लेती है। उसकी व्यवस्तता भी इस तरह की रही है कि लिबास को लेकर उससे विवाद नहीं किया जा सकता। वह सहृदय मिलनसार और नेकदिल युवती है। अपने सहयोगी फर्म से संपर्क करके वह सघन को कम्प्यूटर के पार्ट्स दिला देती है। फिर उसके साथ कम्प्यूटर बनाने में भी मदद् करती हैं। स्टैंला कम्प्यूटर बिजर्ड है। उसके पास बिल गैट्स के हस्ताक्षर से पत्र आते हैं। वह कम्प्यूटर मैन्यू पर जितनी पारंगत है, रसोईघर की मैन्यू में उतनी ही अनाड़ी लगातार घर से बाहर होस्टलों में रहने की वजह से उसके जेंहन में खाने का कोई तसव्वुर नहीं है। वह अंडा, आलू चावल उबालना जानती है या फिर मैगी। स्टैला भले ही कम्प्यूटर पर आठ घंटे काम कर ले, रसोई में आधा घंटे नहीं रहना चाहती है ।

अत: स्टैला आज की उन युवतियों का प्रतिनिधित्व करती है जिन्हें बाजारवादी और उपभोक्तावादी संस्कृति ने अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप तराशकर गढ़ा है, तैयार किया है। जिनके लिए संबन्धों तथा संवेदनात्मक रिश्तों से अधिक 'अर्थ' का महत्व है ।

वह आधुनिक तकनीक की ज्ञाता, एक सफल व्यवस्थापिका होने के साथ ही साथ खुले विचारों वाली युवती है। वह भले की खाना बनाना नहीं चाहती या नहीं जानती, लेकिन अपनी सास रेखा की कई कहानियों को कम्प्यूटर पर अंकित कर उसकी प्रंशसा की अधिकारिणी बन जाती है । उसमें परिवार का सम्मान तथा सेवा करने का भाव है, लेकिन वह पारंपारिक न हो कर आधुनिक है। इस तरह स्टैला नवधनाढय नयी पीढ़ी की नवयुवती का प्रतिनिधित्व करती है, जिसने जीवन को अपने तरीके से जीना सीख लिया है।

३.५ अभिषेक एवं राजुल

'दौड़' उपन्यास में वर्तमान समय के पति –पत्नी के नाजुक संबंधों को अभिषेक एवं राजुल के माध्यम से बताया गया है। 'दौड़' उपन्यास के अभिषेक शुक्ला और राजुल आधुनिक समय के पति पत्नी हैं। संपन्न परिवार से उनका नाता है। अभिषेक एड्वर टाइजिंग कंपनी में काम करता है। पुत्र अंकुर बड़ा ही जिद्दी स्वभाव का है। दोनों उसे संभालने में असमर्थ होते हैं। जब वह अधिक परेशान करता है तो माता – पिता एक दूसरे पर दोषारोपण करते हैं।

एक दिल राजुल अभिषेक, पवन और अंकुर बाजार घूमने जाते हैं। अंकुर खिलौने के लिए मचलता है। उसकी जिद्द से अभिषेक उकता जाता है। उसको उकताया देख राजुल का मूड खराब हो जाता है। वह घर का आखिरी काम निपटाते हुए भुनभुनाती है - 'हिन्दुस्तानी मर्द को शादी के सारे सुख- चाहिए बस जिम्मेदारी नहीं चाहिए। कितना हर्ज हुआ। अच्छी भली सर्विस छोड़नी पड़ी । मेरी सब कलीग्स कहती थीं, राजुल शादी करके अपनी आजादी चौपट करोगी और कुछ नहीं। आजकल तो ड्रिक्स का जमाना है। डबल इनकम नो किड्स-दोहरी आमदनी, बच्चे नहीं मैं सेन्टिमेंट के चक्कर में फँस गई।

अभिषेक जिस विज्ञापन कम्पनी में काम करता है उसनें आजकल एक अन्य कम्पनी की टक्कर में टूथपेस्ट युध्द छेड़ा हुआ है। अभिषेक के जिम्मे मॉडल का चुनाव करना है। उसे एक ऐसे मॉडल की तलाश है, जिसके व्यक्तित्व में दाँत प्रधान हों, साथ ही वह खूबसूरत भी हो। अभिषेक ब्यूटी पार्लर की मालकिन निकिता पर दबाव डालता है कि वह अपनी बेटी तान्या को मॉडलिंग करने दे। इस सिलसिले में वह कई बार 'रोजेज' पार्लर जाता है। इसी को लेकर पति – पत्नी में तनाव होता है । राजुल का मानना है रोजेज अच्छी जगह नहीं है। वहाँ सौदर्य उपचार की आड़ में गलत धन्धे होते हैं।

विज्ञापन और नैतिकता के बारे में अभिषेक और राजुल दोनों के अलग-अलग मत है। अभिषेक जो एड बनाता है उसके विज्ञापन में पार्टी का एक दृश्य है। उसमें हीरो के कुछ कहने पर हिरोइन हँसती है। उसकी हँसी में हर दाँत से मोती गिरते हैं। हीरो उसे अपनी हथेली पर लेता है। सारे मोती इकट्ठे ' स्पार्कल' टूथ पेस्ट की टयूब बन जाते हैं। इसे देखकर राजुल, अभिषेक से कहती है कि विज्ञापन कितनी अतिशयोक्ति करते हैं। यह लोगों के प्रति धोखा नहीं तो और क्या है? लेकिन अभिषेक उसे डॉटते हुए कहता है कि मुझे इस तरह के डोज मत पिलाया करो, समझी। राजुल और अभिषेक में छोटी – छोटी बातों को लेकर अक्सर झड़प होती रहती है। 'दौड़' उपन्यास में अभिषेक और राजुल को एक आधुनिक युवा दम्पति के रूप में बड़ी ही सफलता के साथ चित्रित किया गया है।

इस प्रकार लेखिका ने अभिषेक और राजुल के पात्र के माध्यम से आधुनिक जीवन की विसंगतियों और सफलता असफलता के बीच झूलते जीवन को रेखांकित किया है। पत्नी तथा पति के रिश्तों की ऊष्मा अब समझौते के आधार पर ही बनी रह सकती है।

३.६ सघन

'दौड़' में सघन के माध्यम से नयी पीढ़ी के चरित्र को प्रस्तुत किया गया है, जो कॅरियर की दौड़ मे पूरी तरह बदल गया है। सघन पवन का छोटा भाई था। वह राकेश पांडे और रेखा का छोटा बेटा है। इसका पूरा नाम सघन पांडे है। बचपन से ही वह बहुत ही चंचल और शरारती रहता है। चूहों को भ्रमित करने और रसोईघर में जाने के लिए वह लगातार म्याऊँ की आवाजें निकालता रहता है ताकि चूहे यह समझें कि रसोई में बिल्ली आ पहुँची है और वे डरकर भाग जाएँ। छोटू का जन्म मार्जार योनि का है। बचपन से ही वह घुमक्कड़ी प्रवृति का है। घर में बिजली जाते ही वह पवन से कहता 'भइया' ट्रासफार्मर दुडिम बोला था। हमने सुना है। इसी बहाने वह बिजलीघर के चार चक्कर लगा आता है। उसे छुटपन से ही बाजार घूमने का चस्का था। घर का फुटकर सौदा लाते, पोस्ट ऑफिस, बिजली घर का चक्कर लगाते – लगाते यह

शौक आदत में बदल जाती है। परीक्षा के दिनों में भी वह कभी नई पालिस खरीदने के बहाने तो कभी युनिफार्म इस्त्री करवाने के बहाने घर से गायब रहता है। बाहर जाते हुए कहता है, 'हम अभी आते है। लेकिन इससे यह पता नही चलता कि हजरत जा कहाँ रहे हैं ?

शुरु से ही सघन हँसोड़ और चुटकुलेबाज रहता है। पवन जब कभी घर फोन करता है तो छोटू अर्थात सघन के चुटकुले सुनकर हप्ते भर की थकान भूल जाता। सघन बी. एससी. के बाद कम्प्यूटर हार्डवेअर का कोर्स करता है। उसकी तीव्र इच्छा है कि वह साइबर सिटी हैदराबाद जाये।

सघन के हॉस्टेल चले जाने पर राकेश और रेखा को उसकी याद सताती है। वह घर के सारे काम करता था। फोन मिलाने, उठाने, एस. टी. डी. का इलेक्ट्रानिक ताला खोलने, लगाने का काम वही किया करता था। सघन के हॉस्टल में फोन नहीं था। वह बाहर से महीने में दो बार फोन कर लेता है। उसे हमेशा पैसों की तंगी सताती है। महीने के शुरू में पैसे मिलते ही वह कम्प्यूटर की महँगी पत्रिकाएँ खरीद लेता फिर कभी नास्ते में कटौती, कभी खाने में कंजूसी बरतता है। उसके पुराने दोस्त योगी का फोन आता है। उसकी हार्ड डिस्क अटक रही है। सघन पिता से कहता है, वह मरम्मत कर देगा। तभी पिता पूछते है, तुम तो सॉफ्टवेयर प्रोगामिंग में हो तो वह बताता है कि उसने हार्डवेअर का ईवनिंग कोर्स ले रखा है। पिता राकेश की स्मृति में वह अभी भी लीला दिखाने वाला छोटा किशन कन्हैया है जबकि वह सूचना विज्ञान के एक ऐसे संसार में हाथ पैर फटकार रहा है जिसके ओर- छोर समूचे विश्व मे फैले हुए है। सघन शुरु से ही बड़ा चुप्पा रहा है। अपनी जरुरतो को काटकर वह हार्डवेअर कोर्स की फीस भरता है। अपनी जरुरतो को वह बताता नही बल्कि जितना है उसी में काम चलाने का प्रयत्न करता है। सघन को हॉट मेल पर ताइवान की एक साप्टवेयर कम्पंनी से नौकरी का बुलावा आता है। इस समाचार से उसकी थकान दूर हो जाती हे। उसके माता-पिता उसे इतनी दूर जाने से रोकना चाहते हैं पर सघन पहले से ही अपनी सहमति भेज चुका है। वह बड़ा ही महत्वाकांक्षी नवयुवक है। पासपोर्ट उसने पिछले साल ही बनवा लिया था। वह राकेश से कहता है, पापा बस हवाई टिकट और पाँच हजार का इंतजाम आप कर दो, बाकी मैं मैनेज कर लूँगा। आपका खर्च मैं पहली पेमेंट से चुका दूँगा। माता- पिता को सघन के चेहरे में पवन का चेहरा नजर आता है।

वह अपनी जरूरत को सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण मानता है। इसलिए जब स्टैला उसे कम्प्यूटर दिला देती है तो वह कह उठता है कि मेरी भाभी सबसे अच्छी भाभी है।

वह अपने कॅरियर के लिए ताइपे जाकर नौकरी करता है तो वहाँ पूरी तरह व्यवस्थित होना चाहता है। पिता राकेश जब उससे वापस आने के लिए कहते हैं तो वह सीधे- सीधे पैसे का हिसाब लेने लगता है।

इस प्रकार लेखिकाने सघन के माध्यम से नए जमाने के नव युवक की सोच को व्यक्त किया है जिसे केवल अपने कॅरियर तथा सफलता से मतलब है संबन्धों की जरूरत उसे मात्र सुख और लाभ के लिए है।

४

उपन्यास का उद्देश्य

इकाई की रूपरेखा :

४.१ प्रस्तावना
४.२ उद्देश्य
४.३ उपन्यास का उद्देश्य
४.४ 'दौड़' उपन्यास में बाजारवाद और उपभोक्तावाद
४.५ विज्ञान और नैतिकता
४.६ सरल मार्ग मिशन

४.१ प्रस्तावना

'दौड़' उपन्यास में पात्रों के चरित्र के अतिरिक्त अनेक ऐसे मुद्दों का चित्रण किया गया है, जिनको प्रस्तुत करना और विद्यार्थियों को उनकी विस्तार सहित जानकारी देना आवश्यक है। इस इकाई में ऐसे ही मुद्दों को प्रस्तुत किया गया है।

४.२ उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य निम्नलिखित है-

१) 'दौड़' उपन्यास में वर्णित मुख्य बिन्दुओं की जानकारी देना।
२) उपन्यास पर आधारित पूछी गयी टिप्पणियों पर विस्तार सहित अध्ययन।
३) परीक्षा में पूछी जानेवाली संभावित टिप्पणियों का प्रस्तुतीकरण।

४.३ उपन्यास का उद्देश्य

साहित्य में समाज का प्रतिबिंबन होता है। समाज में घटने वाली प्रत्येक घटनाएँ किसी न किसी रूप में अपने समय के साहित्य में दिखाई देती है। समय के परिवर्तन के कारण प्राय: अलग – अलग दौर में लिखा गया साहित्य कथ्य तथा शिल्प दोनों ही आधारों पर भिन्न बोध लेकर चलता है। 'दौड़' उपन्यास का मुख्य उद्देश्य है वर्तमान समाज के यथार्थ का चित्रण करना। इक्कीसवीं सदी, अपने साथ भूमंडलीकरण और आर्थिक उदारीकरण को लेकर आयी । इसके कारण भारतीय समाज के परंपरागत रूप और उसके मूल्य में विशेष परिवर्तन आया। एक

ओर पुरानी पीढ़ी अपने पुराने मूल्यों को लेकर जीना चाहती है तो दूसरी तरफ आधुनिक पीढ़ी का जीवन नए मूल्यों के साथ संचालित होता है। नयी पीढ़ी के युवा बाजार और उपभोक्तावादी संस्कृति में पूरी तरह मिलकर सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ना चाहते है, भले ही इसके लिए उन्हें परंपरागत मान्यताओं को तोड़ना पड़े। पुरानी पीढ़ी अपने बच्चो का विकास तो देखना चाहती है लेकिन अपनी पकड़ तथा अधिकार को छोड़ने में उन्हें तकलीफ होती है, उनके युवा बच्चे दूसरे शहरों या विदेश में अपने जीवन की दौड़ में सरपट दौड़ने के लिए मजबूर है। वर्तमान समाज की इस दशा के लिए केवल नयी पीढ़ी ही जिम्मेदार नहीं है बल्कि उनके महत्वाकांक्षी माता पिता भी उतने ही जिम्मेदार हैं।

कथाकार ममता कालिया ने अपने उपन्यास 'दौड़' में बदलते समाज को हर कोणो से स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया है। वर्तमान जीवन की भागदौड़ में एकबार शामिल हो जाने के बाद उससे मुक्ति के सारे रास्ते बंद हो जाते हैं। उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रभाववश व्यक्ति, व्यक्ति न होकर उपभोक्ता मात्र रह गया है। इसी यथार्थ को स्पष्ट करना 'दौड़' उपन्यास का मुख्य उद्देश्य है।

'दौड़' उपन्यास का मुख्य पात्र पवन अपनी लेखिका माँ रेखा और पत्रकार पिता राकेश की महत्वाकांक्षा को पूरी करने के लिए अहमदाबाद से एम. बी.ए. करके प्राइवेट नौकरी शुरू करता है। उसे एक ही कंपनी से बँधकर नहीं रहना है बल्कि प्रोफेशनल एथिक्स के तहत तरक्की पाने के लिए कंपनियाँ बदलने में कोई बुराई नहीं। उसके पिता को लगता है कि यह स्वभाव कृतघ्नता की कोटि में आता है। पवन स्टैला के प्रति अपने प्रेम प्रकट करते हुए यह जाहिर करता है कि 'माँ, स्टैला मेरी बिजनेस पार्टनर, लाइफ पार्टनर और रूम पार्टनर तीनों है। पवन की इस बात को सुनकर उसकी माँ रेखा कहती है कि वह तो दो कौड़ी की लगती है और पवन के लायक बिलकुल नहीं है। लेकिन माँ की इस बात को सुनकर वह तुरन्त जवाब देता हुआ कहता है -' यही बात तुम्हारे बारे में दादी माँ ने पापा से कही थी। क्या उन्होंने दादी माँ की बात मानी थी, बताइए । इस तरह 'दौड़' उपन्यास में संबधो के बेदखल होने की कथा कही गयी है।

ममता कालिया ने दौड़ उपन्यास के माध्यम से वर्तमान युग में आर्थिक उदारीकरण से उत्पन्न व्यावसायिक संस्कृति को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। पवन तथा स्टैला विवाह तो करते हैं परन्तु पारिवारिक जिम्मेदारी तथा परिणय संबन्धों की ऊष्मा से अधिक व्यावसायिक सफलता की महत्व देते है। दोनो अलग – अलग शहरों में नौकरी करते है और इस बात से खुश हैं कि इंटरनेट तथा फोन से दूरियाँ कम नजर आती हैं। पवन के पिता राकेश ने जब उससे अपने इलाहाबाद में ही कोई आजीविका तलाश करने के लिए कहा तो उसने बिना कुछ सोचे – समझे कह दिया 'सच तो यह है पापा जहाँ हर महीने वेतन मिले वही जगह अपनी होती है और कोई नहीं'। इस तरह 'दौड़' उपन्यास में संवेदना शून्य व्यावसायिक संस्कृति को रेखांकित किया गया है। इस संस्कृति में व्यक्ति तथा स्थान को महत्वहीन साबित करते हुए केवल कॅरियर को महत्वपूर्ण माना है।

माता-पिता ने पहले बड़े- बड़े सपने देखे कि उनके बच्चे एम.बी.ए. करके किसी बड़े शहर में खूब कमायेंगे लेकिन जब ऐसा होने लगा तो उन्हें अपना अकेलापन सताने लगा। केवल पवन के ही माता- पिता ही नहीं बल्कि पूरी कॉलोनी के लोगों का यही हाल था । लेखिका लिखती है - ' कॉलनी में कमोवेश सभी की यही हालत थी। इस बुड्ढ़ा बुड्ढ़ी कॉलोनी में सिर्फ

सर्दी गर्मी की लंबी छुट्टियों में कुछ रौनक दिखाई देती जब परिवारों के नाती पोते अन्दर बाहर दौड़ते – खेलते दिखाई देते। वरना यहाँ चहल – पहल के नाम पर सिर्फ सब्जी वालों के या रद्दी खरीदने वालों के ठेले घूमते नजर आते। बच्चों को सुरक्षित भविष्य के लिए तैयार कर हर घर परिवार के मॉ - बाप खुद एकदम असुरक्षित जीवन जी रहे। 'दौड़' उपन्यास में लेखिका ने वरिष्ठ नागरिकों की इस दशा को भी दर्शाया है।

इस तरह यह कहा जा सकता है कि 'दौड़' उपन्यास का मुख्य उद्देश्य है – भूमंडलीकरण आर्थिक उदारीकरण, व्यावसायिक संस्कृति, उपभोक्तावादी संस्कृति आदि के चंगुल में फँसे समाज ने पारंपरिक मूल्यों को पीछे धकेल कर नये जीवन बोध को अपना लिया है। इसमें एक ओर मनुष्य का एक पैर तो विकास तथा सफलता की ऊँचाई पर उठा है तो दूसरी ओर दूसरा पैर पारंपारिक जमीन पर ही है। इस तरह सफलता के सुख के साथ दोनों के बीच उलझते जीवन की व्यथा – कथा भी इसमें कही गयी है।

४.४ 'दौड़' उपन्यास में बाजारवाद और उपभोक्तावाद

'दौड़' लघु उपन्यास के माध्यम से ममता कालिया ने आज की इस सच्चाई पर अपना मंतव्य प्रकट किया है कि ' बाजारवाद और उपभोक्तावाद भूमंडलीकरण की देन हैं। आर्थिक उदारीकरण ने भारतीय बाजार को शक्तिशाली बनाया है। इससे व्यापार प्रबन्धन ने शिक्षा के द्वार खोले हैं और छात्र वर्ग को व्यापार प्रबन्धन में विशेषता हासिल करने के अवसर दिए हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों में रोजगार के नए – नए मौके प्राप्त हुए हैं। युवा वर्ग ने पूरी लगन के साथ इस सिमसिम द्वार को खोला और इसमें प्रविष्ट हुआ है ।

बाजार तन्त्र और उपभोक्तावाद पर हिन्दी में पिछले दिनों बहुत लिखा गया है। अच्छी कहानियाँ और उपन्यास भी लिखे गए हैं। भूमंडलीकरण पर भी लिखा गया है । हिन्दी कथाकारों की यह समय के प्रति जागरूकता प्रशंसनीय है। लेकिन 'दौड़' भूमंडलीकरण व्यावसायिकता आजीविकावाद, विज्ञापनबाजी, उपभोक्तावाद आदि के मिश्रण से बने मनुष्यों की कहानी बहुत प्रभावशाली ढ़ंग से प्रस्तुत करता है। बेशक इस दौड़ में नव धनाढ्य वर्ग की नई पीढ़ी के चरित्र्य के माध्यम से हिन्दी कथा – साहित्य में एक कीर्तिमान स्थापित किया है ।

युवा समीक्षक कृष्ण मोहन के अनुसार - "बीसवीं सदी के अन्त में भारतीय समाज के सबसे गहरे सांस्कृतिक संकट का आख्यान है 'दौड़' हमारा समाज आज ऐसे दोराहे पर खड़ा है जहॉसे एक रास्ता बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की चरम उपभोक्तावादी संस्कृति के अंधे कुएँ की ओर जाता है, तो दूसरा संस्कार सुरक्षा और सामन्ती सामुदायिकता की पुरानी और गहरी खाई की और दोनो एक-दूसरे की कमजोरियों से ताकत पाते है। कोई तीसरा रास्ता मिलता ही नहीं है। लेखिका माँ और पत्रकार पिता का बेटा पवन एम.बी. ए. करके तरक्की के लिए एक के बाद दूसरी कम्पनी बदलता हुआ 'प्रोफेशनल एथिक्स' की बात करता है, जबकि पिता को यह कृतघ्नता जान पड़ती है।

पब्लिक सेक्टर और प्राइवेट सेक्टर में सभी की अलग अलग परेशानियाँ हैं। प्राइवेट सेक्टर में सभी को अपने अपने प्रोडक्ट बेचने की चिंता है । बाजार में कड़ी स्पर्धा है। उत्पादन,

विपणन और विक्रय के बीच ताल मेल बैठाना कठिन हो गया है। बाजारवाद हर कही अपने नए –नए रूपों में उपभोक्ताओं को आकर्षित कर रहा है। व्यावसायिक नैतिकता के चलते आज खरीदारों की जेबें खाली करने की एक से एक तरकीबें भिड़ाई जा रहीं हैं। ऐसे माहोल में आम आदमी का जीना दूभर हो चला है ।

इस प्रकार लेखिका ममता कालिया ने अपने उपन्यास 'दौड़' में बाजारवाद और उपभोक्तावादी संस्कृति और उसके प्रभाव का वर्णन किया है।

४.५ विज्ञापन और नैतिकता

'दौड़' उपन्यास में हिन्दी की सुप्रसिद्ध लेखिका ममता कालिया ने यह स्पष्ट किया है कि बाजार में दिन पर दिन स्पर्धा कड़ी होती जा रही है। उत्पादन, विपणन और विक्रय के बीच तालमेल बैठाना दुष्कर कार्य हो चला है। एक – एक उत्पाद की टक्कर में बीस बीस वैकल्पिक उत्पाद हैं। इन सबको श्रेष्ठ बतानेवाले ऐसे विज्ञापन अभियान हैं, जिनके प्रचार- प्रचार से मार्केटिंग का काम आसान की बजाय मुश्किल होता जाता है। उपभोक्ता के पास एक-एक चीज के कई चमकदार विकल्प रहते हैं। रेडियो और टी. व्ही. पर दिन में सौ बार दर्शक और श्रोता की चेतना का झकझोरता विज्ञापन मार्केटिंग के प्रयासों में चुनौती और चेतावनी का काम करता है । उपभोक्ता बहुत ज्यादा उम्मीद के साथ सामान खरीदते हैं।

रोजविन्दर पुरानी कम्पनी छोड़कर इंडिया लीवर के टूथपेस्ट डिवीजन में काम संभालती है । उसे आजकल दुनिया में दाँत के सिवा कुछ नजर नहीं आता है। वह कहती है 'हमारी प्रोडक्ट के एक – एक आइटम को इतना प्रचारित कर दिया गया है कि अब इसमें बस साबुन मिलाने की कसर बाकी है।'

'दौड़' उपन्यास का अभिषेक भी स्पार्कल टूथपेस्ट के लिए नया विज्ञापन बनाता है, जो दिन में कइयों बार टी. व्ही. पर दिखाया जाता है? अभिषेक को लगता है पत्नी राजुल उसकी प्रशंसा करेगी किंतु राजुल उसके काम को जीरो देती है। वह कहती है कि विज्ञापन कितनी अतिशयोक्ति करते हैं। सच्चाई यह है कि न किसी के हँसने से फूल झरते हैं न मोती, फिर भी मुहावरा है कि पीट रहा है । लोग विज्ञापनों को सच मानते हैं। क्या यह उनके प्रति धोखा नहीं है? किंतु इसी विज्ञापन के बारे में अभिषेक कहता है कि 'आखिर हम टूथपेस्ट की जगह टूथपेस्ट ही दिखा रहे हैं। घोड़े की लीद नहीं। सभी टूस्थपेस्टों में एक –सी चीजें पड़ी होती हैं। किसी में रंग ज्यादा, किसी में कम किसी में फोम ज्यादा किसी में कम। ऐसे में कापीराइट की नैतिकता के प्रश्न पर अभिषेक कहता है कि सीधा – सीधा एक प्रॉडक्ट बेचना है। इसमें नैतिकता और सच्चाई जैसे भारी – भरकम सवाल सिर पर दे मारना ठीक नही है। आई. आई. एम. में दो साल उसने भाड़ नहीं झोका है। वहाँ से मार्केटिंग सीखकर निकला है। वह मरा चूहा भी बेच सकता है। सच्चाई तथा नैतिकता को वह दर्जा चार तक मॉरल में पढ़कर भूल चुका है। युवा पीढ़ी एक अलग ही प्रकार की नैतिकता अपने जीवन में भी अपना रही है। इसीलिए पवन अपने पिता से कहता है कि वह जिस दुनिया में है, वहाँ एथिक्स नहीं प्रोफेशनल एथिक्स, नहीं तो आप पुराने अखबार की तरह रद्दी की टोकरी में फेंक दिए जाएँगे, इस प्रकार 'दौड़' उपन्यास में विज्ञापन की नैतिकता का एक अलग ही रूप उभर कर प्रस्तुत हुआ है। यहाँ इसका सीधा – सादा अर्थ व्यवसायिक नैतिकता से है न कि धार्मिक पाप – पुण्य वाली नैतिकता से ।

४.६ सरल मार्ग मिशन

सरल मार्ग मिशन की स्थापना आचार्य कृष्णा स्वामी ने की है। उनका मुख्य आश्रम चैन्नै (मद्रास) से ३० – ३५ मील दूर मनपक्कम में है। ' दौड़' उपन्यास के अनुसार राजकोट जूनागढ लिंक रोड पर दाहिने हाथ को विशाल फाटक है जिस पर ध्यान शिविर सरल मार्ग का बोर्ड लगा है। कारों का काफिला वहाँ आता जाता रहता है। एक तरफ बड़ी सी खुली जगह वाहन खड़े करने के लिए छोड़ी गयी है जो तीन चौथाई भरी हुई है । वही आगे की ओर लाल पीले रंग का पंडाल है । दूसरी तरफ तरतीब से तम्बू लगे हुए हैं। कुछ तम्बुओं के बाहर कपड़े सूख रहे हैं। उस भाग में भी एक फाटक है। जिस पर लिखा है ' प्रवेश निषेध '।

पंडाल के अन्दर जब पवन घुसता है तब स्वामी जी का प्रवचन समापन प्रक्रिया में होता हैं। वे निहायत शान्त, संमत गहन गम्भीर वाणी में कह रहे थे, "प्रेम करो प्राणिमात्र से प्रेम करो। प्रेम टेलीफोन कनेक्शन नहीं है जो आप सिर्फ एक मनुष्य से बाते करें। प्रेम वह आलोक है जो समूचे कमरे को, समूचे जीवन को आलोकित करता है, अब हम ध्यान करेंगे ओम् ।"

उनके 'ओम्' कहते ही पाँच हजार श्रोताओं से भरे पंडाल में सन्नाटा खिंच जाता है । जो जहाँ बैठा था वैसा ही आँख मूँदकर ध्यानमग्न हो जाता है। कुछ समय बाद सभा विसर्जित होती है। सब स्वामी जी से मौन नमन करते हैं।

'सरल मार्ग मिशन' के भक्त उन भक्तों से नितांत भिन्न हैं जो साल –दर –साल प्रयाग के माघ मेले में आते हैं। कृष्णा स्वामी जी महाराज के भक्त समुदाय में एक से एक सुशिक्षित उच्च पदस्थ अधिकारी और व्यवसायी हैं। कोई डॉक्टर है, तो कोई इंजीनियर, कोई बैंक अफसर तो कोई प्राइवेट सेक्टर का मैनेजर। साल में चार बार वे अपना शिविर लगाते हैं, देश के अलग- अलग नगरों में। समूचे देश से उनके भक्त वहाँ पहुँचते हैं। उनके कुछ विदेशी भक्त भी हैं जो भारतीयों से ज्यादा स्वदेशी बनने और दिखने की कोशिश करते हैं।

स्वामी जी की वक्तृता असरदार और व्यक्तित्व परम आकर्षक है। वे दक्षिण भारतीय तहमद के ऊपर उत्तर भारतीय कुर्ता धारण करते हैं । अन्य धर्माचार्यों की तरह न उन्होंने बढ़ाया है न दाढ़ी । वे मानते हैं कि मनुष्य को अपना बाह्य स्वरूप भी अन्त: स्वरूप की तरह स्वच्छ रखना चाहिए। पवन उन्हें सुपर पापा कहता है, क्योंकि वे सोच-समझकर ही हर समस्या का समाधान करते हैं और किसी भी कार्य को करने की हामी भरते हैं।

इस प्रकार लेखिका ने 'दौड़' उपन्यास में सरल मार्ग मिशन के माध्यम से भक्ति और आस्था के बदलते लाभ- हानि के आधार पर भक्ति को देखने की आधुनिक जीवन - दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। इसमें भक्ति के बदले, लोगों को आकर्षित करने का तरीका बाहय दिखावा तथा जैसा लोगो को पसंद है वैसा ही मार्ग प्रस्तुत करने को जरूरी बताया गया है। जीवन की विडंबनाओं से मुक्ति के बजाय जैसे यह स्वयं अपने आप में वर्तमान जीवन का एक हिस्सा है। यहाँ लोग अपने को भूलकर नहीं बल्कि यह बताने आते है कि वे क्या हैं ?

५

परीक्षा हेतु उपयोगी प्रश्न

इकाई की रूपरेखा :

५.१ प्रस्तावना

५.२ उद्देश्य

५.३ संदर्भसहित स्पष्टीकरण का नमूना- (४)

५.४ संदर्भसहित स्पष्टीकरण के अभ्यास हेतु अवतरण

५.५ अभ्यास हेतु प्रश्न

५.६ अभ्यास हेतु टिप्पणियाँ

५.७ अभ्यास हेतु वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर सहित)

- ५.७.१ निम्नलिखित वाक्य को किसने कहा है ?
- ५.७.२ रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए
- ५.७.३ एक वाक्य में उत्तर लिखिए

५.१ प्रस्तावना

इसके पहले की इकाइयों में 'दौड़' उपन्यास से संबन्धित प्रश्नों, केन्द्रीय बिन्दुओं, टिप्पणियों आदि की चर्चा की गयी है, परन्तु परीक्षा में सही तरीके से उत्तर लिखने के लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है। अत: इस इकाई में संभावित अवतरण, प्रश्न, टिप्पणियाँ तथा वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की सूची दी गई है, जिससे विद्यार्थी समुचित अभ्यास कर सकें।

५.२ उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य निम्नलिखित है-

- विद्यार्थियों को संभावित अवतरणों की जानकारी होना।
- विद्यार्थियों को संभावित प्रश्नों की जानकारी होना ।
- विद्यार्थियों को संभावित टिप्पणियों की जानकारी होना।
- विद्यार्थियों को संभावित वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की जानकारी होना।

५.३ संदर्भ सहित स्पष्टीकरण :

१) "यहाँ मेरे लायक सर्विस कहॉ? यह तो बेरोजगारों का शहर है। ज्यादा से ज्यादा नूरानी तेल की मार्केटिंग मिल जाएगी। "

संदर्भ : प्रस्तृत गद्यावतरण हमारी पाठ्य-पुस्तक 'दौड़' से अवतरित है। इस उपन्यास की लेखिका ममता कालिया जी हैं।

प्रसंग :

इस अवतरण के माध्यम से लेखिका यह बताना चाहती हैं कि जो पवन माता-पिता की बातें टालता नही था, वही एम.बी.ए. करने के बाद इतना बदल गया है कि अपने शहर इलाहाबाद को बेरोजगारों का शहर कहने लगता है।

स्पष्टीकरण :

पवन अहमदाबाद से एम.बी.ए. करने से पहले इलाहाबाद में अपने माता-पिता के साथ रहता था। उस समय उसका शहर उसे बड़ा प्यारा लगता था परन्तु अब जब वह अहमदाबाद में नौकरी करने लगा है तो उसे कैरियर के लिए सबसे अच्छी जगह वही लगती है। इसीलिए जब उसके माता-पिता उसे अपने पास रहने की सलाह देते हैं तो वह बिना संकोच किए कह देता है कि इलाहाबाद बेरोजगारों का शहर है। इसे सुनकर उसके माता-पिता यह समझ जाते हैं कि उनका बेटा कैरियर की ऐसी 'दौड़' में शामिल हो गया है जहाँ से अपनापन दिखाई नहीं देता है।

विशेष :

इत अवतरण में वर्तमान नयी पिढ़ी का सफलता से जुड़े विचार को महत्त्वपूर्ण मानने और अपनत्व का तिरस्कार करने का भाव व्यक्त हुआ है।

२) "प्रेम करो, प्राणिमात्र से प्रेम करो । प्रेम टेलिफोन कनेक्शन नहीं है जो आप सिर्फ एक मनुष्य से बात करें। प्रेम वह आलोक है जो समूचे कमरे को, समूचे जीवन को आलोकित करता है। "

संदर्भ : प्रस्तुत अवतरण हमारी पाठ्य-पुस्तक 'दौड़' से किया गया है । इस उपन्यास की लेखिका ममता कालिया हैं।

प्रसंग :

इस अवतरण में लेखिका ने सरल मार्ग मिशन के कैम्प में चल रहे स्वामी जी के प्रवचन के अंशों को उध्दृत कर यह स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया है कि वर्तमान जीवन की भाग-दौड़ से परेशान नयी पीढ़ी के युवा, ध्यान अथवा मेडिटेशन कैम्पों में जाकर ऊर्जा प्राप्त करना चाहते हैं।

स्पष्टीकरण :

किरीट ने जब पवन से चार दिनों के लिए मेडिटेशन कैम्प में जाने के लिए कहा तो पहले उसे बहुत बुरा लगा क्योंकि निजी क्षेत्र की नौकरी में चार दिन की छुट्टी का मतलब था-

उत्पादन को क्षेत्र से हटा देना । लेकिन जब छुट्टी पर गए किरीट का सही पता लगाने के लिए जब पवन कैम्प में गया तो उसने देखा कि वहाँ वी.आई.पी. किस्म के भक्त मौजूद थे। स्वामीजी भी निहायत ही व्यावहारिक बात कर रहे थे कि हमें प्राणिमात्र से प्रेम करना चाहिए। प्रेम हमारे जीवन में प्रकाश पैदा करता है। इसे सुनकर पवन के मन में भी स्वामीजी के प्रति आकर्षण पैदा हो गया।

विशेष :

लेखिका स्पष्ट करना चाहती है कि एक ओर तो नयी-पिढ़ी कैरियर की दौड़ में भाग रही है लेकिन दूसरी ओर वह आध्यात्मिक शांति भी चाहती है।

३) 'अध्ययन के लिए अब अवकाश भी नहीं था। कम्पनी की कर्मभूमि ने उसे इस युग का अभिमन्यु बना दिया था।'

संदर्भ -

प्रस्तुत अवतरण हमारी पाठ्य – पुस्तक 'दौड़' से अवतरित है, जिसकी लेखिका ममता कलिया जी हैं।

प्रसंग –

इस अवतरण में लेखिका यह बताना चाहती है कि भले की पवन साहित्य प्रेमी माता-पिता की संतान है, लेकिन आजीविका की भागदौड़ में वह अध्ययन के लिए समय नहीं निकाल पाता।

स्पष्टीकरण –

पवन अहमदाबाद में भीमसेन जोशी का गायन सुनने गया था । वहाँ उसने देखा कि भीमसेन जोशी के सुर को सम्मान से सुनने के बजाय लोग अंकलचिप को खाना शुरू कर दिया,जिससे राग अहीर वी के साथ कुर्र - कुर्र, चर्र चर्र की ध्वनि शामिल हो गयी।

उसने अपने शहर इलाहाबाद की संगीत प्रियता को याद किया। माता – पिता और घर की याद ने उसे भावुक कर दिया। उसे माँ याद आने लगी जो दूर रहते हुए भी हमेशा उसे समय से खाने और आराम से रहने ही सलाह देती है। पिता की हँसी उसे अब भी बड़ी अद्‌भुत लगती और छोटे भाई सघन का प्यार भुलाये नहीं भूलता है। साहित्य प्रेमी माता – पिता के कारण वह समय निकालकर प्रेमचंद की कहानियाँ आदि पढ़ा करता था, लेकिन अब स्थिति बदल गयी है। अब उसे पढ़ने का समय ही नहीं मिलता। प्राइवेट कंपनी की दौडधूप ने उसे कहीं का नहीं छोड़ा। घर फोन भी करता है तो बार-बार आँख मीटर पर चली जाती है।

विशेष –

लेखिका ने यहाँ पर नयी पीढ़ी की उलझन को व्यक्त किया है।

४) 'यही बात तुम्हारे बारे में दादी माँ ने पापा से कही थी। क्या उन्होंने दादी माँ की बात मानी थी, बताइए।'

संदर्भ-

प्रस्तुत अवतरण हमारी पाठ्य-पुस्तक 'दौड़' से लिया गया है। इस उपन्यास की लेखिका ममता कालिया हैं।

प्रसंग –

प्रस्तुत बातें पवन ने अपनी माँ रेखा से उस समय कही जब रेखा ने स्टैला के बारे में कि वह पवन के लायक नहीं है।

स्पष्टीकरण-

माँ रेखा से जब पवन ने फोन पर स्टैला को पसंद करने और उससे शादी करने की बात की तो वह अहमदाबाद चली गयी इस उम्मीद के साथ कि यह बात झूठी होगी।
वहाँ पहुँचने पर पवन ने स्टैला का परिचय अपनी बिजनेस पार्टनर, लाइफ पार्टनर और रूम पार्टनर के रूप में कराया ता उसे बड़ा अजीब लगा। जैसे ही अनुपम सोने गया, रेखा ने पवन से पूछा कि यह लड़की उसे कहाँ से मिल गई ? पवन ने बताया है कि स्टैला का लाखों का कारोबार है। यही उसकी सबसे बड़ी काबिलियत है। जैसे ही रेखा ने कहा कि स्टैला तो उसे दो कौड़ी की लगती है। पवन ने बिना सोचे समझे तुरंत उत्तर दिया कि यही बात उसके बारे में पवन की दादी ने भी कही थी, लेकिन पिता ने दादी की बात न मानकर उसी से शादी की।

विशेष-

यहाँ पर लेखिका यह कहना चाहती है कि वर्तमान समय इतना बदल गया है कि नयी पीढ़ी का पवन अपनी माँ के बारे में कोई संकोच न करते हुए उससे वे बातें आसानी से कह देता है जिससे माँ को दुख हो सकता है।

५.४ संदर्भ सहित स्पष्टीकरण के अभ्यास हेतु अवतरण

१) 'सच्ची बात तो यह है कि अपने घर और बाहर से बाहर आदमी हर रोज एक नया सबक सीखता है।'

२) 'अध्ययन के लिए अब अवकाश भी नहीं था। कम्पनी की कर्मभूमि ने उसे इस युग का अभिमन्यु बना दिया था।'

३) 'प्रेम करो, प्राणिमात्र से प्रेम करो। प्रेम टेलिफोन कनेक्शन नहीं है जो आप सिर्फ एक मनुष्य से बात करे।

४) फिर तुमने गलत शब्द इस्तेमाल किया। बँका शब्द दाँत के साथ नहीं बोला जाता। बाँकी अदा होती है, दाँत नहीं।

५) नहीं में सोच रही थी, विज्ञापन कितनी अतिशयोक्ति करते हैं। सच्चाई यह है कि न किसी के हँसने से फूल झरते हैं न मोती, फिर भी मुहावरा है कि लीक पीट रहा है।,

६) 'ओ शिट। सीधा – सादा एक प्रोडक्ट बेचना है, इसमें तुम नैतिकता और सच्चाई जैसै भारी – भरकम सवाल मेरे सिर पर दे मार रही हो।'

७) 'पापा मेरे लिए शहर महत्वपूर्ण नहीं है, कॅरियर है। अब कलकत्ते को ही लीजिए। कहने को महानगर है पर मार्केटिंग की दृष्टि से एकदम लद्धड़।

८) सच तो यह है पापा जहाँ हर महीने वेतन मिले, वही जगह अपनी होती है और कोई नहीं।

९) हमारे एजेंडा पर बहुत सारे काम है । शादी के लिए हम ज्यादा से ज्यादा चार दिन खाली रख सकते हैं।

१०)'तुम्हें चाहिए कि स्टैला के लिए जीवन भट्टी न बने। जो तुमने सहा, वह क्यों सहे ?'

११) 'मेरे हर काम में आप यह क्या एथिक्स, मोरेलिटी जैसे भारी भरकम पत्थर मारते रहते हैं, मैं जिस दुनिया में हूँ एथिक्स नहीं, प्रोफेशनल एथिक्स की जरुरत है।'

१२) ' जो मै नहीं चाहती थी वह कर रहा है छोटू। हार्डवेयर का मतलब है मैकेनिक बनकर रह जाएगा। एक भाई मैनेजर दूसरा मैकेनिक।'

१३) बच्चों को सुरक्षित भविष्य के लिए तैयार कर हर घर परिवार के माँ बाप खुद एकदम असुरक्षित जीवन जी रहे हैं।

१४) तुम्हें पता है घर का हाल। जितना कमाते हैं उतना खर्च कर देते हैं। सारा पोंछ- पाँछकर निकाले तो भी एक डेढ़ से ज्यादा नहीं होगा।

५.५ अभ्यास हेतु प्रश्न

१) 'दौड़' उपन्यास का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।
२) लेखिका ने 'दौड़ उपन्यास के माध्यम से क्या कहना चाहा है ?
३) 'दौड़' उपन्यास में आधुनिक जीवन के बिखरते रिश्तों का वर्णन किस प्रकार किया है ?
४) 'वर्तमान पीढ़ी बाजार के दबाव में सब कुछ भूलती जा रही है। 'दौड़' उपन्यास के आधार पर इस कथन की समीक्षा कीजिए।
५) 'दौड़' उपन्यास का संक्षिप्त सारांश लिखिए।
६) पवन का चरित्र – चित्रण किजिए।
७) रेखा का चरित्र चित्रण किजिए।
८) राकेश के चरित्र पर प्रकाश डालिए।
९) स्टैला के चरित्र की विशेषताएँ लिखिए ।
१०) सघन के जीवन संघर्ष की विवेचना कीजिए।

५.६ अभ्यास हेतु टिप्पणियाँ

१) अभिषेक और राजुल।
२) विज्ञापन का दबाव।
३) नैतिकता और विज्ञापन।
४) उपभोक्तावादी संस्कृति और दौड़ उपन्यास
५) पवन की दृष्टि में परिवार और कैरियर

६) कॉलोनी का जीवन।
७) बाजार और कॅरियर के बीच झूलती नयी पीढ़ी।
८) सरलमार्ग मिशन।

अभ्यास हेतु

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

५.७.१ निम्नलिखित वाक्य को किसने कहा है? उत्तर

१)	यह तो बेरोजगारों का शहर है	पवन
२)	शब्द पत्थर नहीं है जो अचल रहें	एजुल
३)	कोई रणनीति सोचो। कोई इनामी योजना, हालिडे प्रोगाम ?	पवन
४)	सन ८४से बाहर हूँ। पहले पढ़ने की खातिर (अब काम की)	अनुपम
५)	मैं बहुत थक चुका हूँ। नो मोर डिसकशन।	अभिषेक
६)	यों कहो कि तुम्हें मॉडल की तलाश में मजा आ रहा है ।	राजुल
७)	हमें सच्चाई नहीं प्रॉडक्ट बेचनी है।	अभिषेक
८)	हम सपनों के सौदागर हैं।	अभिषेक
९)	टूरिस्ट की तरह तुमने उसे मनमाने पैसे दे दिए	रेखा
१०)	लगता है तुमने कम्प्यूटर को भी घूस दे रखी है	पवन
११)	तुम तो तरक्कीराम हो। मै चेन्नै पहुँचूँ और तुम सिंगापुर चले जाओ।	स्टैला
१२)	तुम अपनी तरक्की के लिए पत्नी और कंपनी दोनो छोड़ दोगे।	राकेश
१३)	प्रेम करो प्राणीमात्र से प्रेम करो।	स्वामीजी
१४)	पर वह काफी नही है। आपने इतने बरसों में क्या किया ?	सघन
१५)	माँ जब आने लायक हो जाऊँगा तभी आऊँगा।	सघन
१६)	मुझे संस्कृति नहीं उपभोक्ता संस्कृति चाहिए।	पवन
१७)	शहर और घर रहने से बसते हैं बेटा।	राकेश
१८)	हर पुरानी चीज आपको श्रेष्ठ लगती है।	पवन
१९)	सब्जी फ्रिज में रख देते हैं, कल खाएँगे।	राजुल
२०)	गंगा जल आता है हमारे नल में।	रेखा
२१)	यह पंडित तो बिना घूस के भी काम कर देता है।	स्टैला
२२)	मुझे लगता है तुम पूर्वाग्रह से ग्रसित हो।	राकेश
२३)	यानी सेटेलाइट और इंटरनेट से तुम लोगों का दाम्पत्य चलेगा	राकेश
२४)	आप ऐसा कीजिए, इस काम के लिए किसी को बेटा बनाकर दाह संस्कार करवाइए	सिध्दार्थ
२५)	परदेस में आदमी कभी नहीं जम सकता।	राकेश

५.७.३ अभ्यास हेतु रिक्त स्थानों की पूर्ति किजिए

		उत्तर
१)	पब्लिक सेक्टर के—————पचड़े।	सौ
२)	पदन————के मामले में उन्मुक्त था।	खाने
३)	शिकागो में एक—————का एक टमाटर मिलता है।	डालर
४)	स्वामी जी की ——————असरदार थी।	वक्तृता
५)	तलाश सही पर तुम————नहीं जाओगे।	रोजेज
६)	हर सीजन में हर तरह के आदमी को ————की जरुरत होती है।	गैस सिंलिडर
७)	यो कहो कि तुम्हें ————— मजा आ रहा है।	मॉडल की तलाश में
८)	नौकरी लग जाने के साथ पवन बहुत ————हो गया था।	नाजुक मिजाज
९)	पर आपमें—————- की कमी है।	जीवन दर्शन
१०)	बेटे हमें हमसे ————-नहीं चाहिए।	किस्ते
११)	अनिवासी और प्रवासी केवल————नहीं होते।	पर्यटक और पंछी
१२)	बच्चे अब हमसे ज्यादा——— को समझते हैं।	जीवन
१३)	ऐसे ———सीट रिजर्व नहीं होती।	स्वर्ग में
१४)	परदेस में आदमी कभी——— सकता।	नहीं जम
१५)	बच्चा उनसे—————हिसाब माँग रहा था।	रुपए आने पाई में

अभ्यास हेतु – एक वाक्य में उत्तर लिखिए

		उत्तर
१)	पवन ज्यादा देर स्मृतियों में क्यों नहीं रह पाया ?	क्योकि बिजली आ गई ?
२)	पवन के अनुसार इलाहाबाद किसका शहर है ?	बेरोजगारों का शहर है।
३)	हम सातसमंदर पार की डिश का क्या करते हैं ?	भारतीयकरण करते है।
४)	मौसी किन चीजो में गुड डाल देती थी ?	कढ़ी और कोले में।
५)	शिक्षा में इलाहाबाद को क्या कहते हैं ?	पूर्व का ऑक्सफोर्ड
६)	पूरे मार्केट में क्या छाई हुई है ?	बिल्ली छाई हुई है।
७)	हिंदुस्तानी मर्द को क्या चाहिए ?	शादी के सारे सुख चाहिए।
८)	पूजा और ध्यान कैसा काम है ?	फुलटाइम काम है।
९)	बेसन को गुजरात में क्या कहते हैं ?	चने नी लोट कहते है।
१०)	पब्लिक सेक्टर में कैसी इकाइयों की भरमार है ?	बीमार कंपनियों की।
११)	स्टैला की कंपनी का क्या नाम था ?	डिमैलो एंटरप्राइज कार्पोरेशन

१२)	पवन को कैसी संस्कृति चाहिए ?	उपभोक्तावादी संस्कृति।
१३)	बिलगेडस के हस्ताक्षर की चिट्ठी किसके पास आती है ?	स्टैला के पास।
१४)	कंपनी की कर्म भूमि ने पवन को क्या बना दिया था ?	इस युग का अभिमन्यु।
१५)	रेखा के अनुसार ग्रीटिंग कार्ड किसे भेजा जाता है ?	बाहरी लोगों को।
१६)	रेखा ने स्टैला के बारे में पवन से क्या कहा ?	वह पवन के लायक नहीं है।
१७)	पवन की अनुसार ऐसा किससे ग्रतित है ?	पूर्वाग्रह से ।
१८)	सभी माँ बाप अपने बच्चों को किसमें कामयाब बनाना चाहते है ?	भौतिक अर्थो में ।
१९)	जनकल्याण समिति असुरक्षा से लड़ने के लिए क्या करती थी ?	सुन्दरकांड का पाठ करती थी।
२०)	सिध्दार्थ ने पिता के दाहसंस्कार के लिए क्या कहा ?	किसी को बेटा बनाकर करवा दीजिए।
२१)	सघन ने पिता से क्या समीकरण समझाया ?-	लोकल लोगों के समर्थन में बोलना जरूरी है।

दस प्रतिनिधि कहानियाँ – मन्नु भंडारी

लेखक – डॉ. संतोष मोटवानी

१

अकेली

इकाई की रूपरेखा :

१.० उद्देश्य
१.१ प्रस्तावना
१.२ 'अकेली' कहानी की कथावस्तू
१.३ 'अकेली' कहानी की मुख्य पात्र सोमा बुआ की व्यथा का चित्रण
१.४ मन्नू भण्डारी द्वारा लिखित 'अकेली' कहानी की प्रमुख पात्र सोमा बुआ का चरित्र-चित्रण
१.५ कहानी के तत्त्वों के आधार पर 'अकेली' कहानी की समीक्षा ।
१.६ निम्नलिखित अवतरण की संदर्भ सहित व्याख्या किजिए

१.० इकाई का उद्देश्य :

इस इकाई में आप 'अकेली' कहानी का मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप-

- इस कहानी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे।
- कहानी के पात्रों के चरित्रों की विशेषताएं जान सकेंगे।
- कहानी के तत्वों के आधार कहानी की समीक्षा कर सकेंगे।
- कहानी के उद्देश्य को जान सकेंगे।
- कहानी के मूलपाठ की कुछ महत्त्वपूर्ण पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।

१.१ प्रस्तावना

मन्नू भंडारी लिखित 'अकेली' कहानी मानवीय संवेदना की त्रासदी का करुण चित्र है। कहानी की मुख्य पात्र सोमा बुआ बूढ़ी अकेली और परित्यक्ता हैंऽ उनका एकमात्र जवान बेटा मृत्यु का ग्रास हो गया था और पति पुत्र शोक में संन्यासी बन गए थे। सोमा बुआ अकेली रह जाती हैं। अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए गाँव मे किसी के भी घर कोई भी सुख-दूख क्यों न हो, वे वहां स्वयं पहुँच जातीं। कहानी का सबसे दारूण दृश्य वह है जब बुआ दूर के किसी रिश्तेदार की शादी में जाने की तैयारी करते हुए निमंत्रण का इंतजार करती हैं। शगुन देने के लिए वे अपने मृत पुत्र की एकमात्र निशानी उसकी अंगूठी तक बेच देती है। बुआ को पूरा विश्वास होता है कि बुलावा आयेगा लेकिन दोपहर से साँझ हो जाती है, मुहूर्त का समय निकल जाता है, पर कोई उन्हें बुलाने नहीं आता । बुआ सब चीजें वापस रख बुझे मन से अंगीठी जलाती हैं। इस

प्रकार सोमा बुआ संबंधों में जीना चाहती हैं लेकिन अपने अभावों के कारण ही वह समाज में अकेली और क्षुभित होने के लिए अभिशप्त हैं।

१.२ 'अकेली' कहानी की कथावस्तु :

'अकेली' कहानी सोमा बुआ की कहानी है । एक ऐसी अकेली बुढ़िया, जो दूसरों से जुड़ने की ललक में मोहल्ले के हर घर में बिन बुलाए जाकर उनके काम करती। हारी बीमारी में रात-रात भर जाग कर सेवा करती। शादी-ब्याह, तीज-त्यौहार पर हाड़-तोड़ मेहनत करती, पर फिर भी वह कभी उनकी नहीं हो पाई।

सोमा बुआ परित्यक्ता हैं, अकेली हैं । उनका एक ही जवान बेटा था । उसकी आकस्मिक मृत्यु होने पर पति को पुत्र – वियोग का ऐसा सदमा लगा कि वे पत्नी, घर-बार तजकर तीरथवासी हुए । परिवार में कोई ऐसा सदस्य नहीं था जो सोमा बुआ के एकाकीपन को दूर करता । इसी एकरसता में बुआजी के बीस वर्ष बीत गए । यों हर साल एक महीने के लिए उनके पति उनके पास आकर रहते थे, पर कभी उन्होंने पति की प्रतीक्षा नही की, उनकी राह में आँखे नही बिछाई । इसका भी एक कारण था। संन्यसीजी को सोमा बुआ का बिना बुलाए .... किसी के यहाँ जाना नही सुहाता था । इसी बात को लेकर दोनों में अनबन रहती थी । सोमा बुआ की पीड़ा उनके कथनों में देखी जा सकती है –

"मेरा आना-जाना इन्हें सुहाता नही, सो तू ही बता राधा, ये तो साल मे ग्यारह महीने हरिद्वार रहते हैं । इन्हें तो नाते –रिश्ते वालों से कुछ लेना-देना नही, पर मुझे तो सबसे निभाना पड़ता है । मैं भी सब तोड़-ताड़कर बैठ जाऊँ तो कैसे काम चले ?....."

सोमा बुआ बहुत ही भोली तथा निश्छल हैं। उनका मानना था कि कोई प्रेम रखे तो वहाँ बुलाने की औपचारिकता समाप्त हो जाती है और प्रेम न रखे दस बुलावे से भी बात न बने । हालांकि संन्यासीजी की सोच इससे विपरीत थी । वे बिना निमत्रित किए कही जाना उचित नहीं समझते थे ।

लेखिका ने एक अत्यंत साधारण घटना द्वारा सोमा बुआ के जीवन में क्षणिक खुशी और फिर वही बोझिल अकेलापन दर्शाया है । सोम बुआ के देवर की बहुत पहले मृत्यु हो चुकी थी । देवर के ससुरालवालों की किसी लड़की का विवाह उनके गाँव के भागीरथीजी के यहाँ तय था । सोमा बुआ को उम्मीद थी कि उन्हें बुलावा जरुर आयेगा । समधी को आखिर कैसे छोड़ सकते हैं । विधवा ननद द्वारा यह बताने पर कि लिस्ट मे उसने बुआ का भी नाम देखा है, उनके उम्मीद को और पुष्टि मिली । उन्हें अपने पति द्वारा सख्त चेतावनी मिली थी कि बिना बुलावे के न जाना, परंतु सोमा बुआ आश्वस्त थीं । उनका कहना था –

"बुलाएँगे क्यों नहीं ? शहर वालो को बुलाए और समधियों को नहीं बुलाएँगे क्या ?"

सोमा बुआ बिना बुलावे का इंतजार किए अपनी तरफ से शादी में जानें की तैयारियाँ शुरु कर देती है । पुरानी चूड़ियाँ निकालकर लाल-हरी नयी चुड़ियाँ पहनती है । साड़ी में कलफ लगाती हैं । उपहार के लिए पैसे कम पड़ने पर अपने मृतक पुत्र की एकमात्र निशानी अंगूठी भी बेच देती हैं । इस बात पर हमेशा ध्यान रखती हैं कि इतने बड़े घर में उनके द्वारा कोई अशोभनीय काम न हो जाए । वे शादी में ले जाने वाली भेंट की थाली सजाकर दिन भर बुलावे

का इंतजार करती रहीं । संन्यासी महाराज सवेरे से इस आयोजन को देख रहे थे, और उन्होंने कल से लेकर आज तक कोई पच्चीस बार चेतावनी दे दी थी कि यदि कोई बुलाने न आए तो चली मत जान, नहीं तो ठीक नहीं होगा । इधर बुआ को पूरा विश्वास है कि बुलावा जरुर आएगा। पांच बजे मुहूरत का समय निकल गया पर बुआ सात बजे तक आशा भरी नजरों से बुलावे का इंतजार करती रहीं । बुलावा न आने पर बुआ का सारा उल्लास बुझ जाता है और फिर दु:खी होकर अनमने भाव से घर के काम में लग जाती हैं ।

इस प्रकार 'अकेली' कहानी सोमा बुआ के अकेलेपन की कहानी है, जो दूसरों से जुड़कर भी अकेली जिंदगी बिताने के लिए अभिशप्त है ।

१.३ 'अकेली' कहानी की मुख्य पात्र सोमा बुआ की व्यथा का चित्रण

सोमा बुआ जिस व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक परिवेश में रहती हैं उसका एक अत्यंत सजीव, यथार्थ और मार्मिक चित्रण इस कहानी में दृष्टव्य है । वह बुढ़िया है, परित्यक्ता है, अकेली है । जिसका जवान बेटा चल जाए और परित्यक्ता हो, उसकी जवानी क्या जीवन ही चला जाता है। उसके पति पुत्र-वियोग में सब कुछ त्याग कर तीरथवासी हो जाते हैं । परिवार में वह 'अकेली' रह जाती हैं । उसके जीवन की यही बिंडबना है कि पति की उपस्थिति में उसका मन और मुरझाया रहता है । पति से स्नेह तो दूर तिरस्कार ही मिलता है । उसके 'संन्यासी' पति एक महीने ठहरने की अवधि में उसका संत्रास अवश्य बढा देते हैं । दो मीठे बोल का संबल भी उसे नहीं देते, जिसका आसरा लेकर वह ग्यारह महीने का वियोग काट सके ।

पति-परिवार से टूटी-बिखरी सोमा बुआ अपने को सामाजिक कार्यो में लगाकर अपने व्यक्तित्व को संभाले हुए है । यदि ऐसा न करती वो संभवत: विक्षिप्त और समाप्त हो गई होती । उसके पति अपने निवास की अवधि में नकारात्मक भूमिका अदा करते है । उसके आने-जाने पर, सामाजिक आयोजनो में भाग लेने आदि में अनवाश्यक रोक लगाते हैं । पड़ोसियों का, परिचितों का किसी के यहाँ कोई आयोजन हो सोमा बुआ बिना बुलाये भी अपना ही काम समझकर तन-मन से जुट जाती है । पर उसके पति की कटुवाणी उसके उत्साह को चीरती रहती है । किन्तु सोमा बुआ इतनी विशाल ह्रदय वाली हैं कि उसके लिए बुलाने की औपचारिकता कोई महत्त्व नहीं रखती । वह कहती है –

"कोई प्रेम नही रखे तो दस बुलावे पर नहीं जाऊँ और प्रेम रखे तो बिना बुलाये भी सिर के बल जाऊँ ।" इसी तरह सोमा बुआ अपनी व्यक्तिगत व्यथा को सामाजिक स्तर तक उठा देती हैं।

सोमा बुआ की विशाल – ह्रदयता उस समय पूरे उफान पर दिखाई पड़ती है जब उसके देवर के ससूराल वालों की किसी लड़की का संबंध भगीरथ के यहाँ होने की खबर उसे मिलती हैं। बुलावा नही आया हैं, लेकिन उनके लिए यह तुच्छ बात है। देर-सबेर आ ही जायेगा। संन्यासी पति उसे रोकते हैं। बिना बुलावे के नहीं जाना हैं। लेकिन सोमा बुआ को पूरा यकीन है कि बुलावा जरुर आयेगा। उसके पास साधन नही, पर दिल बढ़ा है। शानदार उपहार ले जाना चाहती है पर उसकें पास सिर्फ सात रुपये और कुछ रोजगारी है उसकी नजर अँगूठी पर जाती है, जो उसके मृत पुत्र की एकमात्र निशानी है। बडे-बडे आर्थिक संकटों में भी बुआ ने इसका मोह नहीं छोड़ा लेकिन धड़कते दिल से उसे उठा लेती है। बेचकर उपहार खरीदती है। इज्जत

के साथ जाना है इसलिए छुपकर लाल-हरी चूड़िया पहनती है और सारे दिन साड़ी के आंचल से ढके-ढके फिरती है। पूरी सज-धज के साथ बुलावे का इन्तजार करती है। आयोजन ५ बजे का है। तीन बज चुके हैं। बुलावे के इंतजार में छत से गली में नजर फैलाये खड़ी है। इसी इंतजार में सात बजते है, फिर भी उम्मीद नही गई है। सपनों मे खोई बुआ को इतना विश्वास है कि बुलावा जरुर आयेगा। राधा के बताने पर कि सात बज गये है, सोमा बुआ अटूट विश्वास के साथ कहती हैं –

"पर सात कैसे बज सकते हैं, मुहूरत तो पांच बजे का था ?"

सोमा बुआ की आस्था इतनी गहरी है कि समय कि गति बन्द हो जानी चाहिए।

संयत होने पर वास्तविक स्थिति का भी भान होता है। वह अनमने भाव से साडी उतारती है। धीरे-धीरे हाथों से चूड़ियाँ खोलती है और थाली में सजाया हुआ सारा सामान उठाकर बड़े जतन से एकमात्र संदूक मे रख देती है और फिर रोजमर्रा के काम में लग जाती है। बड़े बुझे हुए दिल से अंगीठी जलाने लगती है। चलते रहने का नाम ही जिन्दगी है।

इस प्रकार 'अकेली' कहानी में लेखिका ने उपेक्षापूर्ण सामाजिक परिवेश में रहनेवाली परित्यक्ता, पुत्रशोक से आकुल, आधी-अकेली वृद्धा, सोमा बुआ का वह पक्ष उप्पागर किया है, जिसमें मानवीय संवेदना का अनत्त स्पंदन जिजीविषा का स्मरण दिलाता है।

१.४ मन्नू भण्डारी द्वारा लिखित 'अकेली' कहानी की प्रमुख पात्र सोमा बुआ का चरित्र-चित्रण

सोमा बुआ 'अकेली' कहानी की प्रमुख पात्र है। सोमा बुआ परिवार में अकेली हैं। जवान पुत्र की मृत्यु का सदमा उनके पति सह नही सके और सब कुछ त्यागकर संन्यासी हो गये। अपनी पहाड़-सी भारी अकेली जिंदगी बिताने के लिए बुआ आस-पड़ोस को ही अपना बना लेती है। सोमा बुआ के चरित्र की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

१) गृहकार्य में कुशल :

सोमा बुआ गृहस्थी के कार्य में बहुत कुशल हैं। दावत में जितनी समझ बुआ को है उतनी हलवाई को भी नही हैं। किशोरीलाल के बेटे के मुण्डन में हलवाई ने समोसे कच्चे ही उतार दिए और इतने बना दिए कि दो बार खिला दो और गुलाबजामुन इतने कम कि एक पंगत में भी पूरी न पड़े। उसी समय बुआ ने मैदा सानकर नए गुलाबजामुन बनाए और किशोरीलाल की लाज रख ली। गृहकार्य में कुशल होने के साथ-साथ सोमा बुआ गाने-बजाने में भी दक्ष है। उन्हें पता है कि रिति-रिवाजों के लिए अलग-अलग गीत है। गीत गानेवाली औरतों कि नासमझी पर वे मुस्कुराती हुई कहती है –

"एक काम गत से नहीं हो हो रहा था। अब घर में कोई बड़ा-बूढ़ा हो तो बतावें, या कभी किया हो तो जाने। गीतोंवाली औरते मुण्डन पर बन्ना-बन्नी गा रही थी। मेरा तो हँसते-हँसते पेट फुल गया।"

इस प्रकार हम देखते है कि सोमा बुआा भलेही वृद्धा हैं पर उनकी कार्य कुशलता के आगे नयी-नवेली बहुएँ भी नही टिक पातीं।

२) अपने संन्यासी पति से परेशान :

जवान पुत्र की मृत्यु के बाद सोमा बुआ को सिर्फ अपने पति का सहारा था। परंतु पुत्र की मृत्यु के सदमें ने उनके पति को संन्यासी बना दिया। संन्यासीजी बारह महिने में से एक महिने सोमा बुआ के पास रहते है। सोमा बुआ ने कभी अपने पति की प्रतीक्षा नहीं की और न ही उनकी राह में आँखे बिछाई। पति की अनुपस्थिति में वे पास-पड़ोस में जाकर अपने अकेलेपन को दूर करती थीं। पर पति की उपस्थिति में उनपर अंकुश लग जाता है। बिना बुलाए किसी के यहा जाना उन्हें नही सुहाता था। सोमा बुआ का इस पर अपना ही तर्क है। वे कहती है –

"सारा धरम-करम ये ही लूटेंगे, सारा जस ये ही बटोरेंगे और में अकेली पड़ी-पड़ी यहाँ इनके नाम को रोया करु; उस पर से कही आँऊ-जाँऊ वह भी तो इनसे बर्दाश्त नहीं होता। सोमा बुआ का मन अन्य औरतों की तरह पति की उपस्थिति में खुश नहीं रहता। बल्कि अपने पति की रोक-टोक एवम् स्नेहहीन व्यवहार से वे दुखी एवम् परेशान रहती है।"

३) समाज से जुड़े रहने की ललक :

पुत्र की मृत्यु तथा पति के संन्यासी हो जाने के बाद सोमा बुआ के पास कोई अपना सगा नहीं है जिससे वे अपना दुख कहें, अपने एकाकी पन को दूर कर सके। अत: इस एकाकीपन को दूर करने के लिए बुआ आस-पड़ोस वालों के भरोसे ही रहती हैं। किसी के घर मुण्डन हो, छठी हो, जनेऊ हो, शादी हो या गमी, बुआ पहुँच जातीं और फिर छाती फाड़कर काम करतीं, मानों वे दूसरे के घर में नही अपने ही घर में काम कर रही हों। लोगों से जुड़े रहने की ललक में वे उनके बुलावे का इंतजार नहीं करती। वे तो बस अपनेपन की बात जानती हैं। वे भी कहती हैं –

'कोई प्रेम नहीं रखे तो दस बुलावे पर नहीं जाऊँ और प्रेम रखे तो बिना बुलाए भी सिर के बल जाऊँ।'

बिना बुलाए जाने की बात सोमा बुआ के संन्यासी पति को नहीं सुहाती। परंतु उनकी अनुपस्थिति में तो बुआ को आस-पड़ोस का ही सहारा है। इसलिए बुआ किसी के बुलावे का इंतजार नहीं करती और जिसे अपना मानती है वहाँ जाकर जी-तोड़ मेहनत करती है।

४) संबंधियों से उपेक्षा :

बुआ के स्वर्गवासी देवरजी के ससुरालवालों की किसी लड़की की शादी बुआ के गाँव के भागीरथ के यहाँ तय होती है। सोमा बुआ यह सुनकर अति प्रसन्न होती हैं। उन्हे पूरा विश्वास हैं कि उन्हे बुलावा जरुर आयेगा। संन्यासीजी की मौन अपेक्षा से उनके मन को ठेस तो पहुँची, फिर भी वे प्रसन्न रहती है। शादी में जाने की तैयारियाँ वे शुरु कर देती है। अब उनके मन में एक ही बात आती है कि शादी में उपहार क्या दिया जाये ? जब उनकी समझ में नही आता तो वे राधा भाभी से पूछती है। उपहार की वस्तु खरीदने के लिए अपनी सारी जमा-पूंजी निकाल लेती है। इतना ही नही अपने मृत पुत्र की एकमात्र निशानी अँगूठी भी बेच देती है। मुहूरत के दिन तक बुआ शादी में जाने की एक-एक तैयारी करती है। पूरी सज-धज के साथ बुलावे का इंतजार

करती है। छत पर अनमने भाव से इधर-उधर घूमती हैं। सपनों में खोई बुआ को इतना विश्वास है कि बुलावा जरुर आयेगा। पाँच बजे मुहूरत का समय निकल गया। पर बुआ सात बजे तक आशा भरी नजरों से बुलावे का इंतजार करती है। बुलावा न आने पर बुआ का सारा उल्लास बुझ जाता है और फिर दुखी मन से घर-काम में लग जाती है। इस प्रकार अपने संबंधियो के यहाँ से बुआ को उपेक्षा ही मिलती हैं। उन्होंने अपने स्वर्गीय बेटे की अन्तिम निशानी अँगूठी बेचकर वहाँ देने के लिए सामान खरीदा। ऐसे स्थान पर बुलावा न आने पर बुआ का दु:खी होना स्वाभाविक ही है।

सारांश मे सोमा बुआ का चरित्र अत्यन्त स्वाभाविक, सजीव एवम मर्मस्पर्शी हैं। एक ऐसी वृद्धा जो सबसे जुड़ी होकर भी अकेली है।

१.५ कहानी के तत्त्वों के आधार पर 'अकेली' कहानी की समीक्षा ।

'अकेली' एक ऐसी वृद्धा की कहानी है जो सुहागन होते हुए भी अभागन अथवा परिव्यक्त नारी का जीवन व्यतीत कर रहीं है। उसका जीवन लोगों के मध्य होते हुए भी एकाकी या अकेला है। व्यक्तिगत होते हुए भी यह सामाजिक कहानी हैं।

१) कथावस्तु :

कहानी की नायिका सोमा बुआ एक ऐसी वृद्धा है जिसके जवान पुत्र की मृत्यु हुए वीस वर्ष हो चुके हैं। बुआ के पति भी पुत्र वियोग के सदमें से तीरथवासी हो जाते हैं। बुआ के पास अपना कोई सगा नहीं है जिसके सहारे वे अपने एकाकीपन को बांट सकें। अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए वे पास-पड़ोस के शादी-ब्याह तीज-त्योहार, हारी-बीमारी पर हाड़-तोड़ मेहनत करती। यूँ तो सन्यासीजी सालभर में एक महिने के लिए बुआ के पास आकर रहा करते परंतु उनकी उपस्थिति में बुआ का मन खुश रहने के बजाए और खिन्न रहता हैं. संन्यासीजी को बुआ का बिना बुलाए किसी घर जाना नही सुहाता। बुआ को पति की रोक-टोक अच्छी नहीं लगती क्योंकी उनके जाने के बाद ग्यारह महिने बुआ को उन्हीं लोगों के भरोंसे गुजारने पड़ते थे।

कहानी में एक नाटकीय मोड़ तब आता है जब सोमा बुआ को कही से पता चलता है कि उनके देवर के ससुरालवालों की किसी कन्या का संबंध उनके गाँव में हो रहा है। समधिन होने के नाते वे बुलावा आने पर पूरी तरह से आश्वस्त थीं। शादी में जाने की तैयारियाँ भी शुरु कर देती है। उपहार देने में कोई कमी न रह जाए इसके लिए वे अपनी जमा-पूँजी के साथ-साथ अपने मृतक पुत्र की एकमात्र निशानी अँगूठी भी बेच देती हैं। मुहूरत बीत जाने पर भी जब बुलावा नहीं आता तब बड़े अनमने भाव से अपने रोजमर्रा के कामों में लग जाती हैं।

२. भाषा-शैली :

मन्नू भण्डारी की भाषा न तो क्लिष्ट है न शिथिल – हिन्दी, उर्दू के आम बोलचाल के प्रचलित शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। शिक्षित पात्रों की भाषा में यत्र-तत्र अंग्रेजी के प्रचलित शब्द भी आ जाते है-और अशिक्षित ग्रामीण पात्रों की भाषा पार आंचलिकता का प्रभाव हैं। उनकी भाषा में तत्सम्, तद्भव , विदेशी, देशज सभी प्रकार के शब्द हैं।

तत्सम् शब्द : अशुभ, अधिकार, सजीव, सक्रिय, कर्त्तव्य आदि।
तद्भव शब्द : आसरा, बिरादरी, ब्याह, सुघना, धरम-करम आदि।
देशज शब्द : पल्ला, ससूरा, छुडके, सुकुल आदि।
उर्दू शब्द : कीमत, रोजमरी, असलियत, कलफ, मेजफोश इत्यादी।

मन्नू भण्डारी की शेली मिश्रित हैं। इसमें वर्णनात्मक, सवांदात्मक, विश्लेषणात्मक शैली को अपनाया गया है। संवादो के माध्यम से कथा-विकास पात्र-योजना तथा वातावरण का चित्रण किया गया है। सीधी-सरल शैली में वह दृढतम तथ्य को उद्घटित करती हैं।

३) पात्र एवम् चरित्र-चित्रण :

'अकेली' कहानी में निम्नलिखित पात्र हैं – सोमा बुआ, बड़ी बहू, विधवा ननंद, राधा और बुआ के संन्यासी पति। सोमा बुआ को छोड़कर शेष सभी पात्र गौण एवम् महत्त्वहीन हैं। ये कहानी की गति में छुटपुट योगदान देते हैं। केवल सोमा बुआ ही पूरी कहानी में छायी हुई हैं ?

सोमा बुआ सधवा होते हुए भी विधवा हैं । वे अकेलेपन को भोग रही हैं। बुआ अत्यन्त भोली, त्यागी एवम् परिश्रमी हैं। सभी लोगों के यहाँ बिना बुलाए ही चली जाती है। पर्वो, उत्सवों एवम् कार्यक्रमों पर लोगों की सहायता करती हैं । सबमें घुल-मिल जाती हैं। लेखिका के शब्दों में,

"कोई चालीस पैंतालीस साल पहले कि वह अकेली बुढ़ीया, जो दुसरों से जुड़ने की ललक में रात-रात भर जागकर सेवा करती, शादी-ब्याह, तीज-त्योहार पर हाड़-तोड़ मेहनत करती, पर फिर वह कभी उनकी नही हो पाई।"

४) संवाद :

कहानी में सबसे अधिक संवाद सोमा बुआ के है। दो-चार संवाद राधा, बड़ी बहू एवम् विधवा ननंद के है। एकाध स्थान पर संन्यासीजी के भी संवाद है। पात्रों की भाषा सहज सरल हैं। संवादों में प्रसंगानुकूल भावुकता एवम् करुणा है। उदाहरण प्रस्तुत है –

"क्या हो गया बुआ, क्यों बड़बड़ा रही हो ? फिर संन्यासी महाराज ने कुछ कह दिया था ?"

"अरे मैं कही चली जाऊँ सो ही इन्हें नहीं सुहाता। कल चौकवाले किशोरीलाल के बेटे का मुण्डन था, सारी बिरादरी को न्यौता था। मैं तो जानती थी कि ये पैसे का गुरुर हैं कि मुण्डन पर सारी बिरादरी को न्यौता है, पर काम उन नई-नेवली बहुओं से संभलेगा नहीं, सो जल्दी ही चली गई। हुआ भी वही।"

"बेचारे इतने हंगामे में बुलाना भूल गए तो मैं भी मान करके बैठ जाती ? फिर घरवालों को कैसा बुलाना ? मैं तो अपनेपन की बात जानती हूँ। कोई प्रेम न रखे तो दस बुलावे पर नहीं जाऊ और प्रेम रखे तो बिना बुलाए भी सिर के बल जाऊँ। "पर सात कैसे बज सकते है, मुहूरत तो पाँच बजे का था।"

५) 'अकेली' कहानी में सोमा बुआ के रुप में एक पूर्ण दु:खी अतृप्त, एकाकी नारी जीवन का वातावरण मिश्रित है। उसमें व्यथा-पीड़ा सभी है। कहानी के संवाद, भाषा, वातावरण घटनाएँ

अत्यंत मनोरंजक है। वे हमें आकर्षित करते रहते हैं। कहानी के संवाद का उद्देश्य एकाकी जीवन व्यतीत करनेवाली नारियोंका चित्रण है। साथ ही समाज के ऐसे सन्त पुरुषो पर व्यंग्य किया गया है जो नकली संन्यासी है तथा अपने कर्तव्यों से मुह फेरकर संन्यासी बन जाते है।

इस प्रकार कहानी के तत्त्वों के आधार पर अकेली कहानी सफल एवम् प्रभावशाली है। कहानी के सभी तत्त्वों का निर्वाह 'अकेली' कहानी में उचित प्रमाण में हुआ है।

१.६ निम्नलिखित अवतरण की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए।

"मैं तो इनसे कहती हूँ कि जब पल्ला पकड़ा है तो अन्त समय में भी साथ रखो, सो तो इनसे होता नहीं। सारा धरम-करम ये ही लूंटेगे, सारा जस ये ही बटोंरेंगे और मैं अकेली पड़ी यहाँ इनके नाम को रोया करुँ। उस पर से कहीं आऊँ-जाऊँ वह भी तो इनसे बर्दाश्त नहीं होता....."

संदर्भ : प्रस्तुत अवतरण 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' में संकलित 'अकेली' कहानी से उद्दत किया गया है। इसकी लेखिका मन्नू भंडारी जी हैं। इस कहानी में मन्नू भंडारी ने अकेली एवम् परित्यक्त वृद्धा सोमा बुआ का मर्मस्पर्शी जीवन चित्रित किया है। सोमा बुआ हर किसी की सहायता के लिए सदैव तत्पर रहती है। इसके लिए वह किसी के बुलावे का इंतजार नहीं करती। यही बात साल भर में एक महीने के लिए सोमा बुआ के पास आकर रहनेवाले उनके पति को नहीं सुहाती। सोमा बुआ के पति उनसे कभी दो मीठे बोल भी नहीं बोलते। जब राधा भाभी ने सोमा बुआ से पूछा कि संन्यसीजी महाराज आज क्यों बिगड़ रहे थे। इसके उत्तर में सोमा बुआ उपर्युक्त वाक्य कहती हैं।

व्याख्या : सोमा बुआ किशोरीलाल के बेटे के मुण्डन के आयोजन में बिना बुलाए चली जाती हैं। संन्यासी महाराज को यह बात अच्छी नहीं लगती। इसलिए संन्यासी महाराज सोमा बुआ पर बिगड़ पड़े। सोमा बुआ अपने पति की कठोर वाणी से बहुत व्यथित हो जाती हैं। राधा भाभी के समझाने पर वे कहती हैं संन्यासी जी एक महीने के लिए ही आते है तो भी कभी मीठे बोल नहीं बोलते। न तो ये स्वयं किसी के यहाँ आये जाएँगे और न ही मुझे जाने देंगे। मेरा कहना है जब रिश्ता जोड़ा है तो अन्तिम समय तक उसे निभाओ पर ये तो इनसे होता नहीं। अपनी जिम्मेदारियों को छोड़कर ये तो संन्यासी बन गए। इनके न रहने पर सारी रिश्तेदारी मुझे ही निभानी पड़ती है। ये खुद संन्यासी बनकर सारा धर्म कमा रहे हैं, संसार में यश कमा रहे हैं। वे तो यह भी भूल जाते हैं कि यहाँ पर उनकी एक पत्नी है जो अकेली पड़ी-पड़ी उनके याद मे रोया करती है। मेरा कहीं भी आना जाना इनसे बर्दाश्त नहीं होता और में उन्हीं लोगों से संबंध रखती हूँ जहाँ लोग मुझे अपना मानते हैं। जो प्रेम न रखें उनके यहाँ तो दस बुलावे पर भी न जाँऊ।

विशेष :

१. सोमा बुआ के अकेलेपन की व्यथा उनके कथनो में स्पष्ट झलकती है।
२. भाषा सरल सुबोध खड़ीबोली है। शैली भावात्मक है।

२

मजबूरी

इकाई की रूपरेखा :

२.० उद्देश्य
२.१ प्रस्तावना
२.२ मजबूरी कहानी की कथावस्तु ।
२.३ 'मजबूरी' कहानी में उठाई गई समस्या ।
२.४ 'मजबूरी कहानी की अम्मा वात्सल्य की संक्षिप्त प्रतिमा है। वात्सल्य की प्रतिमा अम्मा ।
२.५ निम्नलिखित अवतरण की संदर्भ सहित व्याख्या किजिए :

२.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई में हम 'मजबूरी' कहानी का मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप-

- कहानी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे।
- कहानी में उठाई गई समस्या को जान सकेंगे।
- कहानी के प्रमुख पात्रों के चरित्रों की विशेषताएँ जान सकेंगे।
- कहानी के मूलपाठ की महत्त्वपूर्ण पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।

२.१ प्रस्तावना

'मजबूरी' कहानी एक ऐसी वयोवृद्ध अम्मा की कहानी है जो भरा-पूरा परिवार होते हुए भी एकाकी जीवन व्यतीत करने के लिए अभिशप्त है। मुंबई निवासी अम्मा का इकलौता पुत्र रामेश्वर तीन वर्षों के बाद उनसे मिलने सपरिवार गांव आता है। अम्मा अपने बेटे, बहू और पोते के आने की खुशी में अपने सारे दु:ख दर्द भूल जाती है। अम्मा की बहू रमा गर्भवती रहती है। दो बच्चों को एक साथ पालने में असमर्थता जताते हुए वो बड़े बेटे बेटू को अम्मा के पास रखने का प्रस्ताव रखती है। प्रस्ताव सुनकर अम्मा खुशी से फूली नहीं समाती। अम्मा बेटू को पालने के लिए वे सभी चीजें सीखती हैं, जिन्हे उन्होंने पहले कभी नहीं किया था। अम्मा के लाड़-प्यार में बेटू स्वच्छंद, चंचल और जिद्दी बन जाता है। रमा के कई बार कहने पर भी अम्मा बेटू को स्कूल नहीं भेजती। वही रमा का छोटा बेटा पप्पू बड़े अदब से अंग्रेजी की छोटी-छोटी कविताएँ बोलने लगा था। अंत में बेटू का भविष्य खतरे में पड़ता देखकर रमा वापस उसे अपने साथ मुंबई लेकर चली जाती है। इस प्रकार अम्मा अकेली रहने के लिए मजबूर हो जाती है।

२.२ मजबूरी कहानी की कथावस्तु ।

प्रस्तुत कहानी में एक ऐसी वयोवृद्ध महिला का चित्रण किया गया है, जो अपने पोते को साथ रखकर अपने जीवन का एकाकीपन दूर करना चाहती है। परंतु गांवो-कस्बो मे शिक्षा की उचित व्यवस्था न होने के कारण वह उसे उसके माता-पिता के पास मुंबई भेजने के लिए मजबूर हो जाती है। 'मजबूरी' की अम्मा की त्रासदी भी 'अकेली' कहानी की बुआ की तरह है। दोनों मे अन्तर मात्र यह है कि सोमा बुआ का अपना कहने को कोई नहीं है जबकि अम्मा अपनों से जुड़ती है और उन्हीं से उपेक्षा पाती हैं।

अम्मा का इकलौता बेटा रामेश्वर नोकरी करने के लिए सपरिवार मुंबई में रहता है जबकि अम्मा अपने पति के साथ गाँव में रहती हैं। वह तीन वर्षो के बाद अम्मा से मिलने गाँव आता है। अम्मा गठिया से ग्रस्त हैं मगर बेटे और बहू के आने की खुशी में वे अपनी व्यथा भूल जाती हैं और कड़ी सर्दी में भी सबेरे उठकर लाल मिट्टी से कमरा लीपती हैं। नौकरानी नर्बदा को आदेश देती है कि वह ग्वाले को अगले दिन से ज्यादा और जल्दी दूध पहुँचाने के लिए कहती जाए। बेटे-बहू के आने वाले दिन वे सर्दी की परवाह न कर भोर में ही उठ बैठती हैं। कड़कड़ाती सर्दी में भी बेटे-बहू की खातिरदारी के सारे इतंजाम कर डालती है।

बेटे बहू तथा पोते के आ जाने पर अम्मा बहुत खुश होती हैं। उनकी खुशी दुगुनी हो जाती है जब बहू रमा बेटू को अम्मा के पास रखने के लिए कहती है। रमा गर्भवती है तथा वो दो बच्चों को पालने में असमर्थता जताती है। अम्मा हर्ष से गद्‌गद् हो रमा को आर्शीवाद देने लगती हैं कि उसकी सारी मनोकामनाएँ पूरी हों। उन्हें आशा बंधती है कि उनके सूने घर में एक बच्चा रहने से उनका जीवन सफल हो जाएगा। वे रमा को अपनी बात से न मुकरने की चेतावनी भी दे डालती हैं।

बेटू को पाकर अम्मा के शिथिल और निरानंद जीवन में नवीन उत्साह का संचार हो गया। वे अपना रोग भूलकर सारे दिन बेटू को खिलाने पिलाने और उसका राई-नोन उतारने में लगी रहतीं। अपना घुटनों का दर्द भूलकर वे बेटू को लादे फिरतीं और फिर शाम को उसके साथ आँखमिचौनी खेलतीं। बेटू के लिए वे उसे दूध पिलाने, शीशी में दूध भरने, शीशी साफ करने, घड़ी देखने आदि काम सीखती हैं। बहू के जाने बाद जब खबर आती है कि बहू को दूसरा लड़का हुआ है, तो अम्मा की छाती पर से मानो एक भारी बोझ दूर हो जाता है। उनके मन का संशय समाप्त हो जाता है। उन्हें पूरा विश्वास हो जाता है कि बेटू अब पूरी तरह से उनका हो गया है।

एक साल बाद बेटू को देखने आई रमा बेटू में घोर परिवर्तन पाती है। वह देखती है कि बेटू दादी अम्मा के हाथ से ही खाना खाता है। रात में दादी अम्मा के अँगूठे पकड़कर सोता है। सारे दिन अम्मा के पीछे-पीछे घूमा करता। शाम को वह गली-मुहल्ले के गंदे बच्चों के साथ खेला करता। हर चीज के लिए जिद करता, न मिलने पर जमीन-आसमान एक कर देता और सारे आंगन में लोटता। यह सब देखकर रमा अवाक रह जाती है और उसे बेटू को दादी अम्मा के पास छोड़ जाने पर बहुत पश्चात्ताप होने लगता है। वह अम्मा से कहती है कि 'अम्मा आपने तो इसे बिगाड़कर धूल कर रखा है।' बहू चूंकि दोनों बच्चों को एक साथ नहीं पाल सकती थी अत: वापस बंबई चली जाती है। बेटू को छोड़ने के साथ-साथ अम्मा को हिदायत देकर जाती है कि वे बेटू की पढ़ाई-लिखाई का उचित प्रबंध करे। परंतु अम्मा अपने ही ढर्रे से चलती रहती हैं।

दो साल बाद जब रमा अपने पति और छोटे बेटे पप्पू के साथ वापस आती है तो वो पप्पू और बेटू में जमीन-आसमान का अंतर पाती है। जहाँ तीन साल का पप्पू अंग्रेजी की छोटी-छोटी कविताए बड़े अदब से बोलता है वहीं बेटू उम्र में जरुर बड़ा हो गया था परंतु उसकी आदते वैसी ही थी। यह सब देखकर रमा बेटू को अपने साथ ले जाने की बात करती है। जिस तरह बेटू को छोड़ने की बात पर अम्मा को विश्वास नहीं हुआ था उसी प्रकार उसे वापस ले जाने की बात पर भी एकबारगी विश्वास नहीं होता। उनका स्वर कॉपने लगता है और वे फफक-फफक कर रो पड़ती हैं। अपना तर्क देते हुए वे कहती हैं कि मै इसे गँवार नहीं रहने दूँगी। बेटू तो उन्हें रामेश्वर से भी ज्यादा प्रिय है, क्यों कि मूल से ब्याज ज्यादा प्यारा होता है। परंतु अब रमा नहीं चाहती थी कि उसका बेटा गाँव में रहकर बिगड़ जाये। अम्मा के नाराज तथा दु:खी होने के बावजूद रमा बेटू को अपने साथ बम्बई लेकर चली जाती है। अम्मा बेटू के उज्जवल भविष्य की खातिर कलेजे पर पत्थर रखकर रमा का प्रस्ताव स्वीकार कर लेती है और समय से समझौता करके चुप रह जाती हैं। लोगों के पूछने पर कहती हैं उनकी उम्र अब बच्चा पालने की नहीं बल्कि पूजा उपासना करने की है।

इस प्रकार अम्मा भरा-पुरा परिवार होते हुए भी गाँव में एकाकी जीवन जीने के लिए मजबूर हो जाती हैं।

२.३ 'मजबूरी' कहानी में उठाई गई समस्या ।

'मजबूरी' वैसे तो एक वयोवृद्ध महिला अम्मा की व्यक्तिगत मजबूरी की कहानी है परंतु लेखिका ने इसके माध्यम से वर्तमान युग की एक ज्वलंत समस्या पर प्रकाश डाला है। यह समस्या है, गाँवो से जीविका की खोज में युवावर्ग का शहरो की और पलायन और इसके परिणामस्वरुप संयुक्त परिवार का विघटन। आज हमारे देश के गाँवो में युवावर्ग के लिए जीवकोपार्जन के बहुत कम अवसर मिलते हैं। गाँवो की अर्थव्यवस्था कृषि-प्रधान है। केवल कृषि के भरोसे जीवन की सारी आवश्यकताएँ पूरी होना नामुमकिन है। अत: नौकरी, व्यापार आदि की तलाश में पढ़े-लिखे और अशिक्षित व्यक्ति भी, गाँवो से शहरों को पलायन कर जाते हैं। गाँवो में रह जाते है, उनके बूढ़े माता-पिता।

यही कहानी गाँव मे रहनेवाली वयोवृद्ध अम्मा की भी है। उनका पुत्र अपनी पत्नी रमा तथा एक पुत्र बेटू के साथ मुंबई में नौकरी करता है। अम्मा के पति वैद्य है। वे अपना औषधालय चलनो में व्यस्त रहते हैं। अम्मा को पुत्र तीन वर्ष बाद गाँव आता है। उनके आने की खुशी में अम्मा अपना रोग भूलाकर उनके स्वागत की तैयारी में लग जाती है। बहू के आने के बाद पता चलता है कि वह फिर से गर्भवती है। बहू रमा दो बच्चो को साथ में पालने में असमर्थता जताती है तथा अपने पुत्र बेटू को अम्मा के पास छोड़ने का प्रस्ताव रखती है। यह सुनकर तो जैसे अम्मा की खुशी का ठिकाना नहीं रहता।

रमा के वापस मुंबई चले जाने के बाद अम्मा बेटू के लिए सारी चीजें सीखती हैं। शीशी साफ करना, उसमें दूध भरना, घड़ी देखना आदि। अम्मा के लाड़-प्यार तथा स्वच्छंद वातावरण में बेटू जिद्दी स्वभाव का बन जाता है। एक साल बाद वापस आई रमा को बेटू की हरकतें अच्छी नहीं लगती। हर चीज खरीदने के लिए जिद्द करना, गली-मुहल्ले के गंदे बच्चों के साथ खेलना, अम्मा का पल्ला पकड़े-पकड़े उनके पीछे-पीछे घूमना आदि बेटू की बुरी आदतों को देखकर रमा को बड़ा ही पश्चाताप होता है। वह दूसरे बच्चो के छोटे होने के कारण बेटू को अपने साथ वापस

नहीं ले जा पाती परंतु अम्मा को बेटू को पढ़ाई-लिखाई का प्रंबध करने की हिदायत दे जाती है। अम्मा ने जिस तरह रामेसुर को पाला था उसी तरह वे बेटू को पालती हैं। अम्मा के अनुसार ये तो बेटू को खेलने कूदने की उमर थी और इस उमर मे वे पढ़ाई का अनावश्यक बोझ डालना उचित नहीं समझती है।

रमा अपने पति एवम् पुत्र पप्पू के साथ दो साल बाद फिर गाँव आती है। अम्मा बडे ही हर्ष के साथ उनका स्वागत करती है। इस बार बेटू को देखकर तो रमा का माथा ही ठनक जाता है। उनका छोटा बेटा स्कूल जाने लगा था। वो अंग्रेजी की छोटी छोटी कविताए बड़े अदब के साथ सुनाता था जबकि बेटू में कोई परिवर्तन उसे नहीं नजर आता है। उसके कई बार कहने के बाद भी अम्मा ने उसके स्कूल जाने की कोई व्यवस्था नहीं की थी। रमा को बेटू का भविष्य गाँव मे अंधकारमय लगता है। वह बेटू को अपने साथ ले जाने का फैसला कर लेती है। पहले तो अम्मा को इस बात से धक्का लगता है परंतु बेटू के उज्जवल भविष्य के लिए वह भी समझौता करने के लिए तैयार हो जाती है।

इस प्रकार अम्मा जैसी मजबूरी के शिकार गाँवों में रहनेवाले अनेकों वयोवृद्ध हैं। वे अपने नाती-पोतों को साथ रखकर अपने अभिशप्त एकाकी जीवन में हर्षोल्लास के कुछ क्षण लाना चाहते हैं। पर यहाँ भी मजबूरी उनका पीछा नहीं छोड़ती। नाती-पोतों की पढ़ाई-लिखाई का उचित प्रबंध गाँवो में नहीं होता। अतः न चाहते हुए भी उनके माता-पिता उन्हें अपनी देख-रेख में पढ़ा-लिखाकर उनका भविष्य बनाने के लिए अपने साथ ले जाते हैं और उनके बूढ़े दादा-दादी एकाकी जीवन बिताने के लिए गाँव में ही रह जाते हैं। यही मजबूरी कहानी की प्रमुख समस्या है।

२.४ 'मजबूरी कहानी की अम्मा वात्सल्य की संक्षिप्त प्रतिमा है। वात्सल्य की प्रतिमा अम्मा ।

'मजबूरी' एक वात्सल्यमयी वृद्धा के जीवन की अदम्य ललक-लालसा की मर्मस्पर्शी कहानी है। बूढ़ी अम्मा वात्सल्य की संक्षिप्त प्रतिमा है । उसका नन्हा-सा पोता बेटू आ रहा है। वह खुशी से फूली नही समा रही है। जोर-जोर से लोरी गाती है लाल मिट्टी से कमरा लीपती है गठिया की तकलीफ से जुड़ी थी, दर्द से तन-मन की सुध नहीं थी, लेकिन बेटू का आना उसकी सारी तकलीफ जैसे हर लेता है। बेटा तीन साल से बाहर मुम्बई में नौकरी कर रहा है। वह अम्मा से दूर है। अम्मा सोचती है कि अगर उसके पास लाखों का धन होता तो बेटा क्यों दूर रहता ?

तांगे की आवाज सुनकर अम्मा पागलों की तरह दरवाजे की और दौड़ पड़ती है। बेटे रामेश्वर की गोद से बच्चे को ऐसे छीनती है जैसे किसी चोर उचक्के के हाथ से अपने बच्चे को छीन रही हो। इतना प्यार और शारीरिक कष्ट पाकर बच्चा रो उठता है। अम्मा की बहू गर्भवती थी। उसने अम्मा से कहा -

"अम्मा, इस बार बेटू को आप ही रखेंगी" जैसे भी हो मैं यहाँ हूँ तब तक उसे अपने से हिला लीजिए।"

अम्मा आँखे फाड़कर ऐसे देखती हैं मानो जो कुछ सुन रही हैं उस पर विश्वास करे या नहीं। अम्मा बेटू को अपने पास रखती हैं। बड़ी खुश होती हैं लोगो को बता-बताकर। दादी के ज्यादा प्यार-दुलार में बेटू स्वच्छंद हो जाता है। यह बात बेटू की माँ रमा को पसंद नहीं। वह

अम्मा से कहती है, "अम्मा, आपने तो इसे बिगाड़कर धूल कर रखा है, इस तरह कैसे चलेगा?"

पर अम्मा को इसकी परवाह नहीं, वह तो अपने पुराने ढर्रे से चलती है। रमा का रुख सख्त होता जाता है कि बेटू अम्मा के लाड़ प्यार में बिगड़ता जा रहा है। रमा का छोटा बच्चा पप्पू स्कूल जाने लगा है, पर बेटू अम्मा का पल्ला पकड़े-पकड़े घूमता है। अम्मा अपने ढंग से काम करती है। वह रमा को बताती है,

"मूल से ब्याज ज्यादा प्यारा होता है, इसे तो मैं खूब पढ़ाऊँगी, तू चिन्ता मत कर बहू, पर इसे ले जाने की बात मत कर..."

लेकिन बाते बनती नहीं। बेटू को जाना है। बेटू के जाने के बारे में कोई भी बात ऐसी लगती है जैसे किसी ने "उनके कलेजे पर गरम सलाख दाग दी हो।" यह पूछने पर कि अम्मा बिना बेटू के कैसे रहेगी? वह अपनी सारी वेदना छिपाकर दार्शनिक ढ़ंग से कहती है :

"रह नहीं सकती तो भेजती क्यों। अब यह कोई बच्चे पालने की उमर है भला? जिसकी धाती उसको सौंपी? बूढ़ापा है, कुछ भजन-पूजन ही कर लूँ। उसके मारे तो मेरा सब कुछ छूट गया था।"

दर्शनिकता का भाव अम्मा प्रदर्शित अवश्य करती है, किन्तु मन में वात्सल्य की कभी भी तृप्त न होने वाली लालसा न दबी है और न मिटी है। लोरी अब भी गाती है, पर दर्दीले स्वर में गुब्बारे वाले, बुढ़िया के बाल वाले, खिलौने की मिटाई बेचने वाले सबको मुरझाये स्वर में मना कर देती है। यह वेदना-निगलित वात्सल्य बूढ़ी अम्मा का जीवन के प्रति असीम ललक, जिजीविषा को द्योतन करती है। उसकी तथाकथित चिन्ता तो दूर हो गई, पर उसके ह्रदय-सरोवर में स्नेह की लहरें अबाध रुप से उठ रही है।

इस प्रकार लेखिका ने अम्मा जी के माध्यम से वृद्धा स्त्री के मातृत्व एवम् मोह का चित्रण किया हैं।

२.५ निम्नलिखित अवतरण की संदर्भ सहित व्याख्या किजिए :

"अरे पढ़ लेगा बहू, पढ़ लेगा। उमर जायेगी तो पढ़ लेगा। यह मत सोचना कि मैं उसे गँवार ही रहने दूंगी। रामेसुर को भी तो मैंने ही पाला पोसा है, उसे क्या गँवार ही रख दिया? फिर यह तो मुझे और भी प्यारा है। मूल से ब्याज ज्यादा प्यारा होता है, इसे तो में खूब पढ़ाऊंगी।"

संदर्भ : प्रस्तुत अवतरण 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' में संकलित 'मजबूरी' कहानी से लिया गया है। इसकी लेखिका मन्नू भण्डारीजी हैं। इस अवतरण में अम्मा ने अपनी बहू रमा को आश्वस्त करने की कोशिश की है कि वे उसके बेटे को सुशिक्षित बनाने में कोई कसर उठा न रखेंगी। वह तो उन्हें अपने बेटे से भी प्यारा है।

व्याख्या : रमा अपने बेटे बहू को अम्मा के पास परवरिश के लिए छोड़ गई थी। एक साल बाद जब वह मुंबई से लौटकर आई, तो उसने देखा कि अम्मा ने बेटू की पढ़ाई-लिखाई की कोई

व्यवस्था नहीं की थी। उसने चाहा कि बेटू को अपने साथ मुबंई ले जाए, किंतु अम्मा के प्रतिवाद करने पर अपना विचार त्याग दिया। दो साल बाद रमा फिर मुंबई से आई तो देखा कि बेटू में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है न ही उसकी शिक्षा का कोई प्रबंध अम्मा जी ने किया था। बह गाँव के गली-मुहल्ले के गंदे बच्चों के साथ खेलता हुआ बिगड़ता जा रहा था। इस बार उसने जोर देकर बेटू को अपने साथ मुबंई ले जाने का प्रस्ताव रखा तो अम्मा व्यग्र हो उठी। वह रमा से कहती हैं कि जब बेटू की पढ़ने की उम्र होगी तो वह भी पढ़ लेगा। रोमसुर को भी तो उन्होंने ही पाला है। आज रामेसुर शहर में नोकरी करता है। उसे यों ही गँवार छोड़ दिया होता तो आज वो चार पैसे कमाने लायक नहीं बनता। फिर बेटू तो उनका पोता है। लोगों को मूल रकम से उसका ब्याज ज्यादा प्यारा होता है, उसी प्रकार बेटू उन्हें अपने बेटे रामेसूर से भी अधिक प्यारा है। उसे सुशिक्षित बनाने में वो कोई कसर न उठा रखेंगी। उसकी पढ़ाई-लिखाई के बारे में रमा चिंता न करे और उसे अपने साथ ले जाने का विचार छोड़ दे।

विशेष : अम्मा चाहती थीं कि बेटू हमेशा उनके पास बना रहे, जिससे उनका अकेलापन दूर हो। इसीलिए उन्होंने रमा को बेटू की पढ़ाई के बारे में आश्वस्त करना चाहा। वास्तव में वे बेटू की शिक्षा का उचित प्रबंध करने में असमर्थ थीं।

३

तीसरा आदमी

इकाई की रूपरेखा :

३.० उद्देश्य
३.१ प्रस्तावना
३.२ 'तीसरा आदमी' कहानी की कथावस्तु ।
३.३ कहानी के तत्त्वो के आधार पर 'तीसरा आदमी' कहानी की समीक्षा
३.४ 'तीसरा आदमी' कहानी में उद्घाटित पुरुष मनोग्रंथि :
३.५ संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :

३.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई में हम 'तीसरा आदमी' कहानी का मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप-

- इस कहानी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे।
- कहानी के तत्वों के आधार पर इस कहानी की समीक्षा कर सकेंगे।
- कहानी में उद्घाटित पुरूष मनोग्रंथि: के बारे में जान सकेंगे।
- कहानी के मूलपाठ की कुछ महत्वपूर्ण पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।

३.१ प्रस्तावना

प्रस्तुत कहानी हीनभाव से ग्रस्त एवम् आत्मविश्वास से शून्य सतीश की कहानी है। सतीश और शकुन का दाम्पत्य जीवन प्रेम भरा था। विवाह के तीन वर्ष बाद दोनों के मन में किसी तिसरे (संतान) को लाने की अदम्य इच्छा जागृत हुई। परंतु दो वर्ष बीत जाने के बाद भी बच्चा न होना और सतीश का डॉक्टर को न दिखाना दोनों के बीच में अनचाही दीवार खड़ी कर देता है। सतीश स्वयं को पौरूषहीन समझने लगता है और उसकी यह पीड़ा और बढ़ जाती है जब 'आलोक', शकुन का मित्र उनके घर मेहमान बनकर आता है। आलोक के व्यक्तित्व, उसके व्यवहार से सतीश के अहं को चोट लगती है। उसे आलोक और शकुन के बीच अनैतिक संबंध होने का शक होता है। एक क्षण वह तुच्छता से जन्में सारे संदेहों को पोछ देना चाहता है तो दूसरे ही क्षण स्वयं उन संदेहों में घिर जाता है। कई बार सतीश को अपनी गलती का एहसास भी होता है परन्तु उसका पुरूषत्व, उसकी कुंठा बार-बार उस पर हावी हो जाती है। फलस्वरुप उनके जीवन में दरार बढ़ती जाती है।

३.२ 'तीसरा आदमी' कहानी की कथावस्तु ।

'तीसरा आदमी' कहानी के मुख्य पात्र सतीश और शकुन पती-पत्नी है। सतीश हीनभाव से ग्रस्त एवम् आत्मविश्वास से शून्य है। हालाकि सतीश पहले से ऐसा नहीं था पर डॉक्टरी जाँच न कराने के भय से अनके कुंठाओं का शिकार होता चला जाता है।

शुरुआत में सतीश और शकुन का दाम्पत्य जीवन बहुत सुखी था। उनके एक कमरे वाले मकान में प्रेम की कोई कमी न थी। शकुन को अपने घर में तीसरे आदमी की उपस्थिति असह्य हो जाती थी क्योंकि जब कोई भी आ जाता, ते उसके सोने के लिए अलग जगह नहीं रह जाती और सोते समय शकुन से अलगाव नहीं सहा जाता था। विवाह के तीन वर्ष बाद दोनों ने अपने बीच किसी तीसरे को लाने की मनुहार की। समय बीतता गया। वे प्रतीक्षा करते और फिर नये सिरे से निराश हो जाते। इसी बीच शकुन को हायर सेकण्डरी स्कूल में नौकरी मिल गई। दो-तीन महीने नये काम के बीच वह कुछ भूली रही परंतु धीरे-धीरे यह निराशा शकुन को भीतर से तोड़ती जा रही थी। शकुन कुछ सोचकर सतीश से बिना बताए डॉक्टर के पास जाती है। डॉक्टर शकुन के चेकअप के बाद सतीश को भी बुलाने के लिए कहते है। सतीश डॉक्टर के पास जाने से इन्कार कर देता है और तब से ही उसके मन में नाना प्रकार की क्रियाएँ-प्रतिक्रियाएँ जन्म लेने लगती हैं।

सतीश स्वयं को पौरुषहीन समझने लगता है। यही-भावना सतीश को इतना प्रताड़ित करती है कि हर बात में, हर चीज में उसे प्रतारणा ही दृष्टिगोचर होती है। शकुन उसे बड़ी अपरिचित और पराई सी लगने लगती है। उसे अपने और शकुन के बीच बढ़ती दूरी दिखाई देने लगती है। उसे शकुन की हर बात, हर क्रिया विचित्र और स्नहेहीन लगने लगती है। उसे लगता है कि "सारा शरीर सतीश की बाहों में छोड़कर भी शकुन कहीं और रहती है।" इस प्रकार संशय और द्वंद्व, शकुन के दुख से दु:खी और एक अनजानी आशंका से त्रस्त सतीश बस एक ही बात महसूस करता है कि शकुन उससे दूर होती जा रही है - उसके शरीर से भी और मन से भी।

सतीश की पीड़ा यही समाप्त नही होती है। यह अपने उच्चतम अवस्था में तब पहुँच जाती है जब 'आलोक', शकुन का मित्र उनके घर मेहमान बनकर आता है। आलोक का स्वस्थ शरीर देखकर सतीश के मन में स्वयं के प्रति और हीन भावना आ जाती है। सतीश स्वयं को उनके समाने बहुत ही सहज बनाने की कोशिश करता है पर सफल नहीं होता। अपने भीतर की हीन भावना उसे शंकालू होने पर मजबूर कर देती है। वह अपनी पत्नी शकुन पर संदेह करने लगता है। उसके आलोक और शकुन के बीच अनैतिक संबंध होने का शक होता है। इसी शक के चलते वह दफ्तर से तबीयत न ठीक होने बहाना करके आधे दिन में ही निकल जाता है। वह शकुन और आलोक को रंगे हाथों पकड़ना चाहता है। कई बार वह सोचता भी है कि शायद यह उसका अपना ही कॉम्पलेक्स है, जिसने उसे इतना शंकालू, ओछा और कुछ हद तक कमीना भी बना दिया। अपनी ऐसी हरकतों से तो कभी-कभी उसे स्वयं भी विश्वास होने लगता कि उसका भय कही सच ही है, वरना यह सब क्यों हो। परंतु उसकी शकां करने की प्रवृत्ति इन विचांरो को ज्यासा देर तक टिकने नहीं देती।

सतीश दफ्तर से आधे दिन में चला तो आता है परंतु चाहकर भी अपने घर का दरवाजा नहीं खटखटा पाता। दरवाजे और खिड़कियाँ भीतर से बंद देखकर उसके विचारों को और पुष्टि मिलती है। सतीश अपने समय पर ही अपने घर जाता है। शकुन और आलोक को देखकर उसे लगता है कि दोनो एक्टिंग कर रहे हैं। जब शकुन यह बताती है कि वो दिन भर खाना बना रही थी तब सतीश को अपनी सोच पर पछतावा होता है। कहीं न कही वह जानता है कि शकुन सही है पर उसकी दुर्बलता उसे शकुन पर शक करने को मजबूर कर देती है। आलोक को छोड़ने स्वयं सतीश जाता है। वह शकुन से भी साथ चलने को कहता है परंतु शकुन घर ठीक करने और कापियाँ देखने का बहाना कर मना कर देती है। अब सतीश को शकुन बड़ी ही भोली, सरल और प्यारी लगने लगती है। वह सुबह से अब तक की सारी बातें याद कर डालता है। उसे एक भी ऐसी बात नजर नहीं आती जहाँ कुछ हो जिसे आधार बनाकर यों कष्ट पाए। यह उसकी हीन भावना ही है जो उसे हर बात के दस-दस अर्थ लगाने को मजबूर कर देती है।

सतीश आलोक को छोड़कर आता है और सोचता है कि शकुन को बहुत प्यार करेगा। यदि उसका काम पूरा नहीं होगा तो वह हाथ बंटा देगा। लेकिन सतीश जैसे ही घर में आता है वह देखता है बण्डल भी दिवान के नीचे जैसे का तैसा बंधा पड़ा था और शकुन आलोक का नया उपन्यास पढ़ने में डूबी हुई थी।

इस प्रकार लेखिका ने 'तीसरा आदमी' कहानी के अंत में यह संकेत दिया है कि हीन भाव से उपजे विचारो का कोई अंत नही होता और जिसके परिणाम स्वरुप रिश्तो में दरार बढ़ती है।

३.३ कहानी के तत्त्वो के आधार पर 'तीसरा आदमी' कहानी की समीक्षा :

'तीसरा आदमी' एक मनोवैज्ञानिक कहानी है। कहानी का नायक सतीश हीनभाव से ग्रस्त है। कुंठाओं से ग्रस्त व्यक्ति क्या-क्या सोचता और क्या-क्या करता है इसका बड़ा ही दिलचस्प चित्रण लेखिका ने सतीश के माध्यम से किया है। कहानी के प्रमुख तत्त्व निम्नलिखित हैं।

१) कथानक :

सतीश और शकुन कहानी के प्रमुख पात्र हैं। दोनों के दाम्पत्य जीवन प्रेम से भरा है। उनके इस सुखी संसार में दरार आती तब शुरु होती है, जब बहुत चाहते हुए भी वे अपने बीच 'तीसरा आदमी' अर्थात संतान नहीं ला पाते। शकुन इसके लिए डॉक्टर के पास भी जाती है पर सतीश वहाँ जाने से हिचकिचाता है और मन ही मन अनेक बाते सोचने लगता है। आलोक एक लेखक है। उनकी रचनाएँ शकुन को बहुत अच्छी लगती हैं इसलिए उन्हें अपने घर भी बुला लेती है। हीन भाव से ग्रस्त सतीश शकुन और आलोक के मध्य अनैतिक संबंध होने की बातें सोचने लगता है। शकुन का अच्छी तरह से तैयार होना, स्कूल से छूट्टी ले लेना, सतीश को छुट्टी न लेने के लिए कहना, इन छोटी-छोटी बातों से सतीश का अहं चोटिल हो जाता है। उसे लगता है कि शकुन ने हर काम की योजना बहुत सोच समसकर बनायी है। मन के पूरी तरह से न मानने पर

भी वह शकुन पर अपने शक की सुई ला देता है। आलोक का लेखक होना और उसका क्लर्क होना भी उसे खटकता है। कई दिनों से सतीश और शकुन के बीच मनमुटाव चल रहा था और आलोक के आ जाने सतीश को शकुन पर शक करने के लिए वजह मिल जाती है। कई बार सतीश को अपनी गलती का एहसास भी होता है, परंतु उसका पुरुषत्व उसकी कुंठा बार-बार उस पर हावी हो जाती है। फलस्वरुप उनके जीवन में दरार बढ़ती जाती है।

२) भाषा-शैली :

'तीसरा आदमी' कहानी में सरल खड़ीबोली का प्रयोग हुआ है। उर्दू के आम बोलचाल के प्रचलित शब्द भी मिलते हैं। कहानी के सभी पात्र शिक्षित हैं अत: अंग्रेजी के शब्दों भी प्रयोग हुआ है। लोकोत्तियों एवम् मुहावरों के प्रयोग से भाषा में समृद्धि हुई है। जैसे-जीभ खीच लेना, भीतरतक चीर जाना, आरोप लगाना, रंगे हाथों पकडना, भॉप लेना, चोंचले दिखाना आदि।

मिश्रित शैलियों का प्रयोग हुआ है। कहानी लंबी होने के परिणामस्वरुप विविध शैलिंयो को प्रयोग करने का अवसर मिला है। इसमें संवादात्मक, विश्लेषणात्मक शैलियों को अपनाया गया है।

३) पात्र एवम् चरित्र-चित्रण :

'तीसरा आदमी' कहानी में तीन पात्र हैं - सतीश, शकुन और आलोक। सतीश और शकुन पति-पत्नी हैं तथा आलोक शकुन का मित्र। सभी पात्रों का कहानी में अपना अलग महत्त्व है परंतु पूरी कहानी सतीश के विचारों के इर्द-गिर्द घूमती है।

हीनभाव से ग्रस्त और आत्मविश्वास से शून्य सतीश की व्यथा उसकी अपनी ही है। डॉक्टरी जांच की भय से अनेक कुंठाओ का शिकार होता चला जाता है। इसके चलते वह अपनी ही पत्नी पर आलोक के साथ संबंध होने का शक करता है। कई बार वह इस हीनभाव से निकलने की कोशिश भी करता है परंतु उसका पुरुषत्व और अहं उस पर हावी हो जाते है। फलस्वरुप दोनों के रिश्तों में दूरियाँ बढ़ती जाती है।

शकुन एक समझदार एवम् परंपरावादी स्त्री है। वह अपने और अपने पति के बीच किसी तीसरे व्यक्ति को सह नही पाती। शकुन को सतीश से मात्र यह शिकायत है कि उसने डॉक्टर को नहीं दिखाया। सतीश का विरोध करने के बजाए वह चुप्पी साध लेती हैं। अपने लेखक मित्र आलोक के साथ वो बड़ी शिष्टता से पेश आती है। कुल मिलाकर शकुन को एक अच्छी पत्नी एवम् समझदार व्यक्ति के रुप में चित्रित किया गया है।

आलोक एक लेखक है। कहानी में आलोक 'तीसरा आदमी' के रुप में उपस्थित है। आलोक नम्र एवम् मिलनसार व्यक्ति है। शकुन के एक बुलावे पर भी वह उसके यहाँ जाता है। उसका स्वस्थ शरीर और बातचीत का अंदाज सतीश के काम्पलेक्स को और बढ़ा देता है।

४) संवाद :

पात्रों के मन:स्थिति दर्शाते में संवाद सहायक होते है। 'तीसरा आदमी' कहानी में पात्रो के संवाद से अधिक पात्रों के मन मे उपजे विचारों को स्थान मिला है। पात्रों के संवाद रोचक एवम सरल है। संवाद संक्षिप्त होने के साथ-साथ कथानक को गति प्रदान करने में सहायक सिद्ध हुए हैं। उदाहरणार्थ -

"सुनो आज मैं डॉक्टर के पास गई थी।"
"क्यो ?"
"इधर कुछ दिनों से मुझे अपनी तबीयत ठीक नहीं लग रही थी, सोचा, दिखाऊँ।"
"मुझे तो तुमने अपनी तबीयत के बारे में कुछ नहीं बताया ?"
"बताने जैसा कुछ होता तो बता देती, बस यों ही जरा भारीपनसा लगता था।"
"क्या बताया डॉक्टरे ने ?"
"कोई खास बात नहीं। नही, खुश होने जैसी कोई बात नहीं है।"

५) उद्देश्य :

'तीसरा आदमी' कहानी का उद्देश्य बड़ा ही स्पष्ट है। लेखिका ने दिखाना चाहा है कि किस प्रकार पुरुषत्व एवम् अहमभाव हंसते-खेलते दाम्पत्य जीवन में खटास पैदा कर देता है। कुंठाओं एवम् मनोग्रंथियों से मुक्त व्यक्तित्व समाज के लिए प्रकाश स्तंभ है। किन्तु इससे मुक्त होना बहुत सरल नही है। प्रेम, यौन आदि संबंधो में शंका, ईर्ष्या, प्रतिस्पर्धा का होना स्वाभाविक है। कुंठाओ में उलझे हुए और पीड़ित व्यक्ति की स्थिति सतीश की तरह अत्यंत दयनीय हो जाती है। इस मनोवैज्ञानिक कहानी में अपने उद्देश्य को कलात्मक ढंग से प्रतिपादित करने में मन्नू भंडारी पूर्णत: सफल हुई हैं।

३.४ 'तीसरा आदमी' कहानी में उद्घाटित पुरुष मनोग्रंथि :

'तीसरा आदमी' एक अत्यंत सशक्त तथा मर्मान्तक मनोवैज्ञानिक कहानी है। लेखिका ने पुरुष की मनोग्रंथि का उद्घाटन बड़ी गहराई से किया हैं। वास्तव में, आधुनिक मनोविज्ञान ने मनोग्रंथि का उद्घाटन कर मनुष्य की जीवनधारा को प्रभावित करने वाले सूत्र की भूमिका का उद्घाटन किया है। जो व्यक्ति कुंठाओ में उलझा हुआ और पीड़ित है उसकी स्थिति अत्यंत दयनीय हो जाती है। इसी मनोग्रंथि का प्रतिपादन अत्यंत कलात्मक ढंग से लेखिका ने इस कहानी में किया है।

सतीश और शकुन सुखी दंपत्ति है। पाँच वर्ष का उनका वैवाहिक जीवन खुशियों से भरा है। परस्पर विश्वास, आत्म-विश्वास, स्नेह उनके एक छोटे से पर सुखी घर में बिखरे पड़े हैं। इसी बीच उनके बीच एक मोड़ आता है, जो दीवार-सा बनकर खड़ा हो जाता है। संतानोत्पत्ति की दृष्टि से शकुन डॉक्टर के पास जाती है। डॉक्टर की राय के अनुसार सतीश को भी डॉ. के पास जान चाहिए। इसी बात पर सतीश के मन में नाना विचार और प्रतिक्रियाएँ पैदा होन लगती है। उसे अपने पर संदेह होने लगता है। विवाह के तीन साल बाद दोनो ने अपने

बीच "किसी तीसरे आदमी" (संतान) को लाने की मनुहार की थी। तीन साल तक अपने को जब्त किया अब और नही। समय बीतता जाता है, शकुन को नौकरी भी मिल जाती है, पर यह पक्ष अनछुआ रह जाता है। सतीश को महसूस होता है कि यह 'निराशा' उसे भीतर-ही-भीतर तोड़ती-मरोड़ती चली जा रही है।

सतीश की आत्मग्लानि और पीड़ा की पराकाष्ठा तब होती है जब एक तीसरा आदमी 'आलोक' शकुन के निमंत्रण पर उसके घर मेहमान बनकर आता है। सतीश का मन कुंठाग्रस्त है, इसलिए आलोक के प्रति उसमें "हल्की सी खिन्नता" छाई होती है। यही नही कि सतीश के मन में शकुन के प्रति ही शंकालु और अनुदार भाव हैं, वह स्वयं पर भी संदेह करता है। संभव है कि वह शकुन को 'माँ' बनाने योग्य नही। यदी शकुन किसी और प्रकार मातृत्व प्राप्त करा ले तो हर्ज ही क्या है ? किन्तु नहीं, ऐसी तटस्थ उदारता लाना उसके लिए संभव नहीं।

वह मन में घुलता रहता है। आलोक के स्वस्थ शरीर का ध्यान कर उसमें हीनता पैदा होती है। उसकी कुंठा उसे शकुन-आलोक के बीच यौन संबंध तक होने की संभावना तक सोचने के लिए उसे प्रेरित करती है। सतीश की मनोग्रंथि उसका पीछा नहीं छोड़ती। वह आत्म ग्लानि से पीड़ित है। शकुन के चरित्र पर संदेह करते हुए वह इस सीमा तक सोचता है कि उसे शकुन को छोड़ना पड़ेगा। वह मन-ही-मन आलोक को गाली देता है - 'साला शोहदा कहीं का'। शकुन के 'ति-रिया चरित्र' का ख्याल आता है, पर खुद 'कमजोर, दुर्बल, बिल्कुल दुर्बल, नामर्द महसूस करता है।' उसका मन 'ग्लानि और वितृष्णा' से भर उठता है। बहरहाल, इस द्वद्वात्मक पीड़ा से व्यथित सतीश को निजात तब मिलती है जब आलोक चला जाता है । जिस असह्य बोझ के नीचे व तिलमिला रहा था, वह सब एकाएक समाप्त हो गई। अब शकुन उसे 'बड़ी भोली, बड़ी सरल और प्यारी सी' लगती है। फिर मन में ढेर लाड़ उमड़ने लगता है।

स्पष्ट है कि सतीश की सारी क्रियाये, प्रतिक्रियाएँ, रोष, ग्लानि, हीनता आदि इसके कुंठा ग्रस्त मन के प्रक्षेपण (प्रोजेक्शन) के अतिरिक्त कुछ नहीं है। लेखिका ने सतीश के व्यथित और असामान्य व्यवहार के चित्रण द्वारा यह दिखाने का प्रयास किया है कि मनोग्रंथि अजीबो-गरीब गुल खिलाती है। चेतन मन दब जाता है, अवचेतन मन में दबी भावनाओं प्रबल होकर उठती हैं और मनुष्य को पीड़ित-प्रताड़ित करती हैं। शकुन की संतान-प्राप्ति की स्वाभाविक इच्छा सतीश के कुंठाग्रस्त जीवन स्वयं के लिए तथा संबंधित व्यक्तियों के लिए अभिशाप बन जाता हैं।

३.५ संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :

"संदर्भ और इन्द्र से ग्रस्त, शकुन के दु:ख से दु:खी और एक अंजान आशंका से त्रस्त सतीश बस एक ही बात महसूस करता कि शकुन उससे दूर होती जा रही है-उसके शरीर से भी और मन से भी।"

संदर्भ : उपर्युक्त वाक्यांश 'तीसरा आदमी' कहानी से लिया गया है। इस कहानी की लेखिका मन्नू भण्डारी जी हैं। यह एक मनोवैज्ञानिक कहानी है। इसमें लेखिका ने हीन मनोग्रंथि से पीड़ित

व्यक्ति की व्यथा का चित्रण किया है। कहानी का नायक सतीश हीन भाव से पीड़ित है। उसकी यही हीन भावना उसके तीन साल के सुखी वैवाहिक जीवन में दरार डाल देती है।

व्याख्या : सतीश और शकुन सुखी दंपत्ति हैं। विवाह के तीन वर्ष पश्चात् वे अपने बीच तीसरा आदमी अर्थात संतान लाना चाहते हैं परंतु अनेक प्रयासों के पश्चात् भी वे सफल नहीं हो पाते। सतीश को यह बहुत गंभीर समस्या नहीं लगती थी क्योंकि उसने कई ऐसे लोगों को देखा था जिनके विवाह के पाँच-पाँच, सात-सात साल बाद बच्चे हुए। शकुन की माँ बनने की स्वाभाविक इच्छा उसे डॉक्टर के पास ले जाती है। शकुन को देखने के बाद डॉक्टर सतीश को भी लाने के लिए कहते हैं। सतीश यह कहकर डॉक्टर के पास जाने से इन्कार कर देता है कि उसे कुछ नहीं हुआ है। डॉक्टर को न दिखाने पर शकुन उससे किसी भी तरह का प्रतिकार नहीं करती है। हाँ चुप्पी अवश्य साध लेती है। सतीश को शकुन बहुत अपरिचित और पराई सी लगने लगती है। सतीश शकुन के दुःख को समझता है। कई बार वो डॉक्टर के पास जाने की सोचता भी है। परंतु संशय से ग्रस्त सतीश वहाँ जाने की हिम्मत नहीं कर पाता। वो खुद की कमी दूर करने के बजाए शकुन पर ही संदेह करने लगता है। शकुन अपना सारा शरीर सतीश की बाहों मे छोड़कर मन से कहीं और रहती है। सतीश बहुत कोशिश करता दोनों की दूरियाँ कम करने की परंतु मन के किसी कोने में छिपा हुआ उसका भय फैलता जाता और उसके सारे निश्चय डिग जाते। कोई तीसरा प्राणी उसके बीच आ जाता, तो वे कितने पास आ जाते। उसके अभाव में, उसकी अनुपस्थिति में दिनो-दिन वे दूर-दूर होते जाते हैं। सतीश को यह अहसास होने लगता है कि उसका वैवाहिक प्रेम भरा जीवन पहले की तरह नहीं रह गया। शकुन जिससे वह प्राणों से भी ज्यादा प्यार करता है वह उसके शरीर और मन दोनों से दूर चली जा रही है।

विशेष : सतीश को इस बात का भय है कि कहीं डॉक्टर उसे संतान उत्पत्ति के लिए असमर्थ न कह दे। यही डर उसके भीतर अवचेतन मन में दब जाता है और विभिन्न विचारों के माध्यम से बाहर आता है।

४

नई नौकरी

इकाई की रूपरेखा :

४.० उद्देश्य
४.१ प्रस्तावना
४.२ 'नई नौकरी' कहानी की कथावस्तु
४.३ 'नई नौकरी' कहानी के शीर्षक की सार्थकता ।
४.४ 'नई नौकरी' कहानी में रमा के तनाव और घुटती हुई भावनाओं का चित्रण
४.५ संदर्भ सहित व्याख्या किजिए :

४.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई में 'नई नौकरी' कहानी का मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप-

- इस कहानी की कथावस्तू का विश्लेषण कर सकेंगे।
- 'नई नौकरी' कहानी के शीर्षक की सार्थकता पर अध्ययन कर सकेंगे।
- कहानी की प्रमुख पात्र रमा के चरित्र की विशेषताओं को जान सकेंगे।
- कहानी के मूलपाठ पर आधारित कुछ महत्वपूर्ण पंक्तियों की संदर्भसहित व्याख्या करेंगे।

४.१ प्रस्तावना

प्रस्तुत कहानी कुन्दन को विदेशी कंपनी में लगी नई नौकरी से जुड़ी हुई है। नई नौकरी में कुन्दन का भविष्य उज्ज्वल था। उसके कई सपने उससे जुड़े हुए थे। कुन्दन की पत्नी रमा कॉलेज में इतिहास की लेक्चरर थी। कुन्दन की नई नौकरी के कारण रमा का काम अधिक बढ़ जाता है। पार्टियों में जाना, घर के डेकोरेशन के लिए सामान खरीदना, बेटे बन्टी को पढ़ाना, अपने लेक्चर की तैयारी करना ये सारे काम एक साथ उससे नही हो पाते। अत: महात्त्वाकांक्षी कुंदन के भविष्य को संवारने के लिए रमा कॉलेज की नौकरी से इस्तीफा दे देती है। उसका कार्यक्षेत्र सिर्फ घर की चार दीवारी तक सिमट कर रह जाता है। अर्थ की दृष्टि से पराधीन होकर उसका व्यक्तित्व भी संकुलित हो जाता है तथा उसके और कुन्दन के बीच बराबरी का रिश्ता खत्म होकर पति, सहयोगी एवम् मित्र की अपेक्षा बॉस के रूप में स्थापित हो जाता है। वह न तो इसका विरोध कर पाती है और न ही अपने व्यक्तित्व को बचा पाती है। इस प्रकार धन और पद के आकर्षण में कुन्दन बहुत आगे बढ़ जाता है और रमा अपने पति को उन्नति में अपनी इच्छाओं को तिरोहित कर बस टूट-टूटकर जीती रहती है।

४.२ 'नई नौकरी' कहानी की कथावस्तु :

'नई नौकरी' कहानी शिक्षित, आर्थिक रुप से स्वतंत्र लेकिन फिर भी परिस्थिति के आगे समर्पण करने को मजबूर आज की आधुनिक स्त्री की स्थिति को उजागर करती है। रमा और कुन्दन दोनों पति-पत्नी नौकरी करते हैं। रमा महाविद्यालय में लेक्चरर और कुन्दन एक मारवाडी कन्सर्न में काम करता था। कुन्दन को डॉ. फिशर मारवाडी कन्सर्न से मुक्ति दिलाकर एक बड़ी विदेशी कंपनी में नई नौकरी दिला देते हैं। बस यहीं से रमा के तनाव की कहानी शुरु हो जाती है। वह देखती है कि नई नौकरी के साथ कुन्दन की सारी पर्सनेलिटी ही नहीं, बात करने का लहजा तक बदल गया है। सारे व्यक्तित्व में एक आत्मविश्वास सा आ गया है। रोब जैसे टपक पड़ता है।

नई नौकरी मिलने के बाद कुन्दन की जिंदगी का पैटर्न भी बदलता जा रहा था। उसे दो-तीन क्लबों का मेम्बर बनना पड़ा। आये दिन दूसरी कम्पनियों के बड़े-बड़े अफसरों को एण्टरटेन करना पड़ता। विदेशियों को हिन्दुस्तानी खाना खिलाने के बहाने उसे घर में भी बड़ी-बड़ी पार्टियाँ करनी पड़ती। वह कम्पनी से मिले अपने फ्लैट को ओरिएण्टल ढंग से सजाना चाहता था जिसमे विदेशियो के लिए नवीनता हो और इन सब चीजों के लिए उसे जरुरत थी अपनी पत्नी रमा की। कुन्दन चाहता था यह काम रमा को करना चाहिए क्योंकि उसकी रुचि बहुत अच्छी थी और वैसे भी यह काम कुन्दन के अनुसार रमा का ही था।

रमा अपनी तरफ से कुन्दन का सहयोग करने की पूरी कोशिश करती पर रमा के पास समय ही नहीं रहता। सवेरे उठकर वह बंटी को तैयार कर स्कूल भेजती। फिर खुद तैयार होती। तैयार होते होते वह नौकर को सारे दिन का काम समझाती। नाश्ता करते-करते लेक्चर तैयार करती। फिर नौ बजे कुन्दन के साथ ही निकल जाती। लौटने पर वह थोडा आराम करती और फिर शाम की तैयारी में लग जाती। शाम को वही बाहर जान होता या घर में ही कोई आता। रात ग्यारह-साढ़े ग्यारह पर वह सोती तो थककर चूर हे जाती। कुन्दन को यह सब अच्छा नहीं लगता। वह कहता,

"डोण्ड बी सिली। पार्टी में कैसे थक जाती हो? गाड़ी में बैठकर जाती हो...खाना-पीना, हँसी-मजाक, इनसे भी कहीं थका जाता है? गाड़ी में बैठकर ले आता हूँ।"

कुन्दन को ये चीजें जितनी आसान लगती थी, रमा के लिए उतनी आसान थी नहीं। कुन्दन की भौतिकवादी दृष्टि उसे अन्दर से तोड़ देती है। उसकी नौकरी, उसका काम कुन्दन के लिए कोई मायने नहीं रखता। कुन्दन को सिर्फ अपना उज्जवल भविष्य दिखाई देता। रमा अपनी सूनी-सूनी आँखो से उसे देखती रहती। उसके मन के भीतरी परतों पर हिस्ट्री के टॉपिक्स तैरते रहते जिन्हे वह जबरन दिमाग से बाहर ठेलने का प्रयत्न करती रहती। कॉलेज में उसे एक पेपर पढ़ना था, जिसे उसने खुद ही ऑफर किया था पर समय के अभाव में तैयार नही कर पाती। बिना तैयारी के पढ़ाने पर उसे बहुत गिल्टी फील होता था। उसे ऐसा लगता जैसे वह लड़कियो को चीट कर रही है। रमा समय की व्यस्तता में अपने बेटे बण्टी की तरफ भी ध्यान नहीं दे पाती जिसके कारण हमेशा फर्स्ट आनेवाला बंटी सेविन्थ आता है। इन सबसे रमा का तनाव बढ़ता ही जाता है। वह कुन्दन से कहती है,

"मैं कॉलेज छोड़ दूँगी। इस तरह काम करने से तो नहीं करना ज्यादा अच्छा है।"

मन ही मन कुन्दन भी यही चाहता था कि रमा नौकरी छोड़ दे तथा अपना समय उसे और बण्टी को दे। परंतु खुलकर यह बात उसने कभी रमा से नहीं की। उसने कभी रमा की नौकरी को अहमियत नहीं दी। उसे तो लगता था कि ऐशिएण्ट हिस्ट्री पढ़ाने में क्या रखा है। विद्यार्थी अगर चोल वंश, चेदि वंश के बारे में न भी जानेंगे तो कौन सी जिन्दगी हराम हो जाएगी।

महत्त्वाकांक्षी कुन्दन के भविष्य के लिए रमा कॉलेज की नौकरी से इस्तीफा दे देती है। अपने व्यक्तित्व को सँवारने की जगह कुन्दन के लिए अपना घर सँवारने लगती है। वर्तमान युग में भले ही स्त्री-पुरुष समानता की बाते की जाती हैं परंतु जब त्याग का अवसर आता है तो निगाहें स्त्रियों की और जम जाती है। अक्सर उनके सपनो की कुचलकर पुरुष अपने प्रगति की राह बनाते हैं। विवाह के पश्चात् स्त्रियों को अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व पति के व्यक्तित्व में विसर्जित करना पड़ता है। यही दशा रमा की भी है। वह भी अपनी इच्छाओ को पति की उन्नति में तिरोहित कर देती है।

४.३ 'नई नौकरी' कहानी के शीर्षक की सार्थकता ।

'नई नौकरी' कहानी कुन्दन को विदेशी कंपनी में नई नौकरी मिलने से जुड़ी हुई है। कुन्दन की पत्नी रमा महाविद्यालय में लेक्चरर के पद पर कार्यरत है। उसे नौकरी करते दस साल हो गए थे। यदि वो अपना थीसिस पूरा कर लेती तो उसका सिलेक्शन ग्रेड में आना निश्चित था परंतु कुन्दन की नई नौकरी मिलने के बाद उसे इसके लिए समय नहीं मिलता। वह अच्छे से अपना पढ़ाया जाने वाले टॉपिक ही नहीं तैयार कर पाती थी फिर थीसिस पूरी करना तो बहुत दूर की बात थी। बिना तैयारी किए पढ़ाना उसे लड़कियों को धोखा देने जैसा लगता था। कुन्दन की नई नौकरी के कारण उसका अपना नौकरी करना मुश्किल हो गया था। उसका सारा समय घर के डेकोरेशन्स में, सामान लाने में, पार्टिया अटेडं करने तथा मेजबानी करने में ही चला जाता था। इन सब चीजों के बीच वह अपनी नौकरी पर ध्यान नहीं दे पाती।

नई नौकरी मिलने पर कुन्दन की सारी पर्सनेलिटी ही बदल गई थी। उसका बात करने का लहजा बदल चुका था। उसके व्यक्तित्व में रौब और आत्मविश्वास झलकने लगा था। उसे अपनी नई नौकरी के आगे सब तुच्छ लगता था। उसकी अपनी इच्छा तथा महत्त्वकांक्षा सबसे उपर थी। रमा की नौकरी से उसे कुछ लेना-देना नहीं था। उसे रमा की लेक्चररशिप बोरिंग सी लगती है। उसके अनुसार ऐंशिएण्ट हिस्ट्री यदि न भी जाने तो कौन सा जिन्दगी हराम हो जाएगी। वह रमा की नौकरी को महत्त्व नहीं देता। रमा को वह अपने मन की बात जताना नहीं चाहता। उल्टे व रमा पर एहसान जताते हुए कहता है -

"तुम्हें शायद लग रहा है कि मेरी वजह से, इस नई नौकरी की वजह से, तुम्हे अपना काम छोड़ना पड रहा है...पर यह तो सोचो, मुझे ही इस नौकरी में क्या दिलचस्पी है, तुम्हारे लिए बण्टी के लिए..."

कुन्दन चाहता था कि रमा उसकी तरक्की को अपनी तरक्की समझे, उसके संतोष को अपना संतोष समझे। उसे लगता था कि पैसा और भविष्य सिर्फ उसकी नौकरी में है इसलिए वह चाहता था कि रमा नौकरी छोड़ दे और अपना सारा समय और ध्यान घर की ओर लगाए। वह हमेशा अपने भविष्य के बारे में सोचता कि किस तरह से रोब पटकाए कि ड़ाइरेक्टर की नजरों में जम जाए। एक बार ये लोग इम्प्रेस हो जाएँ तो रास्ता साफ हो जाए। रमा के विषय में उसके विचार बदल जाते हैं। उसे लगता है रमा को नौकरी करने के बजाए खूब किताबें पढ़े, पत्रिकाएँ

पढ़े, छोटे मोटे क्लासेस अटेण्ड करे अपने बच्चे को पढ़ाए। रमा बहुत कोशिश करती है सारे कामों को समय पर निपटाने की पर सफल नही हो पाती। अंत में सभी काम को ईमानदारी से न कर पाने के कारण वह नौकरी छोड़ने का फैसला करती है और महाविद्यालय में इस्तीफा दे देती है।

इस प्रकार कुन्दन की नई नौकरी के चलते रमा को अपनी पुरानी नौकरी छोड़नी पड़ती है। अपने पति के भविष्य और तरक्की के आगे वह अपनी इच्छाओं, भावनाओं, तथा कैरियर को तिरोहित कर देती है। उसे लगता है कि नई नौकरी पाने के बाद कुन्दन उसे पीछे छोड़कर आगे निकल गया है, बहुत आगे और वह अकेली रह गयी है। नौकरी छोड़ने के बाद रमा का व्यक्तित्व, उसका कार्यक्षेत्र घर की चार दीवारी में सिमट जाता है। अर्थ की दृष्टि से पराधीन होने पर उसका स्वतन्त्र व्यक्तित्व भी समाप्त हो जाता है। वह न तो विरोध कर पाती है और नही अपने व्यक्तित्व को बचा पाती है।

अत: कहा जा सकता है कि पूरी कहानी कुन्दन की नई नौकरी के इर्द-गिर्द ही घूमती है। उसी के कारण रमा तनाव से घिरती है और उसे अपनी नौकरी छोड़नी पड़ती है। कहानी कुन्दन की नई नौकरी मिलने से शुरु होती है और रमा पर अपना परिणाम छोड़कर खत्म होती है। इस प्रकार 'नई नोकरी' शीर्षक साधारण होत हुए भी पूरे कथ्य को स्पष्ट करने में पूर्णत सफल एवम प्रभावपूर्ण है।

४.४ 'नई नौकरी' कहानी में रमा के तनाव और घुटती हुई भावनाओं का चित्रण

'नई नौकरी' धन-पद-जनित सामाजिक दंभ की मार्मिक कहानी है। इस कहानी में बड़ी नौकरी पाने के बाद कुन्दन चोपड़ा में पैदा हुए उसके असामान्य व्यवहार का बहुत दिलचस्प चित्रण है। उसकी अपनी महत्वकांक्षा ही सब कुछ है। इसके सामने उसे अपनी पत्नी में उत्पन्न तनाव और घुटन नजर नहीं आते।

कुंन्दन को एकाएक विदेशी कंपनी में इतनी बड़ी नौकरी मिल जाएगी उसे कोई उम्मीद न थी। डॉक्टर फिशर ने कुन्दन को सिर्फ बड़ी नौकरी ही नही दी वे उसके जिंदगी का पैटर्न भी तय कर रहे थे। बड़े-बड़े क्लबों का मेंबर बनना, बड़े-बड़े अफसरों को एण्टरटेन करना, विदेशियो को खाना खिलाने के बहाने अपने घर में बड़ी-बड़ी पार्टियां करना ये सब उसकी ड्यूटी के अभिन्न अंग बन जाते है। इस उँची नौकरी का पाना कोई मामूली बात नही थी। इसकी खुशी में कुन्दन और उसकी पत्नी रमा ने दस-बारह दिन तक जश्न मनाया। पैसे से ज्यादा कुन्दन के लिए मारवाड़ी कन्सर्न से मुक्ति पाना महत्त्वूर्ण था। ऐसी-वैसी कन्सर्न में काम कराना उसके टेंपरामेंट के प्रतिकूल था। अब नया माहौल, क्लब, डान्स, डिनर, काकटेल इत्यादि या । कुन्दन को इन सब चीजों ने भले आकर्षित कर लिया था पर रमा को यह सब रास नही आता। पत्नी रमा महसूंस करती है,

"नई नौकरी के साथ कुन्दन की सारी पर्सनलिटी ही नहीं, बात करने का लहजा तक बदल गया है। कितना आत्मविश्वास आ गया है सारे व्यक्तित्व में। रौब जैसे टपक पड़ता है।"

कॉलेज में नौकरी करनेवाली रमा को यह सब अच्छा तो लगता है पर उसका मन नहीं रमता। धन-पद पाने के बाद उसे ऐसा लगता है मानो कुन्दन उसे पीछे छोड़कर बहुत आगे निकल गया है और वह अकेली रह गई है। आकर्षण विकर्षण के बीच वह घुलती सी है। दिनभर

खरीद-फरोख्त, घर के कामों में लगी रहती है। पी.एच.डी. की थीसिस पूरी करने के लिए वक्त नहीं मिलता और अगर कुन्दन से इसकी परेशानी बताती है तो वह अन्यया लेता है -

"क्या बात है, देखता हूँ तुम्हें कोई दिलचस्पी ही नहीं है मेरे राइज में....यू सीम टू बी..."

इसी बड़ी नौकरी को पाने से पहले कुन्दन को रमा के सिवा कोई अच्छा नहीं लगता था। उनका आठ साल का विवाहित जीवन दोस्तों के बीच ईर्ष्या और प्रशंसा का विषय था। परंतु अब उसे घर को 'ओरिएण्टल' ढंग से सजाने, कैक्टस की वैरायटी लगाने, राकरीज बनाने, लान को पर्शियन कार्पेट की तरह उगाने आदि में विशेष रुचि होती है। उसे रमा की थीसिस, उसके इतिहास विषय में कोई रुचि नहीं है। उसे लगता है यदि ऐंशिएण्ट हिस्ट्री न भी पढ़ी जाए तो कौन सा जीना हराम हो जाएगा। उसके सामने सिर्फ एक ही उद्देश्य है -

"बस यार, वो रोब पटकाना है कि डाइरेक्टर के नजरों में जम जाऊँ...एक बार ये लोग इम्प्रेस हो जाएँ तो रास्ता साफ है। डॉ. फिशर तो जब कोई मौका आयेगा, मेरे फेवर में ही राय देंगे।"

लेकिन अब रमा को इन बातों पर अन्दरुनी हँसी आती है। बड़ी नौकरी क्या मिली पुराना कुन्दन ही बदल गया। अपनी तरक्की अपने भविष्य के आगे वो अनजाने ही रमा की भावनाओं को कुचलता जाता है। रमा के कैरियर को सँवारने में वह कोई सहयोग नहीं करता बल्कि वह तो चाहता है कि उसकी तरक्की में रमा अपनी तरक्की समझे, उसके संतोष में अपना संतोष समझे। रमा को वह दौलत से खुश करना चाहता है परंतु वह भूल जाता है कि पति पत्नी के रिश्ते में धन ही सब कुछ नहीं होता। जरुरत होती है एक दूसरे के भावनाओं को समझने की, एक-दूसरे के व्यक्तित्व के विकास में सहयोग देने की। इसी के फलस्वरुप यह नाजुक रिश्ता मजबूत बनता है। नई नौकरी मिलने के बाद कुन्दन की अपेक्षाएँ रमा से बढ़ जाती हैं और इन अपेक्षाओं पर खरी उतरते उतरते रमा तनावग्रस्त जीवन जीने के लिए विवश हो जाती है।

इस प्रकार धन और पद के आकर्षण में आदमी बहुत आगे बढ़ जाता है, लेकिन पीछे छूट जाते है स्नेह और इन्सानियत के स्पंदन। रमा ने सब सुख-सुविधा पाकर भी अपने पुराने कुन्दन को खो दिया । रमा की यही पीड़ा 'नई नौकरी' कहानी में कील की तरह चुभी हुई है, जिसका अत्यंत मार्मिक चित्रण लेखिका ने किया है।

४.५ संदर्भ सहित व्याख्या किजिए :

"यह रवैया मेरे बस की नहीं है। कितना गिल्टी फील करती हूँ। बिना तैयार किए पढ़ाना लगता है जैसे लड़कियों को चीट कर रही हूँ। दो घण्टे का समय भी तो मुझे अपने लिए नहीं मिलता।"

संदर्भ : प्रस्तुत गद्यांश 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' में संकलित 'नई नौकरी' कहानी से लिया गया है। इसकी लेखिका मन्नू भण्डारी जी हैं। उपर्युक्त अवतरण में रमा की पीड़ा को अभिव्यक्त किया गया हैं। समय के अभाव में वह अपनी छात्राओं के साथ न्याय नहीं कर पाती। इसके लिए वह खुद को दोषी मानती है।

व्याख्या : नई नौकरी रमा के पति कुन्दन को मिलती है परंतु उसका भार रमा पर आ जाता है। घर के लिए नया फर्नीचर बनवाने, चुन-चुनकर चीजें खरीदने की जिम्मेदारी रमा के हिस्से आ जाती है। कुन्दन भी यही चाहता था कि ये सारे काम रमा को करने चाहिए। रमा नौकरी नहीं कर रही होती तो उसके लिए ये सारे काम इतने मुश्किल नहीं होते। पर रमा के पास समय ही नहीं रहता। सवेरे उठकर वह अपने बेटे बण्टी को तैयार करती और स्कूल भेजती। फिर खुद तैयार होते होते नौकर को आदेश देती जाती, सारे काम समझाती; नाश्ता करते-करते वह अपना लेक्चर तैयार करती, तैयार तो क्या करती बस सूँघ भर लेती। रमा को पाता था कि लेक्चर लेने के लिए इतना काफी नहीं है। उसे टॉपिक्स का गहन अध्ययन होना चाहिए और इसके लिए समय की आवश्यकता थी। परंतु कॉलेज से आने के बाद वह थोड़ा सा आराम करती फिर शाम की तैयारी में लग जाती। शाम को कहीं बाहर जाने या फिर किसी के घर आने का कार्यक्रम निश्चित रहता था। इन्हीं सबमें रात के ग्यारह-साढ़े ग्यारह बज जाते और वह थककर चूर हो जाती। वह चाहते हुए भी अध्ययन के लिए समय नहीं निकाल पाती। उसे कॉलेज में अपने विषय से संबंधित एक पेपर पढ़ना था, जिसके लिए उसने खुद ही ऑफर किया था यह सोचकर कि इसी बहाने एक टॉपिक तैयार हो जाएगा। पर बिल्कुल भी तैयार नहीं कर पाती और रात में अपनी हालत पर रोने लगती है। कुन्दन से वह दुखी होकर कहती है कि उससे ये सब निभता नहीं है। इससे तो अच्छा है कि वह नौकरी ही छोड़ दे।

विशेष :

१. रमा अपने काम के प्रति ईमानदार है तथा वह अपने कर्तव्य को अच्छी तरह समझती हैं। अपने काम के प्रति उचित न्याय न कर पाने के कारण उसका मन अपराध बोध की भावना से ग्रस्त हो जाता है।
२. भाषा सरल एवम मार्मिक है तथा भावात्मक शैली का प्रयोग है।

❖❖❖❖

५

असामयिक मृत्यु

इकाई की रूपरेखा :

५.० उद्देश्य
५.१ प्रस्तावना
५.२ 'असामयिक मृत्यु' कहानी के दीपू का चरित्र - चित्रण।
५.३ 'असामयिक मृत्यु' कहानी की कथावस्तु
५.४ कहानी के तत्त्वों के आधार पर 'असामयिक मृत्यु' कहानी की समीक्षा
५.५ संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए

५.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई मे हम 'असामयिक मृत्यु' कहानी का मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप-

- इकाई मे आप कहानी के प्रमुख पात्र दीपू के चरित्र की विशेषताएँ जान सकेंगे।
- कहानी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे।
- कहानी के तत्वों के आधार पर 'असामयिक मृत्यु' कहानी की समीक्षा कर सकेंगे।
- कहानी के मूलपाठ की कुछ महत्वपूर्ण पक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।

५.१ प्रस्तावना

असामयिक मृत्यु का प्रमुख पात्र दीपू हैं। दीपू के पिता महेश बाबू की अचानक ह्रदय गति बंद हो जाने से चवालीस वर्ष की उम्र में ही मृत्यु हो जाती है। अचानक से घर की सारी जिम्मेदारी दीपू पर आ जाती है। दीपू एक कुशल अभिनेता था। घर के सभी सदस्य चाहते थे कि दीपू बड़ा होकर एक बहुत अच्छा कलाकार बने। परंतु पिता की अकस्मात् मृत्यु से दीपू के लिए कलाकार बनना एक सपने की तरह हो जाता है। दीपू परिवार पर टूटे दुखों के पहाड़ को पूरी ईमानदारी और मेहनत के साथ दूर करने का प्रयत्न करता है। नाटक में उसके प्राण बसते थे पर वह नाटक छोड़ देता है। चार सौ की तनख्वाह पूरा न पड़ने पर दो घण्टे की एक दूसरी नौकरी करता है। साथ ही वह छोटे भाई-बहन तथा माँ शारदा की जरूरतों का भी खयाल रखता है। वह कुन्तल से प्रेम करता है किन्तु पिता की मृत्यु के बाद वह कभी भी इस बात की

चर्चा नहीं करता है। इस प्रकार महेश बाबू की मृत्यु के पश्चात्त घर की उतरी हुई पटरी रास्ते पर तो आ जाती है परंतु उनके होनहार बेटे दीपू को इन सबके लिए अपने सपनों और अरमानों की बलि चढ़ा देनी पड़ती है।

५.२ 'असामयिक मृत्यु' कहानी के दीपू का चरित्र - चित्रण।

'असामयिक मृत्यु' कहानी का मुख्य पात्र दीपू है। शुरुआत से लेकर अंत तक पूरी कहानी दीपू के इर्द-गिर्द घूमती है। दीपू के पिता महेश बाबू की अचानक मृत्यु हो जाती है। घर का बड़ा पुत्र होने के नाते घर परिवार की सारी जिम्मेदारी दीपू के ऊपर आ जाती है। दीपू के चरित्र की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं।

१) बॉर्न आर्टिस्ट :

दीपू के पिताजी अपने बेटे को बार्न आर्टिस्ट कहते थे। दीपू के भीतर अभिनय की जन्मजात प्रतिमा थी। दीपू बहुत बड़ा अभिनेता बनना चाहता था। दीपक नाटकों में अभिनय भी करता था। उसके अभिनय की प्रशंसा हर कोई करता था। दीपू राजकपूर के संवाद, दिलीप कुमार के संवाद आदि की नकलें इस प्रकार उतारता कि आँखे बन्द कर लो तो पहचान नहीं सकते कि दीपू बोल रहा है या दिलीप कुमार। महेश बाबू कहा करते,

"लोग अपने बेटों को डॉक्टर, इंजीनियर बनाने के सपने देखतें है ... मेरा बेटा कलाकार बनेगा।"

नाटक में दीपू के प्राण बसते थे। परिवारवालों के साथ-साथ तापस बाबू भी इस बात को अच्छी तरह से जानते थे। इसलिए वे दीपू की माँ को कह जाते है कि इसे नाटक करने से मत रोकिए। ऑफिस का काम जितना जरुरी है, नाटक का काम भी उतना ही जरुरी है। तापस बाबू के कहने पर दीपू फिर से नाटक का रिहर्सल शुरु तो करता है परंतु समय के अभाव में तथा दूसरी जिम्मेदारियों को निभाने में वह इस ओर ध्यान नहीं दे पाता और यह सिलसिला वहीं खत्म कर देता है।

२) जिम्मेदारियों को निभानेवाला :

महेश बाबू की अचानक ह्रदय गति बंद हो जाने से मृत्यु हो जाती है। उनकी मृत्यु के पश्चात घर की सारी जिम्मेदारी दीपू पर आ जाती है। दीपू की उम्र अभी इन जिम्मेदारियों की नहीं थी। दीपू के पिता भी उसे इन सब चीजों से दूर ही रखा करते थे क्योंकि वो अपने बेटे को पर्याप्त समय देना चाहते थे ताकि भविष्य में वह बहुत बड़ा कलाकार बन सके। इन सबके बावजूद दीपू अपनी जिम्मेदारियों को अच्छी तरह समझता है। दीपू की माँ शारदा दिल से नहीं चाहती कि उसका बेटा अभी से नौकरी करे। दीपू के मामा उसे समझाते है कि यदि अभी ये नौकरी नहीं करेगा तो बाद में कोई पूछेगा भी नहीं। यह नहीं भूलना चाहिए कि ताजे घाव पर दिखाई गई सहानुभूति ही वजनदार होती है। दीपू इस बात को समझ जाता है और निर्णयात्मक स्वर में कहता है - 'मैं नौकरी करुँगा मामा!' दीपू की नौकरी अपने पिता की जगह चार सौ रुपए प्रतिमाह पर लग जाती है। दीपू धीरे-धीरे घर में अपने पिता की जगह ले लेता है। वह अपने छोटे

भाई बहन की देखरेख भी अपने पिता की तरह करता है। इस प्रकार दीपू अचानक आ गई जिम्मेदारियों को पूरी ईमानदारी के साथ निभाने की कोशिश करता है।

३) मेहनती तथा समझदार :

दीपू मेहनती और समझदार लड़का है। उसे पता है कि पिता की मृत्यु के बाद उसकी सबसे ज्यादा जरुरत उसके परिवार को है। अपने पिता के ऑफिस में वह उनकी जगह नौकरी करने लगता है। रुके हुए मकान को फिर से बनवाना शुरु कर देता है। नौकरी से शाम को आने के बाद महेश बाबू के साथ दूकान में जाता है और मकान बनवाने के सामान लेकर आता। देर रात तक हिसाब लिखता है। सुबह सुबह ऑफिस की फाइलों से जूझा करता। लेकिन इतने मेहनत के बाद भी घर की आर्थिक स्थिति में कोई फर्क नजर नहीं आता। शारदा जब दीपू का हाथ बटाने के लिए कोई नौकरी की जुगाड़ अपने लिए करने के लिए कहती है तो उसे छोड़कर दीपू अपने लिए ही एक और काम का जुगाड़ कर लेता है। शाम को दो घण्टे किसी के यहाँ चिट्ठियाँ टाइप करना, हिसाब लिखना जिसके उसे डेढ़ सौ रुपए और मिलते है। दीपू को घर के खर्च और आमदनी की अच्छी तरह से समझ है। वह अपनी माँ से खर्च में कटौती करने के लिए कहता है क्योंकि पिता के न रहने से आमदनी भी कम हो गई थी। इस प्रकार दीपू अपनी मेहनत तथा समझदारी से घर की गाड़ी को पुनः पटरी पर लाने का प्रयास करता है।

४) प्रेमी ह्रदय :

दीपू अभी युवा है। अतः किसी के लिए उसके ह्रदय में प्रेम का अंकुर फूटना स्वाभाविक है। दीपू अपनी साथी कलाकार कुन्तल से प्रेम करता है। पिछले तीन नाटकों में कुन्तल दीपू की हिरोइन का रोल कर रही थी। अक्सर वह दीपू के घर भी आती थी। दीपू के पिता कहा करते,

'देख लेना, घर में भी यही हिरोइन बनकर आएगी।' दीपू के पिता जब तक जीवित थे तब तक दीपू का प्यार भी बना हुआ था। परंतु पिता की मृत्यु के पश्चात् अचानक से कई सारी जिम्मेदारियों के एक साथ आ जाने से वह इस ओर ध्यान नहीं दे पाता।

दीपू की माँ शारदा को कई दिनों के बाद दीपू के कमरे से कुन्तल की चिट्ठियाँ मिलती है। उन चिट्ठियों से दीपू और कुन्तल के प्रेम की गहराई जानकर शारदा सुन्न सी हो जाती है। अपने जिम्मेदारियों को निभाने के लिए दीपू कुन्तल के प्रति अपनी भावनाओं को दबा देता हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि दीपू एक सफल कलाकार, मेहनती, त्यागी, पारिवारिक, अपनी जिम्मेदारियों को समझनेवाला तथा उनका सफलतापूर्वक निर्वाह करनेवाला चरित्र है।

५.३ 'असामयिक मृत्यु' कहानी की कथावस्तु ।

'असामयिक मृत्यु' कहानी एक परिवार के मुख्य सदस्य की अकस्मात् मृत्यु की और उसके बाद उस परिवार की स्थिति की मर्मांतक कहानी है। मुख्य सदस्य की मृत्यु के पश्चात् किस प्रकार घर का सारा दायित्व बड़े पुत्र पर आ जाता है और उसके अरमानों की बलि चढ़ जाती है इसका बड़ा ही सजीव वर्णन लेखिका ने किया है।

उम्र के चौवालीस वर्ष के पड़ाव पर ही महेश बाबू इस दुनिया से चल बसते है। ऑफिस की कुर्सी पर बैठे-बैठे ही महेश बाबू का हार्ट फेल हो जाता है। उनके परिवार पे अचानक दुखों

का पहाड़ टूट पड़ता है। महेश बाबू अपने सारे काम अधूरे छोड़ जाते है। मकान बनवाने का काम, बडे बेटे दीपू का कैरियर, छोटे बेटे राजू और बेटी मीना की पढ़ाई सब जैसे अचानक ठप हो जाता है।

बड़ा बेटा होने के नाते दीपू पर घर की सारी जिम्मेदारियाँ आ जाती है। दीपू के मामा के कहने पर उसे अपने पिता की जगह नौकरी मिल जाती है। चार सौ रु प्रतिमाह वेतन पर वह नौकरी शुरु कर देता है। शारदा को इस बात का दु:ख होता है कि दीपू इतनी कम उम्र में ही नौकरी करेगा। पर वह भी मजबूर है। दीपू के अलावा कोई है भी नहीं जो घर को सँभाल सके। यदि महेश बाबू जिंदा होते तो दीपू की आज कोई और ही दुनिया होती। दीपू को अभिनय का शौक था। यह प्रतिभा उसमें जन्मजात थी। वह बहुत बड़ा कलाकार बनना चाहता था। उसके पिता महेश बाबू की भी यही इच्छा थी कि उनका बेटा आगे चलकर बहुत बड़ा कलाकार बने और उनका नाम रोशन करे। उन्हें दीपू की कला पर गर्व था। लोग जब दीपू के अभिनय की प्रशंसा करते तो वे कहा करते,

"लोग अपने बेटों को डॉक्टर, इंजीनियर बनाने के सपने देखते हैं . . . . मेरा बेटा कलाकार बनेगा।"

धीरे-धीरे दीपू अपनी जिम्मेदारियों को निभाते हुए अपने पिता की जगह लेने लगता है। ऑफिस में लोग उसे मिस्टर अग्निहोत्री कहकर पुकारते हैं। रुका हुआ मकान फिर से बनने लगता है। मकान बनवाने का सारा काम वह अपने हाथ में ले लेता है। राजू , मीनू की छोटी-छोटी जरुरतों को भी पूरी करता हैं। कभी-कभी वह अपने पिता की नकल भी उतारा करता था,

"मीनू बिटिया, एक कप चाय तो पिलाओ गरमा गरम।"

दीपू अपनी माँ से कहता है कि वह मिस्टर अग्निहोत्री बन गया है। अब तो शारदा को भी कभी-कभी उसमें अपने पति की झलक दिखाई देती है। धीरे-धीरे सब ठीक होने लगता है। पर एक चीज थी जो कहीं दबने लगती है। वह थी दीपू के भीतर का कलाकार। तापस बाबू तथा अन्य मित्रों के कहने पर दीपू फिर से नाटक का रिहर्सल शुरु कर देता है। काम पर से लौटने के बाद राजू और मीना के साथ संवादों की प्रैक्टिस करता है। परंतु घर की जिम्मेदारियों और समय की कमी के कारण वह नाटक छोड़ देता है।

दीपू दिन रात कठिन परिश्रम करता है। राजू और मीनू पर भी अपने पिता की तरह नजर रखता है। मकान बनने के बाद कुछ कमरे मामा के सहयोग से एक व्यापारी को देने की बात भी चलती है। सब कुछ पहले की तरह सामान्य होने लगता है। एक साल बाद तो दीपू की माँ अपने पति की बरसी भी भूल जाती हैं।

महेश बाबू मृत्यु के पश्चात् दीपू के भीतर फिर से जीवित हो गए थे। वे तो जीवित हो गए परंतु दीपू का वास्तविक रुप कहीं खो जाता हैं। घर की जिम्मेदारियों के बोझ के तले उसके भीतर का कलाकार दब सा जाता है। अभिनय के वक्त उसके भीतर उसकी साथी कलाकार कुन्तल के लिए प्रेम का अंकुर फूटा था। वह अंकुर भी दायित्वों को निभाते-निभाते कुम्हला जाता है।

इस प्रकार 'असामायिक मृत्यु' कहानी में लेखिका ने एक व्यक्ति की शारीरिक मृत्यु के परिणामस्वरुप दूसरे व्यक्ति की भावनाओं की मृत्यु का मार्मिक चित्रण किया है।

५.४ कहानी के तत्त्वों के आधार पर 'असामायिक मृत्यु' कहानी की समीक्षा

'असामायिक मृत्यु' महेश बाबू के परिवार की मर्मान्तक कहानी है। महेश बाबू तो चौवालीस वर्ष में ही दुनिया छोड़के चले जाते हैं और अपने पीछे पत्नी तथा तीन बच्चों को अनाथ कर जाते हैं। संक्षेप में 'असामायिक मृत्यु' कहानी के निम्नलिखित तात्त्विक विश्लेषण हैं-

१) कथानक :

महेश बाबू की अचानक ह्रदय गति रुकने से मृत्यु हो जाती है। गति तो उनके ह्रदय की बन्द होती है पर चाल जैसे सारे घर की ठप्प हो जाती है। अपने पीछे वह छोड़ जाते हैं अधूरा मकान, पत्नी तथा अधकचरी उम्र के तीन बच्चे। बड़ा बेटा दीपू कलाकार बनना चाहता था परंतु पिता की मृत्यु के पश्चात् उसे अपना अभिनय छोड़ना पड़ता है। मामा के कहने पर उसे उसके पिता की जगह चार सौ रुपये प्रतिमाह की नौकरी मिल जाती है। मामा सारी योजनाएँ बनाकर चले जाते हैं। दीपू की चार सौ की नौकरी में घर चलाना और पी.एफ के पाँच हजार रुपये में घर बनवाना दोनों ही असम्भव कार्य थे। राजू अपनी माँ शारदा के खर्च में कटौती करने के लिए कहता है। शारदा बहुत हाथ रोककर खर्च करती थी पर किसी न किसी प्रकार से फण्ड में से पैसे निकल ही जाते थे। दीपू अतिरिक्त आमदनी के लिए एक और नौकरी ढूँढ लेता है। जिससे उसे डेढ़ सौ रुपये की अतिरिक्त आय होती है। दीपू ने घर की ऐसी जिम्मेदारी उठाई कि उसका नाटक करना बंद हो गया। नाटक, जिसमें उसके प्राण बसते थे। अब वह सबकी जरुरतों पर ध्यान देता था। एक वक्त था जब दीपू के सपनों की छाया हर किसी के आँखो में दिखाई देती थी और अब हर कोई अपने सपनों को उसकी आँखों में देखना चाहता।

इस प्रकार घर की स्थिति तो उतार-चढ़ाव के बाद सामान्य हो गई परंतु होनहार दीपू को अपने भविष्य की बलि देनी पड़ी।

२. संवाद :

कथानक की तरह लेखिका ने संवादों का सृजन भी सफलतापूर्वक किया है। संवाद कथानक को गतिशील बनाने में सहायक हैं। विविध पात्रों के संवाद रुचिकर, प्रभावशाली एवम् सार्थक हैं। पात्रों के मनोभावों के अंकन में इनकी महत्ता पर सन्देह नहीं किया जा सकता।

उदाहरण प्रस्तुत है -

"तो, दीपू की नौकरी पक्की कर दी। चार सौ देंगे। मैंने भी गरम लोहे पर चोट की।"
"दीपू नौकरी, करेगा अभी से ?"

"अभी से ? नहीं तो बाद में कौन पूछता है ? यह मत भूलो कि ताजे घाव पर दिखाई गई सहानुभूति वजनदार होती है। . . . . ."

"मैं नौकरी करुँगा मामा।"
"शाबास। यह हुई न बात। तुम इस गृहस्थी की गाड़ी को गुड़का ले जाओगे।"

३. चरित्र-चित्रण :

इस कहानी के प्रमुख पात्र दीपू एवम् शारदा हैं। दीपू के मामा, उसके भाई-बहन, पड़ोस तथा अन्य गौण पात्र के रुप में उपस्थित हैं। प्रमुख पात्र दीपू के इर्द-गिर्द सारी कहानी घूमती है। दीपू एक जिम्मेदार पात्र के रुप में उभरता है। पिता की मृत्यु के बाद घर को संभालने की सारी जिम्मेदारी उस पर आ जाती है। महेश बाबू तो दीपू के रुप में फिर से जीवित हो जाते हैं परंतु युवा दीपू को इसके लिए अपने अरमानों एवम् भविष्य की बलि चढ़ानी पड़ती है।

शारदा एक अच्छी पत्नी तथा माँ है। उसका हँसता-खेलता परिवार पति की मृत्यु से सुनसान हो जाता है। बड़े बेटे दीपू की नौकरी करने की बात से दुख होता है क्योंकि पूरे घर ने दीपू के कलाकार बनने के सपने देखे थे। हालात के आगे मजबूर शारदा दीपू को मना नहीं कर पाती। अपने बेटे के त्याग से सबसे अधिक दुखी शारदा ही है।

दीपू के मामा भी मुश्किल समय में शारदा का साथ निभाते है। दीपू के भाई-बहन, राजू और मीनू अपने उम्र के अनुसार व्यवहार करते हैं। पिता की मृत्यु के बाद थोड़े दिनों तक वे स्थिति से सामंजस्य करते हैं पर समय बीतने के साथ-साथ अपने सामान्य व्यवहार पर आ जाते हैं।

४. भाषा-शैली :

मन्नू भण्डारी की भाषा एक सफल कहानीकार की भाषा है। कहानीकार की भाषा सहज, सरल एवम् प्रभावपूर्ण होती है। इस कहानी की भाषा भी वस्तु स्थिति के अनुरुप सरल एवम् स्वाभाविक है। इसमें शब्द चित्रों का भी प्रयोग हुआ है लेकिन वे मानवीय संवेदना से जुड़े हुए है।

कहानी की शैली वर्णनात्मक है पर स्थान-स्थान पर पात्रों की आन्तरिकता से जुड़े हुए शब्द चित्र ऐसे आये हैं जो मानवीय संवेदना से जुड़े हुए हैं। यथा -

"आँसुओं के सैलाब में शारदा और कुछ नहीं पढ़ पाई। बस सुन्न-सी की तहाँ बैठी रह गई। उसके आसपास का सब-कुछ जड़ होता चला गया और भीतर एक दूसरी ही दुनिया खुलती चली गई - अनेक दृश्य, अनके बातें . . .अनेक सपने . . "

५) उद्देश्य :

मन्नू भण्डारी की कहानी असामायिक मृत्यु का उद्देश्य एकदम पारदर्शी एवम् स्पष्ट है। घर के मुख्य सदस्य जिसकी कमाई से पूरा घर चलता है, उसकी अकस्मात् मृत्यु से घर की आर्थिक नैया डावांडोल हो जाती है। ऐसे समय में उसे पार लगाने की सारी जिम्मेदारी घर के बड़े सदस्य पर आ जाती है। दीपू एक ऐसा ही चरित्र है। पिता की मृत्यु के पश्चात् वह सारी जिम्मेदारियों को निभाता है परंतु उसका व्यक्तित्त्व, उसका भविष्य घुटकर रह जाता है।

५.५ संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए।

"अभी से ? नहीं तो बाद में कौन पूछता है ? यह मत भूलो कि ताजे घाव पर दिखाई गई सहानुभूति ही वजनदार होती है। फिर आजकल एम.ए.पास तक तो दो सौ रुपल्ली की नौकरी के लिए जूतियाँ चटकाते फिरते है। यह तो महेश बाबू की मौत का लिहाज . . . ."

संदर्भ : प्रस्तुत गद्यांश 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' पुस्तक में संकलित 'असामायिक मृत्यु' कहानी से लिया गया है। मन्नू भण्डारी जी इसकी लेखिका हैं। महेश बाबू की मृत्यु इतनी अचानक हुई कि उनके परिवार को कुछ सोचने का मौका ही नहीं मिला। महेश बाबू सारी चीजें अधूरी छोड़कर चले गए थे। ऐसे में महेश बाबू की पत्नी के भाई की नजर उनके बड़े बेटे दीपू पर जाकर अटक जाती है। उन्हें दीपू ही दिखाई देता है जो कि घर की डूबती हुई नैया को पार लगा सके। उपर्युक्त वाक्य वे शारदा से कहते हैं।

व्याख्या :

महेश बाबू की मृत्यु के पश्चात् घर में बड़े पुरुष के नाम पर दीपू ही है। दीपू के मामा को दीपू में घर को मुश्किलों से निकाल लेने की उम्मीद नजर आती है। दीपू बी.ए. का इम्तिहान दे चुका था तथा उसका रिजल्ट आना बाकी था। दीपू के मामा महेश बाबू के जनरल मैनेजर के चरणों में दीपू को झुकाकर उसके लिए नौकरी की प्रार्थना करते हैं। वे महेश बाबू के अट्ठारह साल किए गए कम्पनी की खिदमत का वास्ता देकर उनकी जगह दीपू को रखने के लिए कहते हैं। जनरल मैनेजर दीपू को चार सौ रुपए में अपने यहाँ पर नौकरी देना स्वीकार कर लेते है। यह खबर जब मामाजी सुनाते हैं तो शारदा निराश हो जाती है क्योंकि वह नहीं चाहती थी कि अभी से उसका बेटा नौकरी करे। उसने और उसके पति ने मिलकर दीपू को एक बड़ा कलाकार बनाने का सपना देखा था। दीपू की नौकरी करने की बात सुनकर शारदा को वे सपने चकनाचूर होते दिखाई देने लगे। मामाजी उसे समझाते हुए कहते हैं कि यही सही वक्त है दीपू की नौकरी का। इस वक्त किसी न किसी का काम करना जरुरी है। दीपू को यदि नौकरी अभी मिल भी रही है तो इस वजह से कि उसके सर से अचानक से पिता का साया उठ गया है। आजकल तो एम. ए. करके भी नौकरी मिलनी मुश्किल हो गई है। दो सौ रुपए में भी लोग नौकरी के लिए तैयार हैं। ऐसे समय में यदि दीपू को नौकरी मिल रही है तो सिर्फ उसकी दयनीय परिस्थिति को देखकर ही मिल रही है।

विशेष :

दीपू के मामा अनुभवी है। उन्हें संसार के दाँव-पेंच का ज्ञान है। वे जानते हैं कि यही उचित अवसर है दीपू की नौकरी का अन्यथा यदि सामान्य स्थिति होती तो दीपू की सिर्फ बी.ए. की डिगरी के भरोसे ऐसी नौकरी न मिलती।

❖❖❖❖

६

बन्द दराजों का साथ

इकाई की रूपरेखा :

६.० उद्देश्य
६.१ प्रस्तावना
६.२ 'बन्द दराजों'...की कथावस्तू
६.३ 'बन्द दराजों का साथ' कहानी में विवाहेतर संबंधो से जनित कुंठा
६.४ 'बन्द दराजों का साथ' कहानी का शीर्षक की सार्थकता ।
६.५ संदर्भ सहित व्याख्या किजीए ।

६.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई मे आप 'बन्द दराजों का साथ' कहानी का मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप-

- 'बन्द दराजों का साथ' कहानी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे।
- कहानी में विवाहेतर संबंधो से जनित कुंठा को जान सकेंगे।
- कहानी का शीर्षक की सार्थकता का अध्ययन कर सकेंगे।
- कहानी के मूलपाठ की कुछ महत्त्वपूर्ण पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।

६.१ प्रस्तावना

बंद दराजों का साथ मंजरी और विपिन के दाम्पत्य जीवन के बिखराव की कहानी है। कहानी की नायिका मंजरी जब तक विपिन के अतीत से अंजान थी तब तक विपिन ही उसके जीवन का केंद्र था। विपिन के साथ उसका वैवाहिक जीवन सुखी था। परंतु जब उसे पता चलता है कि विवाह के पूर्व विपिन का किसी अन्य स्त्री के साथ संबंध था तथा उससे विपिन को एक बच्चा भी है तो उन दोनों के मध्य दूरियाँ बढ़ने लगती है। एक ही छत के नीचे दोनों अजनबी की तरह रहने लगते हैं। यह अजनबीपन इतना बढ़ जाता है कि दोनों का साथ रहना दूभर हो जाता है और वे अलग हो जाते हैं। विपिन से टूटने के बाद मंजरी दिलीप से जुड़ती है। उसके जीवन में फिर से खुशियाँ आने लगती हैं। परंतु यह खुशी भी अधिक दिनों तक टिक नहीं पाती। मंजरी के बेटे असित की फीस को लेकर दोनों के बीच मनमुटाव हो जाता है और उनके रिश्तों में खटास आ जाती है। अंत में मंजरी को यह एहसास होता है कि विपिन अपनी ही नहीं बल्कि उसकी जिंदगी को भी दराजों में बाँट गया है और वह इन बंटे हुए दराजों के साथ जीने के लिए अभिशप्त है।

६.२ 'बन्द दराजों'...की कथावस्तू

'बन्द दराजों का साथ' आधुनिक भाव बोध की कहानी है। विपिन और मंजरी पति-पत्नी है। दोनों के बीच प्रेम की कमी नहीं थी। विपिन का शरीर मंजरी के संपूर्ण व्यक्तित्व का पर्याय बना हुआ था। मंजरी जब तक विपिन के अतीत से अनजान थी तब तक विपिन ही उसका सर्वस्व था। विपिन से अलग न तो उसका कोई अस्तित्व और व्यक्तित्व था नहीं उसके अन्य संबंध एवम् संपर्क थे।

एक दिन मंजरी ने विपिन को कुछ कागजों में डूबा हुआ पाया। उसने जब विपिन से उन कागजों के बारे में पूछा तो वो सकपका गया और बात टालने के लिए अनेक प्रसंगहीन बातें करता गया। पर सब कुछ मंजरी के मन को बिना छुए ही निकल गया। मंजरी को विपिन पर कुछ शक सा हुआ। वह उसके साथ ही रोज की तरह काम पर निकली पर एक पीरियड के बाद ही सिरदर्द का बहाना कर घर लौट आई। लौटने के बाद सीधे वह टेबल के पास गई। उसने मेज का पहला और दूसरा दराज खोला परंतु उसे वे कागज नहीं मिले जिसे विपिन पढ़ रहा था। उसने तीसरी दराज खींची तो वह खुली नहीं । उसमें ताला लगा हुआ था। उसने पूरा घर छान मारा पर उसे चाबियाँ नहीं मिली। रात भर उसके भीतर ही भीतर कुछ घुमड़ता रहा फिर भी उसने सोच लिया था कि जब तक वह सारी बात का पता नहीं लगा लेगी, तब तक एक शब्द भी नहीं कहेगी।

दूसरे दिन ही वह बन्द दराज उसके सामने खुली पड़ी थी। उसमें उसे कुछ डायरियाँ, एक महिला और बच्ची की तस्वीरें, मिलती हैं। उसमें विपिन का अतीत ही नहीं, वर्तमान भी था और भविष्य की योजनाएँ भी थीं। मंजरी जैसे-जैसे विपिन के व्यक्तिगत जीवन के निकट होती जा रही थी, अनजाने और अनचाहे ही विपिन से दूर होती जा रही थी। उनके संबंध और संपर्क होने लगे और वे निहायत ही एक दूसरे से अपरिचित हो गए। मंजरी अपने ही घर में बहुत अकेली हो उठी थी और सब कुछ बड़ा वीरान लगने लगा था। उसे हर काम बोझ लगता। विपिन से उसके संबंध क्या बिगड़े उसे अपना जीवन ही उद्देश्यहीन लगने लगा।

मंजरी भीतर ही भीतर विपिन से अलग होने का विचार करती थी परंतु वह उन विचारों को व्यावहारिक रूप नहीं दे पाई क्योंकि घर में बहुत जल्दी एक तीसरा प्राणी आनेवाला था। उसे अपने रिश्ते सुधरने की आशा जगी पर साल भर के भीतर ही भीतर उसने अच्छी तरह जान लिया कि विपिन से किसी प्रकार की आशा करना व्यर्थ है। समय बीतने के साथ विपिन को लगने लगा था कि मंजरी ने शायद उस सबको स्वीकार कर लिया है। पर ऐसा हुआ नहीं। शादी की पाँचवी सालगिरह के दिन वह विपिन से मिलती है और उससे अलग रहने का फैसला करती है। वह दो महिने की छुट्टि लेकर दिल्ली से चली जाती है। विपिन भी उससे कहता है कि वह भी उस घर में नही रह पाएगा। इस प्रकार दोनों एक दूसरे से अलग हो जाते हैं।

दो महिने के बाद वापस आने पर मंजरी घर की सफाई में जुट जाती है और उन सभी चीजों को हटा देती है जिससे विपिन की स्मृति जुड़ी हुई थी। विपिन से अलग होने के बाद मंजरी अपने बेटे के साथ खुश रहने की पूरी और ईमानदार कोशिश करती है। उसके साथ लोगों ने सहानुभूति भी दिखायी और इस रिश्ते से उबर जाने की दाद भी दी। सिर्फ एक चेहरा

था जो मंजरी के साथ निरंतर बना रहा। परंतु मंजरी जल्दबाजी में कोई फैसला नहीं लेना चाहती थी। तीन साल तक उसने कोई निर्णय नहीं लिया। उसने सोचा था कि जैसे वह विपिन के संबंध से उबर गई थी, इस अकेलेपन से भी उबर जाएगी। पर उसने पाया कि वह अपने बेटे असित के सहारे अपने अकेलेपन से लड़ने की कोशिश कर रही है। उसे खुद महसूस होता है कि असित के प्रति उसका व्यवहार असंतुलित होता जा रहा है। लोगों के नजरों में भी वह आने लगी। और तब उसने दो निर्णय एक साथ लिए। एक असित को होस्टल भेजना और दूसरा दिलीप को जीवनसाथी बनाना। उसे इस बात पर खुशी और गर्व भी होता है कि उसने स्थिति को अधिक बिगड़ने से बचा लिया।

दिलीप के आने के बाद मंजरी के जीवन में बहुत परिवर्तन आया। वह खुश रहने लगी थी। उसने नौकरी भी छोड़ दी क्योंकि साथियों की नजरों में झाँकती हिकारत उससे बर्दाश्त नहीं होती थी। वैसे भी इस काम से वह बहुत ऊब चुकी थी। अब न तो उसे स्कूल जाने की चिंता रहती और न ही कापियों के गटठर की। छुट्टियों में असित घर वापस आता है। असित के आने से मंजरी बहुत प्रसन्न थी और दिलीप के जाते ही उसे बाहर घुमाने के लिए निकल जाती।

मंजरी को अपने जीवन की दूसरी पारी में झटका तब लगता है जब दिलीप असित के स्कूल से आये छः महीने के बिल पर कहता है -

"यह स्कूल काफी महँगा है, इस महिने यों भी काफी खर्च हो गया।"

यद्यपि यह बात साधारण थी और सच्ची भी। असित दिलीप का बच्चा होता तब भी वह यह बात कह सकता था। पर असित दिलीप का बच्चा नहीं था और क्योंकि संदर्भ दूसरा था इसलिए बात का अर्थ दूसरा हो गया। मंजरी को इस बात से बहुत तकलीफ होती है। उस समय पहली बार उसे अपनी नौकरी छोड़ने पर पछतावा भी होता है।

इस घटना के बाद मंजरी दिलीप से भी टूट सी जाती है। और दोनों के बीच एक विभाजन रेखा उभर आती है।

६.३ 'बन्द दराजों का साथ' कहानी में विवाहेतर संबंधो से जनित कुंठा

'बन्द दराजों का साथ' विवाहेतर संबंधो से जनित कुंठा की कहानी है। इस कहानी का केन्द्रबिंदु है दाम्पत्य जीवन में त्रिकोण की अप्रत्याशित अवतारणा। पति-पत्नी के बीच यदि तीसरा व्यक्ति किसी एक को विस्थापित कर स्वयम् विस्थापित होना चाहेगा तो दाम्पत्य जीवन दराजों में अवश्य बँटेगा और उसके बिखराव की संभावना तथा आशंका अवश्य बनेगी।

मंजरी और विपिन का वैवाहिक जीवन सुखी था। विपिन का शरीर मंजरी के 'संपूर्ण व्यक्तित्व का पर्याय' बना हुआ था। वह इसी में इतनी तल्लीन थी कि उसके मन में कभी खयाल नहीं आया कि शरीर से भी परे उसका कोई व्यक्तित्व और अस्तित्व हो सकता है। संबंध और संपर्क हो सकते है, कोई अपना जीवन हो सकता है। एक दिन वह विपिन को कुछ कागजों में डूबा हुआ पाती है। विपिन की चतुराई, छिपाव, बचाव की मनः स्थिति और व्यवहार से उसके मन में संदेह का अंकुर फूटता है। न्यूनतम शब्दों में लेखिका इंगित कर देती है कि मंजरी को अपना घर बेगाना लगने लगता है, मानो वह किसी और के घर में घुस रही है। विपिन के जीवन

में उसके अलावा कोई और भी है यह जानकर स्वाभाविक है मंजरी में बिखराव होगा और हुआ भी ? उन पत्नियों की बात जुदा है जो आर्थिक दृष्टि से बेबस होने की वजह से अपने पति से चाहते हुए भी दूर नहीं हो पातीं। यह कहना शायद बहुत गलत नहीं है कि यदि मंजरी नौकरी नहीं करती होती, आर्थिक दृष्टि से कमजोर होती तो इस विषम परिस्थिति में भी विपिन से विलग न होती।

मेज की तीन दराजे अब भिन्न लगती हैं, क्योंकि मंजरी अनजाने और अनचाहे ही विपिन से दूर होती जा रही थी। धीरे-धीरे उनके मनों की दूरी शरीरों में भी फैल गई। अंततः वे एक दूसरे के लिए निहायत अपरिचित से हो गए। उनके हिसाब अलग रहने लगे, संपर्क और संबंध अलग हुए। आपस में तर्क-वितर्क होते थे और उनकी परिणति मंजरी के आँसू में होती थी। स्नेह का स्थान संदेह ने ले लिया था और तर्कों ने सद्‌भावना के रेशे-रेशे उधेड़ दिए थे। मंजरी अकेली हो गई और सब कुछ वीरान लगने लगा। घर की प्राणवायु धीरे-धीरे विषाक्त होने लगी। इसी बीच घर में एक तीसरा प्राणी आनेवाला था। आशा की किरण प्रस्फुटित हुई शायद अनागत ही उनके बीच कहीं सेतु बन जाए। पर ऐसा कुछ नहीं हुआ। मंजरी बिखरकर टूट गई। अंत में दोनों के संबंध विच्छेद हो गए।

विपिन से अलग होने के बाद मंजरी को नौकरी बोझ लगने लगी और जीवन नीरस। अपना अकेलापन समाप्त करने के लिए उसने अपने परिचित दिलीप से संबंध स्थापित कर लिया। अपने पुत्र असित को होस्टल में डाल दिया। उसके जीवन में दिलीप के आने के बाद उसमें उत्साह-ललक जागृत हुई। अपनी सहकर्मियों की आँखो में झलकती हिकारत देखकर उसने नौकरी छोड़ दी। दिलीप और मंजरी की यह खुशी ज्यादा दिन नहीं टिकती। उनके बीच भी दूरी होती हैं। दिलीप का यह कथन "यह स्कूल काफी महँगा है" मंजरी को शूल की तरह चुभ जाता है। क्योंकि असित विपिन का बच्चा हैं। तब मंजरी को पहली बार अपनी नौकरी छोड़ने का अफसोस होता है।

मंजरी विपिन से टूटती है तो दिलीप से जुड़ती है। और जब दिलीप से टूटती है तो बराबर उसका मन विपिन की और खिंच जाता है। यह अहसास मंजरी को घेरे रहता है कि विपिन ने अपनी जिंदगी को ही टुकड़ों में नहीं बाँटा, बड़े कौशल्य से वह उसकी जिन्दगी को भी टुकड़ो में बाँट गया है। आगे उसे सारी जिन्दगी ही इन टुकड़ों की अभिशप्त छाया में काटनी होगी।

इस प्रकार लेखिका इस कहानी के माध्यम से स्पष्ट किया है कि प्रेम, विवाह, तलाक आदि तो सामाजिक समस्याएँ है। किन्तु इससे जो घुटन पैदा होती है वह समस्या को कुंठित मनोवैज्ञानिकता की ओर उमुख करती है। मंजरी के जीवन में जो घुटन और टूटन आई उससे जो कुंठा उत्पन्न हुई वह स्पष्ट रूप से मनोवैज्ञानिक है। बाहर से कहानी सरल, सपाट लगती है, किन्तु भीतर से मनोग्रंथि (काम्प्लेक्सो) का सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत करती है।

६.४ 'बन्द दराजों का साथ' कहानी का शीर्षक की सार्थकता ।

किसी भी रचना की अर्थवत्ता के लिए उसका शीर्षक महत्त्वपूर्ण होता है। शीर्षक साहित्यिक रचना को सार्थकता प्रदान करता है। उसके भाव को प्रकाशित करता है, उसके उद्देश्य की ओर संकेत करता है। अतः शीर्षक आकर्षक, प्रभावशाली और प्रेषणीय होना चाहिए।

शीर्षक में रचना की सफलता छिपी रहती है। शीर्षक जिज्ञासा और कुतूहल को जितना अधिक जगाने वाला होगा, वह पाठक को उतना ही अधिक आकर्षित करेगा।

इस दृष्टि से देखा जाए तो मन्नू भण्डारी द्वारा रचित 'बन्द दराजों का साथ' कहानी का शीर्षक प्रतीकात्मक है। मंजरी के घर एक बहुत बड़ी मेज थी जो तीन दराजों में बँटी हुई थी। बाई ओर वाली दराज व्यक्तिगत थी, बीचवाली पारिवारिक और दाहिनी सामाजिक थी। वह विभाजन मंजरी का ही किया हुआ था, जो उसने काफी दिनों बाद किया था। जीवन के प्रारम्भिक चरणों में उसका ध्यान दराजों की ओर तो क्या कभी मेज की तरफ भी नहीं गया था। वह तो विपिन के साथ खुशहाल जीवन जी रही थी। विपिन के शरीर से परे उसका न तो कोई अस्तित्व था न ही व्यक्तित्व।

मंजरी का दांपत्य जीवन बहुत दिन तक खुशहाल नहीं रह सका। एक दिन जब उसे एक दराज में विपिन का अतीत ही नहीं वर्तमान और भविष्य की योजनाएँ भी मिलीं तब से दराजों के साथ उनके मन का भी बँटवारा हो गया। वह जितना ही उसके व्यक्तिगत जीवन के निकट पहुंचती है उतना ही उससे दूर होती जाती है। उनके हिसाब अलग रहने लगे और धीरे-धीरे संपर्क और संबंध भी अलग हो गए। इसी बीच घर में एक तीसरा प्राणी आने वाला था। मंजरी को आशा बंधी कि शायद पहिले की तरह उनके रिश्ते सामान्य हो जाएँ। पर साल भर के भीतर ही उसने यह जान लिया था कि इस युग में आशा करना ही मूर्खता है, क्योंकि आज जिन्दगी का हर पहलू, हर स्थिति और संबंध एक समाधानहीन समस्या लेकर आता है जिसे सुलझाया नहीं जा सकता, केवल भोगा जा सकता है। अंत मे दोनों के रास्ते अलग हो जाते हैं।

मंजरी अपने घर से उन सभी चीजों को हटा देती है जिससे विपिन की स्मृति लिपटी हुई थी। वह मेज भी उसने हटा दिया था। परंतु मेजवाला कोना खाली रहने पर भी उसके मन में भय और वितृष्णा की मिली-जुली भावना पैदा किया करता था। वह विपिन से मुक्त होकर भी उस मेज से पूरी तरह मुक्त नहीं हो पा रही थी क्योंकि उसी मेज की दराजों से मिली चीजों से उसकी जिंदगी में तुफान आ जाता है।

मंजरी विपिन से अलग होकर दिलीप के साथ जुड़ती है। दिलीप से जुड़ने पर उसके जीवन में एक सकारात्मक बदलाव आता है। उसके जीवन को पुनः एक नया रूप मिलता है। अपने इस निर्णय से वह खुश भी होती है और स्थिति बिगड़ने से बचाने का उसे गर्व भी होता है। परंतु यह खुशी उसके जीवन में बहुत अधिक दिनों तक नही रह पाती। असित की अधिक फीस को लेकर दिलीप के साथ उसका मनमुटाव हो जाता है। यद्यपि दिलीप ने जो भी कहा वह स्वाभाविक था। असित यदि दिलीप का बच्चा होता तो भी यह कह सकता था। परंतु स्थितियाँ अलग होने से बात के अर्थ भी बदल गए। असित के कारण उनके बीच दरार उत्पन्न हो जाती है और उसके बाद धीरे-धीरे फिर उस घर में एक अदृश्य मेज उभर आती है। इस बार वह मेज दिलीप के कमरे में नहीं मंजरी के कमरे में आती है और दो भागों मे बँटी होती है - एक व्यक्तिगत, एक पारिवारिक। व्यक्तिगत दराज में असित के फरमाइशी पत्र, उसके चित्र, उसके स्कूल की रिपोर्ट और विपिन के कुछ औपचारिक पत्र जिसमें यह आश्वासन दिया गया था कि असित का आधा खर्च वह दिया करेगा।

मेज का वह विभाजन फिर पहले की तरह मन और शरीरों में होता हुआ सारे घर में फैल जाता है। बाहर से कुछ नजर नहीं आता, न बातचीत में, न व्यवहार में पर अनजाने और

अनचाहे ही भीतर से जैसे मन बँट जाते है, जिंदगियाँ बँट जाती है। इस बार मंजरी और दिलीप के बीच की स्थितियाँ और प्रसंग दूसरे थे पर बँटने की पीड़ा वैसी ही थी।

इस प्रकार यह दराज मात्र मेज में नहीं उभरती अपितु संबंधों के बीच भी उभरती है। दरान संबंधो के टूटने और बिखरने का प्रतीक है। दराजों की तरह मंजरी की जिंदगी भी टुकड़ो में बँट जाती है और वह इन्हीं टुकड़ों में बँटी जिंदगी जीने को मजबूर हो जाती है। अत: 'बन्द दराजों का साथ' शीर्षक इस कहानी के लिए सबसे उपयुक्त एवम् सार्थक शीर्षक है।

६.५ संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :

"पर साल भर के भीतर ही भीतर उसने अच्छी तरह जान लिया कि इस युग में आशा करना ही मुर्खता है, क्योंकि आज जिन्दगी का हर पहलू, हर स्थिति और हर संबंध एक समाधानहीन समस्या होकर ही आता है, जिसे सुलझाया नहीं जा सकता, केवल भोगा जा सकता है।"

संदर्भ : प्रस्तुत गद्यांश 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' संग्रह में संकलित 'बन्द दराजों का साथ' कहानी से लिया गया है। इसकी लेखिका मन्नू भण्डारी जी हैं। मंजरी और विपिन के रिश्ते में दूरियाँ बढ़ने लगती है। मंजरी का होने वाला बच्चा इस रिश्ते की दूरियों को कम करने के लिए आशा की किरण की तरह आता है परंतु उसका आना भी उनकी दूरियाँ मिटा नहीं पाता और दोनों के रास्ते अलग हो जाते है।

व्याख्या : विपिन का अतीत मंजरी के जीवन में भूचाल बनकर आता है। विपिन का किसी और महिला के साथ संबंध अतीत की बात होती तो स्थिति इतनी न बिगड़ती। परंतु विपिन का वर्तमान और भविष्य की योजना भी उसके साथ जुड़ी होती है। विपिन के अतीत को जानने के बाद मंजरी टूट सी जाती है। जिस विपिन को वह अपने आप से भी अधिक प्यार करती थी उसी से घृणा मिलने के बाद मंजरी बिखर कर रह जाती है। उसकी पीड़ा, छटपटाहट दिन-ब-दिन बढ़ती जाती है। इसी बीच घर में एक तीसरा प्राणी आने वाला था। मंजरी उसके और अपने दुर्भाग्य को कोसती क्योंकि उसका भविष्य उसे अंधकारमय नजर आता। पर उसके बावजूद उसके मन में वाही एक हल्की सी आशा भी झांकने लगी थी कि शायद यह अनागत ही उनके बीच में वाही सेतु बन जाए। परंतु ऐसा सोचना उसकी बेवकूफी थी। साल भर के भीतर ही उसने समझ लिया कि इस युग में आशा करना मूर्खता है। आज के आधुनिक जीवन में हर स्थिति, हर प्रसंग एक नई समस्या लेकर आते हैं। समस्या भी ऐसी जिसका कोई समाधान ही नहीं हो। समस्या को सिर्फ भोगा जा सकता है उसे सुलझाया नहीं जा सकता। मंजरी के जीवन की भी समस्या कुछ ऐसी ही थी। उसे लगा था बच्चे के आने के बाद इस समस्या का समाधान हो जाएगा पर ऐसा कुछ नहीं हुआ। इन समस्याओं के बीच मंजरी बिखरती और टूटती चली जाती है।

विशेष : अक्सर संतान होने के बाद पति-पत्नी के बिगड़े हुए रिश्ते बन जाते हैं। उनका आपसी प्यार बढ़ जाता है। यही सोचकर मंजरी के मन में भी आशा बंधती है कि उनका होनेवाला बच्चा उनके रिश्तों में मधुरता ला देगा परंतु विपिन पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

७

क्षय

इकाई की रूपरेखा :

७.० उद्देश्य
७.१ प्रस्तावना
७.२ 'क्षय' कहानी की कथावस्तु ।
७.३ 'क्षय' कहानी का उद्देश
७.४ 'क्षय' कहानी की कुंती का चरित्र-चित्रण
७.५ संदर्भ सहित व्याख्या किजिए

७.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई मे आप 'क्षय' कहानी का मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप-

- इस कहानी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे।
- 'क्षय' कहानी के उद्देश्य को जान सकेंगे।
- कहानी के पात्रों के चरित्रों की विशेषताएँ जान सकेंगे।
- कहानी के मूलपाठ की कुछ महत्त्वपूर्ण पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।

७.१ प्रस्तावना

प्रस्तुत कहानी की प्रधान पात्र कुन्ती है। कुन्ती अपने पिता की बड़ी बेटी है। पिता के क्षयग्रस्त होने के बाद वह बड़ी ईमानदारी से घर की सारी जिम्मेदारी उठाती है। उसके आदर्शवाद और दृढ आत्मविश्वास पर उसके पापा गर्व किया करते थे। अपने आदर्शवादिता के कारण ही वह अपने छोटे भाई टुन्नी को पास कराने की सिफारिश के लिए मना कर देती है। वह अतिरिक्त समय देकर कमजोर छात्राओं को स्कूल में पढ़ाया करती। परंतु अर्थ के अभाव के चलते उसें अपनी आदर्शवादिता का त्याग कर सावित्री जैसी कमजोर लड़की का ट्युशन लेना पड़ता है। कुन्ती घर की जिम्मेदारियों का भार उठाने का भरसक प्रयत्न करती है किंतु धीरे-धीरे यह भार उसके लिए असह्य जो जाता है। इस भार के तले वह पिसती रहती है। उसे कोई भी एक सीधी-सपाट राह नहीं मिलती । इन सबके बीच वह स्वयं को क्षयग्रस्त अनुभव करने लगती है।

७.२ 'क्षय' कहानी की कथावस्तु

'क्षय' एक मध्यमवर्गीय परिवार की युवा - कुन्ती के जीवन की संघर्ष गाथा का प्रामाणिक दस्तावेज है। कुन्ती के पिता क्षय से ग्रस्त हैं। उसका छोटा भाई टुन्नी अपने मामा के यहाँ इलाहाबाद में आठवीं कक्षा में पढ़ रहा है। कुन्ती पिछले साल से एक बेटे की तरह अपना घर देख रही है। कुन्ती के पिता आदर्शवादी थे। कुन्ती भी जो कुछ भी थी विचारों से, विश्वासों से पापा की ही बनाई हुई थी। उसके आदर्शवाद और दृढ़ आत्मविश्वास पर उसके पापा गर्व किया करते थे।

कुन्ती स्कूल में अध्यापिका थी। वहाँ उसे छह घंटे के दो सौ रुपए मिला करते थे। कुन्ती बड़ी ही मेहनती थी। वह ट्युशन लेना अपने आदर्शों के विरुद्ध समझती थी। इसके बदले वह कमजोर विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए जल्दी जाया करती थी और देर तक ठहरकर पढ़ाया करती थी। उसे पता था कि उसकी सिफारिश से टुन्नी पास हो जाएगा परंतु वह स्कूल को इन सारी बातों से दूर ही रखना चाहती थी। कुंती के इन आदर्शो पर उसके स्कूल की अध्यापिकाएँ व्यंग करती थीं परंतु कुंती को इन चीजों से कोई फर्क नहीं पड़ता था।

कुंती एक जिम्मेदार बेटी थी। पिता की बीमारी का पता चलने पर वह बहुत दु:खी होती है। उसे बस दो ही चिंता सताती थी एक तो यह कि क्या पापा की बीमारी कभी ठीक हो पाएगी और दूसरा यह कि घर कैसे चलेगा? एक महिने में ही बैंक से पापा के हजार से अधिक रुपए निकाले जा चुके थे। कुन्ती नहीं चाहती थी कि उसमें से अब और पैसे निकाले जाएँ। पूँजी के नाम पर उनके पास कुल पाँच हजार ही थे जिनके प्रति उनका मोह उम्र के साथ-साथ बढ़ता जाता है। उसे वे कभी कुन्ती के ब्याह के लिए बताकर संतोष प्राप्त करते थे, तो कभी टुन्नी की पढ़ाई के लिए बताकर उसके उज्जवल भविष्य की कल्पना का सुख लेते थे।

जिस कुन्ती को ट्युशन के नाम से नफरत थी, वही कुन्ती अतिरिक्त आय की मजबूरी में सावित्री का ट्युशन करना स्वीकार करती है। यद्यपि इसके लिए सावित्री की माँ ने बहुत खुशामद की थी पर जरुरत तो उसे भी थी। अत: अपनी जिम्मेदारियों को निभाने के लिए वह अपने उसूलों से समझौता करती है। क्योंकि स्कूल में छह घंटे पढ़ाकर उसे दो सौ रुपए मिलते थे और यहाँ डेढ़ घण्टे के ही दो सौ रुपए मिलते थे। वह सावित्री को बहुत मेहनत और लगन से पढ़ाती है यद्यपि वह जानती थी कि नवीं में वह पास नहीं हो सकती।

पापा की असाध्य बीमारी की वजह से कुन्ती की जिन्दगी नीरस, बोझिल, और उदास-सी हो गई थी। वह टुन्नू के आने का बेसब्री से इंतजार करती है। कई बार वह सोचती ही कि टुन्नी के आते ही वह कहेगी,

"टुन्नी, ले, अब तू संभाल। मैं नहीं जानती, तू छोटा है या बड़ा .... जो तेरी समझ में आए कर। मैं कहीं जाती हूँ। पापा का ठेका मैंने अकेले तो नहीं लिया। जब तक मुझमें दम रहा मैंने संभाला.... अब एक दिन भी मुझसे नहीं संभलता..."

कुन्ती सिर्फ ये सोचकर रह जाती। उसे पता था व्यावहारिक रूप में यह होना मुश्किल है। सावित्री का पास होना कठिन था फिर भी वह उसे पास कराने के लिए देर रात तक पढ़ाती। इम्तिहान के दिनों में वह सवेरे-शाम, दोनों समय उसे पढ़ाने जाती। इतना सब करने पर भी उसे यह पता नहीं था कि वो पास होगी या नहीं। कुंती के पिता की तबीयत अचानक बहुत बिगड़

जाती है। कुंती पागलो की तरह दवाई, डॉक्टर इंजेक्शन, भाग-दौड़ आदि करती है। विशेषज्ञ के कहने पर पापा को अस्पताल में भर्ती करवाती है। जब वह घर में वापस आती है तो उसे लगता है जैसे वह उन्हें कुछ दिनों के लिए अस्पताल में नही छोड़कर आई है वरन् हमेशा-हमेशा के लिए कही छोड़कर आई है - जहाँ से वे कभी नहीं लौटेंगे।

काम करते-करते और पापा की देखभाल करते-करते जब वह तंग आ जाती है तो उसके मन में अपने पापा को लेकर कुछ ऐसे विचार आते हैं जो नहीं आने चाहिए। उसे अपने पर क्रोध भी आता है कि वह पापा की मृत्यु के बारे में सोच भी कैसे सकती है। उसे लगता है कब टुन्नी बड़ा हो जाए और उस पर सारी जिम्मेदारी छोड़कर कहीं चली जाए। एक ओर आदर्शवादिता के चलते वह अपने भाई को पास कराने की सिफारिश नहीं करती वहीं दूसरी ओर समय से समझौता करके वह सावित्री को पास करवाने की कोशिश करने उसके स्कूल जाती है। मजबूरी में वह मन के विरुद्ध काम करती है।

वायलिन की स्वर लहरियों में खो जानेवाली, आदर्श की बेलि का सिंचन करने वाली कुंती अंत में आर्थिक अभावों तथा मानसिक विसंगतियों के फलस्वरूप स्वयं क्षय ग्रस्त सी हो जाती है।

७.३ 'क्षय' कहानी का उद्देश्य ।

आदर्श और यथार्थ जीवन के दो छोर हैं। चरण धरती पर जमें हों और दृष्टि आकाश की ओर हो तो यथार्थ और आदर्श का समन्वय होता है। परंतु कभी-कभी यथार्थ इतना विषम होता है कि वह आदर्श के उमंग भरे पंख को बोझिल कर देता है। कमर तोड़ देने वाला यथार्थ आदर्श को छिन्न-भिन्न कर देता हैं परिस्थितियों के अनुसार मनुष्य को अपने आदर्शों से समझौता करना ही पड़ता है, यही संकेत इस कहानी का उद्देश्य है। आदर्शवादी कुंती को भी न चाहते हुए परिस्थितियों से समझौता करना पड़ता है।

कुन्ती 'क्षय' कहानी की नायिका है। उसके पापा क्षय रोग से पीड़ित हैं। क्षयग्रस्त होने से और घर में किसी और के बड़ा न होने पर संपूर्ण परिवार का आर्थिक भार उस पर आ जाता है। उसके पापा ने उसे लड़कों की तरह पाला था। वह विचारों और विश्वासों से पापा की ही बनाई हुई थी। उसके आदर्शवाद और दृढ़ आत्मविश्वास पर उसके पापा गर्व करते थे। कुन्ती का छोटा भाई टुन्नी आठवीं में फेल हो गया था। कुन्ती के पापा आदर्शवादी थे फिर भी बीमारी के कारण कह ले या फिर जीवन के अनुभव के कारण वे अपने आदर्शों से हटकर टुन्नी को पास करवाने की सिफारिश कुन्ती से करते है। जिस दिन पापा ने कुन्ती से यह बात कही थी, वह अवाक-सी उनका मुँह देखती रह गई थी, जैसे विश्वास न हो रहा हो कि पापा भी कभी ऐसी बात कह सकते हैं। उसे ऐसा लगता है उसने टुन्नी की सिफारिश लेकर आए वह उसे स्कूल के फाटक से ही निकाल बाहर करे। स्कूल में यह सब देखकर उसका मन आक्रोश, दुःख और ग्लानि से भर जाता था। टुन्नी के मामले में वह पिता से भी साफ-साफ कह देती है कि कम-से-कम स्कूल को तो इन सारी बातों से भ्रष्ट न करवाओ।

कुन्ती शिक्षा के क्षेत्र को पवित्र मानती थी। वह स्वस्थ गुरु परम्परा को बरकरार रखना चाहती थी। यही कारण था कि वह अपनी कमजोर छात्राओं को सवेरे जल्दी आकर पढ़ाया करती या देर तक ठहरकर पढ़ाती। स्नेह और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार के उनके खोए आत्मविश्वास को जगाती। पढ़ाई के अतिरिक्त विभिन्न रुचियों के विकास के लिए नई योजनाएँ

बनाया करती थी। कापियां देखते समय वह कई बार अपने परिश्रम की व्यर्थता महसूस करती है परंतु फिर भी उन्हें प्रोत्साहित करती रहती है।

मिसेज नाथ कुन्ती की सहकर्मी थी। वह कई बार कुंती के आदर्शो को लेकर उसपर व्यंग्य किया करती थी। आकर एक लड़की की कापी हवा में उछाल दी और बड़बड़ाने लगी.

"दिमाग में गोबर भरा है और पढ़ने का शौक चढ़ आया है। अपने घर बैठो, खाओ-पियो और मौज करो। न जाने कहाँ-कहाँ से दिमाग चाटने आ जाती हैं।..."

कुन्ती इन सब बातों की अभ्यस्त हो चुकी थी, फिर भी लड़कियों पर यों झुँझलाना, ऐसे अपशब्द कहना उसे कभी अच्छा नहीं लगता। फिर शिक्षिकाएँ तो पढ़ी लिखी, सभ्य, सुसंस्कृत और छात्राओं की आदर्श होती है, उन्हें ऐसे शब्दों से दूर ही रहना चाहिए।

कुन्ती के पापा की असाध्य बीमारी, घर चलाने की आर्थिक परेशानी आदि के आगे कुंती के ये आदर्श टिक नहीं पाते। जो कुन्ती कमजोर बच्चों को जल्दी जाकर पढ़ाया करती थी अब वह सावित्री जैसी कमजोर लड़की का ट्युशन करने लगी। यद्यपि इसके लिए सावित्री की माँ ने बहुत खुशामद की थी। चार चक्कर घर के लगाए थे पर जरुरत तो उसे भी बहुत थी। कुन्ती के स्कूल की कमाई पापा के इलाज में चली जाती थी। बचत के नाम पर पापा के पास सिर्फ पाँच हजार रुपए थे जिनमें से न चाहते हुए भी एक हजार रुपए दवाइयों के लिए निकाले जा चुके थे। कुन्ती को स्कूल में छह घंटे पढ़ाकर दो सौ रुपए मिला करते थे वहीं सावित्री को डेढ़ घंटे पढ़ाने पर ही उसे दो सौ रुपए मिल जाया करते थे। यह दो सौ रुपए की अतिरिक्त आय उसका बहुत बड़ा बोझ थोड़ा हल्का कर देती थी। इसलिए वह ट्युशन के लिए मना न कर सकी।

कुन्ती अपने मकान-मालिक के मास्टर जो को देखती तो उसे उनकी स्थिति हास्यास्पद लगती। वे उसे मास्टरजी कम और मकान मालिक के नौकर अधिक लगते। कुंती कभी उन्हें रिक्शा में सामान लदवाते देखती तो कभी सेठानी का हिसाब लिखते। सावित्री का ट्युशन कुंती स्वीकारती तो है परंतु वह फैसला करती है कि यदि सावित्री नहीं सुधरी तो वह ट्युशन पढ़ाना छोड़ देगी। अपनी आर्थिक परिस्थिति के आगे कुंती ट्युशन छोड़ने की बात सोच भी नहीं पाती उल्टे मास्टर जी की तरह उसे भी सावित्री की माँ का कोई न कोई काम करना पड़ता। एक ओर आदर्शवादिता के चलते वह अपने भाई को पास नहीं करवाती है वही दूसरी ओर समय से समझौता करके वह सावित्री को पास करवाने की कोशिश करने उसके स्कूल जाती है। जिस पापा के आदर्शों में वह पली बढ़ी थी, परिस्थितिवश उनके ही मृत्यु की बात वह सोचने लगती है।

इस प्रकार परिस्थितियों के आगे कुंती विवश हो जाती है तथा उसके सारे आदर्श धरे के धरे रह जाते हैं।

७.४ 'क्षय' कहानी की कुंती का चरित्र-चित्रण ।

'क्षय' कहानी की प्रधान पात्र कुंती है। 'क्षय' कहानी में कुन्ती केवल नारी होने के कारण ही प्रतिकूल परिस्थितियों से संघर्ष नहीं करती बल्कि वह अपने परिवार की संवेदनशील, जिम्मेदार, सहनशील, संघर्षशील सदस्या है। उसके पिता की वह पहली संतान है -

"वह उनकी लड़की नहीं लड़का है। शुरू से ही उसे लड़के की तरह पाला... बचपन में वह लड़कों के साथ खेली, लड़को के साथ पढ़ी और अब लड़कों की तरह ही इस घर को सँभाल रही है।"

कुंती का त्याग और संघर्ष उसके जिम्मेदाराना चरित्र के परिचायक हैं। कुंती अपने कर्तव्य का पालन पूर्ण निष्ठा और प्राणपण से करती है। यदि परिवार में आर्थिक अभाव की विभिषिका नहीं होती तो कुंती को इतना संघर्ष न करना पड़ता। कुंती के पिता की बीमारी परिवार की तबाही का मुख्य कारण है। अर्थ संकट, जो 'क्षय' के रोग में कुंती के पिता को ही नही युवा, उत्साही, आदर्शमयी स्वयं कुंती को भी ग्रस्त कर लेती है।

आर्थिक परेशानी के कारण छोटे भाई टुन्नी को इलाहाबाद भेजा जाता है। टुन्नी पढ़ने में कमजोर है। वह आठवीं में फेल हो जाता है। विवशता में आदर्शच्युत होकर पापा कुंती से कहते हैं कि हैड़मास्टर से कोशिश करके टुन्नी को आगे के दर्जे में चढ़वाकर साल बचा ले। एक समय था जब कुंती का आदर्श इतना प्रबल था कि उसने पापा से कहा था,

"पापा कम-से-कम स्कूलों को तो इन सारी बातों से भ्रष्ट न करवाओ।"

खेद का विषय है कि आजादी हासिल करने के बाद हमारे समाज ने इसी प्रकार के नैतिक हास का मार्ग चुना है। इसी विवशता में कुंती सावित्री का ट्युशन करना स्वीकार करती है। कुंती घर की आर्थिक स्थिति पर नजर डालती है और चिंताग्रस्त हो जाती है। शुरुआत में वह स्कूल में उत्साह के साथ कार्य करती थी। कमजोर छात्राओं को सबेरे जल्दी जाकर पढ़ाया करती थी या देर तक ठहरकर पढ़ाती थी। लेकिन समाज के भ्रष्ट वातावरण ने उसका उत्साह भंग कर दिया। उसका आदर्श छिन्न-भिन्न हो गया। सावित्री की माँ ने कुंती को दो सौ रुपए के ट्युशन पर इसलिए नहीं रखा था कि वह पढ़ाएगी बल्कि इसलिए कि वह सावित्री को जान-पहचान के जरिये पास करवा देगी और इस प्रकार सावित्री की शादी में सुविधा होगी।

कुंती के कठिन परिश्रम के बावजूद सावित्री फेल हो जाती है। कुंती को सावित्री के रिपोर्ट के 'लाल धब्बे' पापा के खून के लाल धब्बे जैसे लगते हैं। सावित्री का ट्युशन छूट गया तो कहर हो जाएगा। वह इतनी व्यथित होती है कि अपने प्यारे पापा से ऊब जाती है। अपने को अकेला, असहाय पाकर कुंती के मुँह से निकलता है -

"हे भगवान! अब तो तू पापा को उठा ले! मुझसे बर्दाश्त नहीं होता! मैं टूट चुकी हूँ।..."

परंतु अगले ही पल वह दोनो हाथ कसकर मुँह पर रख लेती है, मानो मुँह से निकली हुई बात को वापस धकेल देना चाहती हो। अंत में मजबूर होकर वह सावित्री की सिफारिश के लिए भारी गर्मी के बीच स्कूल में जाती है। उसका मन इस बात के लिए राजी नहीं होता परंतु आर्थिक परिस्थिति और सावित्री की माँ के दबाव के आगे वह मजबूर हो जाती है। उसके स्कूल पहुँचकर वह एक अध्यापिका से मिलती है और प्रधानाध्यापिका से भी मिलती है। नीचे उतरते समय उसे प्यास लग जाती है। चपरासी ने पानी लाकर दिया तो एक सांस मे ंही वह सारा गिलास खाली कर जाती है। पानी की वजह से या किसी और वजह से बड़े जोर की खाँसी आनी शुरु हो जाती है। उसे वैसी ही खाँसी आती है जैसे उसके पापा को। सहमकर वह गाड़ी के शीशे में देखती है, कही उसके चेहरे पर भी तो वैसा कुछ नहीं जो उसके पापा के चेहरे पर रहता है।

इस प्रकार कुंती एक चरित्र के रूप में उभरती है जो बेटी होकर भी किसी बेटे से कम नही है। वह अपनी जिम्मेदारियों को भली प्रकार निभाती है। उसके युवा मन के सपनों को वह अपने बीमार पापा की सेवा में दबा देती है। आज के युग में कुंती एक आदर्श चरित्र है।

७.५ संदर्भ सहित व्याख्या किजिए :

"आज कितना असहाय वह अपने को महसूस कर रही थी। इतनी बड़ी दुनिया में क्या कोई भी ऐसा नहीं है जो इसकी पीठ पर आश्वासन भरा हाथ रखकर दो शब्द सान्तवाना के ही कह दे ? रोते रोते उसकी हिचकियाँ बंध गई।"

संदर्भ : प्रस्तुत गद्यांश 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' संग्रह में संकलित 'क्षय' कहानी से लिया गया है। इस कहानी की लेखिका मन्नू भण्डारी जी है। इस कहानी में पापा जी बीमारी के कारण घर के पूरे परिदृश्य के बदलने का चित्रण हैं। बीमारी घर की आर्थिक स्थिति को ही नहीं तोड़ती अपितु कहानी की नायिका कुंती को भी भीतर से तोड़कर रख देती है।

व्याख्या : पापा की बीमारी के पश्चात घर का सारा भार कुन्ती पर आ जाता है। उसके पापा क्षय रोग से पीड़ित थे और दिन-ब-दिन उनकी हालत बिगड़ती जा रही थी। अचानक एक दिन उसके पापा को खून की उल्टी होती है और कुन्ती सकते में आ जाती है। वह पागलों की तरह दौड़-भाग कर डॉक्टर, दवाई, इंजेक्शन आदि का इंतजाम करती है। विशेषज्ञ के कहने पर पापा को अस्पताल में भर्ती करवा देती है। वह सोचती है कि टुन्नी को तार देकर बुला ले पर दो दिन बाद उसकी परीक्षा समाप्त होने वाली थी अत: वह उसे नहीं बुलाती। पिता के इलाज के लिए कुन्ती सावित्री की माँ से पाँच सौ रुपए उधार मांगती है। जिस वक्त उसके पिता को कुन्ती की सबसे ज्यादा जरुरत होती है उसी वक्त सावित्री की मां उसे सावित्री को पास कराने उसके स्कूल जाने के लिए कहती है। सावित्री चाहकर भी मना नहीं कर पाती और पाँच सौ रुपए उधार लेने के कारण उसे सावित्री को पास कराने उसके स्कूल जाना ही पड़ता है। रात को सोते समय वह सोचती है कि सावित्री की मां के पाँच सौ रुपए कैसे चुकाएगी। यह सोचकर उसे रोना आ जाता है। वह एकबारगी अपने आप को बहुत असहाय महसूस करती है। उसे ऐसा कोई नजर नहीं आता जो उसकी सहायता कर सके। गाँव में उसके मामा रहते थे पर उन्होंने भी कभी घर आकर उसके पापा को देखना जरुरी नहीं समझा। कुन्ती का भाई टुन्नी भी इतना बड़ा नहीं था कि वह उसके साथ ही अपना दुख बाँट ले। इतनी बड़ी दुनिया में कोई ऐसा नहीं था जो कुन्ती को दो शब्द सान्तवना के कह दे। कुन्ती अपनी इस दशा पर रो-रोकर रह जाती है।

विशेष :

१. आर्थिक अभावों के दंश से पीड़िता कुंती की दयनीय स्थिति का चित्रण हुआ है।
२. भाषा सरल तथा शैली भावात्मक तथा करुणा से ओत-प्रोत है।

❖❖❖❖

८

तीसरा हिस्सा

इकाई की रूपरेखा :

८.० उद्देश्य
८.१ प्रस्तावना
८.२ 'तीसरा हिस्सा' कहानी की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखिए।
८.३ 'तीसरा हिस्सा'कहानी के शेराबाबू का चरित्र चित्रण
८.४ "तीसरा हिस्सा" कहानी का उद्देश्य ।

८.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई मे आप 'तीसरा हिस्सा' कहानी का मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप-

- 'तीसरा हिस्सा'कहानी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे।
- 'तीसरा हिस्सा'कहानी के प्रमुख पात्र शेरा बाबू के चरित्र की विशेषताएँ जान सकेंगे।
- इस कहानी के उद्देश्य का अध्ययन कर सकेंगे।
- कहानी के मूलपाठ की कुछ महत्त्वपूर्ण पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।

८.१ प्रस्तावना

प्रस्तुत कहानी में लेखिका ने बदलते जीवन मूल्यों का बड़ा मार्मिक चित्रण किया है। कहानी के प्रमुख पात्र शेरा बाबू एक जागरुक नागरिक के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत होते हैं। वे पत्रकारिता के माध्यम से समाज में फैले भ्रष्टाचार को उजागर करना चाहते हैं। जिस पत्रिका के लिए वे सबकुछ दांव पर लगा देते हैं, उसके बंद हो जाने पर वे टूट जाते हैं। बीबी, बच्चे दोनों पर उनका कट्रोंल नहीं रह जाता। उनकी जबान भी अधिक चलने लगती है। वे पत्रिकाओं में भ्रष्ट राजनेताओं की तस्वीरें देखकर फव्वारे की तरह गालियाँ देने लगते हैं। शेरा बाबू गलत का विरोध करने में पीछे नहीं रहते हैं। उन्होंने जिंदगी में कई समझौते किए पर देश की बिगड़ी और भ्रष्ट व्यवस्था से समझौता नहीं कर पाए। इस प्रकार शेरा बाबू के माध्यम से लेखिका ने हमारे देश के भ्रष्ट तंत्र, पत्रकारिता की चापलूसी और बढ़ते हुए लोभ में नष्ट होते हुए जीवन मूल्यों पर करारा व्यंग्य प्रहार किया है।

८.२ 'तीसरा हिस्सा' कहानी की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखिए।

'तीसरा हिस्सा' भारतीय परिवेश के विभिन्न पहलुओं पर रोशनी डालने वाली आलोचनात्मक कहानी है। शेरा बाबू के माध्यम से लेखिका ने हमारे देश के प्रदूषित होते हुए परिदृश्य को उजागर किया है। शेरा बाबू अपनी टिप्पणियों और आलोचनाओं के परिप्रेक्ष्य में असमान्य तथा एका-दिशा-दृष्टि के व्यक्ति प्रतीत होते है, लेकिन उन्होंने जिन पहलुओं पर अपनी आलोचना की सर्च-लाइट डाली है वे सब रुग्ण और सड़े हुए सामाजिक व्यवस्था की दुहाई देते है।

शेरा बाबू की महत्त्वकांक्षा बहुत उँची है। वे शब्दों की आग से सामाजिक क्रांति लाना चाहते है। १९६२ में उन्होंने चुनाव के दौरान एक पाक्षिक पत्रिका निकाली जो "एकदम आग का गोला" थी। उन्होंने ऐसे बेलगाम और दहाड़ते हुए सम्पादकीय लिखे की लोगों ने उन्हें शेर कहना शुरु कर दिया। तब से वे "शेराबाबू" हो गये। पर पैसे के अभाव में उनकी सारी गर्जना तर्जना और दहाड़ साल भर में शांत हो गई। वे कर्ज के बोझ से लद गए। बेचारे शेरा-बाबू के व्यक्तित्व के टुकड़े-टुकड़े हो गये।

इस कहानी में प्रेस की भूमिका पर बड़ी सारगर्भित टिप्पणियाँ की गई है। प्रेस चाटुकारिता में लिप्त है। प्रेस की एक बहुत जिम्मेदारी की भूमिका है, पर वह काम करता है चापलूसी का। शेरा बाबू जो स्वयं संपादक होने की महत्त्वकांक्षा वर्षों से पाले हुए हैं अपनी शेष और गाली भरी भाषा में कहते हैं -

"लानत है साले इन संपादको पर। दो गले और बेपेंदी के। अच्छा है बेटा, तुम यही करो। जो शक्तिस्थान पर बैठा है उसके चरणों चापो और अपनी सात पुश्तों को तार लेने का सिलसिला बिठा लो।"

शेरा बाबू राजनिति पर भी टिप्पणी करते हैं भरी सभा में उन्होने नेहरु सरकार की धज्जियाँ बिखेर कर रख दी थी। पर नतीजा कुछ नही निकला। वर्षों बाद तो बस गुस्सा, नफरत, हिकारत, धिक्कार से उनका मन खुद बदाता रहता है। पनिकर साहब शेराबाबू की हिम्मत की तारीफ तो करते है, पर मैंगजीन में उन्हें पार्टी का लेंस लगाने के लिए कहते हैं। शेरा बाबू संपादकीय कार्य में पार्टी का संगिल उचित नहीं मानते। शेरा बाबू नौकरशाही पर भी चोट करते है। उनकी पत्रिका का विशेषांक या "देश का नया जन्म, भ्रष्ट नौकरशाही का अंत।" उनके मन में इस भ्रष्ट्र नौकरशाही को जड़ से उखाड़ देने की भयंकर ललक है, पर तिल भर भी दिल न पाने की मजबूरी में वे तिलमिला जाते है।

शेरा बाबू की आलोचनात्मक नजर हिन्दी वालों की ओर भी घूमती है। वे कहते हैं -

"देश रसातल को जा रहा है, पर इन गधों को कोई चिंता नही लगे हुए हैं रासो की जान की। रासो प्रामाणिक है या नहीं? मान लो तुमने प्रामाणिक सिद्ध कर ही दिया तो तुम्हे कलेक्टरी मिल जायेगी। जहाँ हो, वहीं पड़े सड़ते रह जाओगे।"

यह बड़ी मार्मिक टिप्पणी है। हमारे देश में बुद्धि जीवियों, बौद्धिक कार्यो आदि के लिए कोई स्थान, आदर नहीं। यहाँ तो पद की पूजा होती है। स्वतंत्र भारत को यह पद पूजा कहाँ ले जायेगी इसकी कल्पना कंपा देने वाली हैं।

पारिवारिक जीवन शेरा बाबू की नजर से दूर नहीं। उनका लड़का सुधीर आवारागर्दी करता है। उस पर कोई कन्ट्रोल नही हैं। बदतमीजी से जवाब देता है। शेरा बाबू के सामाजिक अंत:करण को पीड़ा होती है कि युवा-वर्ग भटका हुआ है। दिगभ्रमित युवा-पीढ़ी की बात उन्हे प्रेरित करती है कि पत्रिका के माध्यम से इस वर्ग के सुधार के लिए कुछ किया जाये। आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण शेरा बाबू की पत्नी भी नाराज रहती है। कुलंद ख्यालों के बावजूद उन्हे घरवाली की झिड़कियाँ सुननी पड़ती है। 'कमाऊ बीवी' को वह कोई शेष नही पिला पाते। इसके उल्टे वह शेरा बाबू की हवा निकाल देती हैं।

मन मानकर दफ्तर में काम करते शेरा बाबू की जिन्दगी का तीसरा हिस्सा चला गया। सपनों की दुनिया में खोये हुए शेरा बाबू को लगता है कि पत्रिका स्थापित कर अपने घर की हालत सुधार देंगे और इंसानियत का संदेश प्रचारित प्रसारित करेंगे। पर वास्तविकता की दुनिया में उनके संकल्प धाराशायी हो जाते हैं।

८.३ 'तीसरा हिस्सा'कहानी के शेराबाबू का चरित्र चित्रण ।

'तीसरा हिस्सा'कहानी के प्रमुख पात्र 'शेराबाबू' हैं। शेराबाबू ने इस कहानी में भारतीय परिवेश के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला हैं। तथा हमारे देश के प्रदूषित होते हुए परिदृश्य को उजागर किया हैं पूरी कहानी में शेराबाबू हमें दयालु, राष्ट्रभक्त और अपने स्वाभिमान को बचाने का प्रयत्न करने वाले व्यक्ति के रूप में दिखाई देते हैं साथ ही वे अपनी पत्नी की सारी बातों को माना करते थे क्योंकि उनकी पत्नी कमाऊ थी।

शेराबाबू का व्यक्तित्व विद्रोह से भरा हुआ था एक स्थान पर वे कहते हैं कि, "नहीं, अब और नहीं चलेगा। बहुत बर्दाश्त कर लिया मैंने। इन लोगों ने समझ क्या रखा हैं– - - - - - - - - -" यहाँ पर शेराबाबू देश की स्थिति पर व्यंग्य कर रहे हैं उन्होंने जो भ्रष्ट नेताओं और उनकी जो स्थिति देखी हैं उसपर भी व्यग्यं किया हैं।

शेराबाबू की महत्त्वकांक्षा बहुत ऊँची हैं वे शब्दों की आग से सामाजिक क्रांति लाना चाहते थे १९६२ में उन्होंने चुनाव के दौरान एक पत्रिका निकाली जो चारों ओर "एकदम आग का गोला थी"। ऐसा बेलाग और दहाड़े हुए सम्पदकीय लिखे कि दोस्तों अैर पाठकों ने पीठ थपथपाकर दाद दी, "वाह रे शेर! " स्थिति उनका गर्जना-तर्जन ज्यादा दिन तक चल नहीं पाया साल भर में इतना ज्यादा कर्जा हो गया था कि उनको प्रेस ना चाहते हुए भी बंद करना पड़ा था।

यहाँ शेराबाबू अपने पुत्र सुधीर के भविष्य के प्रति थी चिंतित होते हैं। पुत्र के देर से आने पर वह उससे प्रश्न भी पूछकर अपने पिता होने का दायित्व पूर्ण करते हैं। यर्था ग्यारह बज रहे हैं, साहब ज़ादे को कोई पता नहीं। जैसे मेरे घर को होटल समझते हैं जब मन चाहा आ गए या फिर चले गए । कुछ हैं कि नही आज की युवा पीढ़ी को फिर अचानक उनको लगता है कि वह अपने एक बालक को लेकर इतना परेशान हूँ आज कल तो हर तिसरे घर में एक सुधीर हैं- निष्क्रिय, आवारा और भटका हुआ। आज तो हमारी युवा पीढ़ी ही बरबाद हो रही हैं, क्या कर सकते हैं अब और देखते ही देखते उनकी आँखो के सामने बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा- 'दिग्भतरमित युवा पिढ़ी'कौंध गया ।"

शेराबाबू एक दयालु प्रवृत्ति के भी व्यक्ति थे । जब वो ऑफिस, जाते है तो उनका जो चपरासी था उससे मिलते हैं उसकी तबियत खराब भी उससे मिलते ही उसकी तबियत के बारे में पूछते हैं। तथा कहते हैं की दो-तीन दिन और आराम करना चाहिए था।

शेराबाबू राजनीति पर भी टिप्पणी करते हैं। भरी सभा में उन्होने नेहरू सरकार की धज्जियाँ बिखेर कर रख दी थी पर नतीजा कुछ नही निकला । वर्षों बाद तो बढ़ा गुस्सा, नफरत, हिकारत, धिक्कार से उसका मन खदबदाता रहता है । पनिकर साहब शेराबाबू की हिम्मत की तारीफ तो करते हैं। शेराबाबू संपादकीय कार्य में पार्टी का एंगिल उचित नही मानते। शेराबाबू नौकरशाही पर भी चोट करते है। उनकी पत्रिका का विशेषांक था "देश का नया जन्म, भ्रष्ट-नौकरशाही का अंत" उनके मन में इस भ्रष्ट नोकरशाही को जड़ से उखाड़ देने की भयंकर ललक है, लेकिन आर्थिक मजबूरी के कारण वो ऐसा नहीं कर पाते हैं।

शेराबाबू की आलोचनात्मक नजर हिंदी वालों की ओर भी घूमती है वे कहते हैं, कि "देश रसाला रसातल को जा रहा है, पर इन गधों को कोई चिंता नहीं। लगे हुए हैं रासो की जान् को रासों प्रामाणिक हैं या नहीं। ? मान लो तुमने प्रामाणिक सिद्ध कर ही दिया तो कौन तुम्हे कलेक्टरी मिल जाएंगी ? जहाँ हो, वही सड़ते रहोगे।"

यहीं बड़ी दुखद स्थिति है हमारे देश में बुद्धि जीवियों, बौद्धीक कार्यो आदि के लिए कोई स्थान, आदर नहीं, यहाँ तो पद की पूजा होती हैं। स्वतंत्र भारत को यह पद पूजा कहाँ ले जायेगी इसकी कल्पना भी कया देने वाली है।

मान-मानकर दफ्तर में काम करते शेराबाबू की जिन्दगी का तीसरा हिस्सा चला गया। सपनों की दुनिया में खोये हुए शेराबाबू को लगता है कि परिका स्थापित कर अपने घर की हालत सुधार देंगे और इंसानियत का संदेश प्रचारित-प्रसारित करेंगे। पर वास्तविकता की दुनिया में उनके संकल्प धाराशायी हो जाते हैं।

इस प्रकार, "तीसरा हिस्सा" कहानी में शेरेबाबू के चरित्र का विस्तृत वर्णन किया गया है।

८.४ "तीसरा हिस्सा" कहानी का उद्देश्य ।

"तीसरा हिस्सा" भारतीय परिवेश के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालती हैं। इस कहानी में लेखिका 'मन्नू भंडारी' ने हमारे भारतीय समाज को प्रदूषित परिदृश्य को हमारे सामने उजाकर किया हैं। कम्पनी के प्रमुखपात्र शेराबाबू समाज की बुराई को हटाने में लगे रहते हैं, किंतु अंत में वे इस लड़ाई में अकेले ही रह जाते हैं। उनके दिल में कुछ कर जाने का जजबा हैं। पर आमदनी कम होने के कारण उनकी महत्त्वपूर्ण कांक्षा पूर्ण नहीं हो पाती हैं। वे एक ही दिशा दृष्टी के व्यक्ति प्रतीत होते हैं, लेकिन उन्होने जिन पहलुओं पर प्रकाश डाला हैं वे सब रूग्ण और सड़े हुए सामाजिक व्यवस्था की दुहाई देते हैं।

'शेराबाबू' एक महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति के रूप में हमारे सामने आते हैं। उनके व्यक्तित्व में देशप्रेम की झलक हमें दिखाई देती हैं। १९६२ में उन्होने चुनाव के दौरान एक पत्रिका निकाली जो "एकदम आग का गोला" थी। उन्होंने ऐसे बेलगाम और दहाड़ते सम्पदकीय हुए लिखे कि लोगों ने उन्हें 'शेराबाबू' बोलना शुरू कर दिया पर पैसे के अभाव के कारण उनकी वह गर्जन-तर्जन सब व्यर्थ ही रह गयी। वे कर्ज के बोझ से लद गए बेचारे शेराबाबू के व्यक्तित्व के टुकड़े-टुकड़े हो गए।

यह बड़ी मार्मिक टिप्पणी हैं हमारे देश में बुद्धि जीवियों, बौद्धिक कार्यो आदि के लिए कोई स्थान आदर नहीं। यहाँ तो पद की पूजा होती हैं स्वतंत्र भारत को यह पद पूजा कहाँ ले जायेगी इसकी कल्पना कमा देने वाली हैं।

इस कहानी में ऐक ऐसी बात पर भी नजर डाली गयी है जो आज हमारे सामने एक गंभीर समस्या हैं जिससे हर लोगो को नौकरी प्रदान हो जाती हैं जो कही से भी उस पद के लायक नही हैं और जो हैं वो वहाँ तक पहुँच नहीं पाते यहाँ पर शेराबाबू जी ने कहा हैं कि- 'बड़े बाप की बेटी या अफसर संग लेटी।' सामाजिक जीवन के एक घिनौने चित्र को हमारे सामने लाता है, जो कहीं ना कही सच भी होता हैं।

शेराबाबू को एक पुत्र हैं जिस का नाम सुधीर है उसे देखकर शेराबाबू को युवा पीढ़ी की बड़ी चिंता होती हैं वे पुत्र के देर से घर आने पर कहते हैं कि इसका न कोई समय हैं न रहने का ढंग जैसे मेरा घर नहीं एक होटल हैं जब मन आया आए या फिर चले गए। उन्हे अचानक अपनी पत्रिका का ख्याल आते ही जैसे घर की चहारदीवारी से मुक्त होकर जैसे आसमान में तैरने लगे- व्यापक, विस्तृत। वो सोचते है कि सुधीर जैसा बालक तो हर तीसरे घर में पाया जाता हैं तो क्या करे मेरे सामने इतनी बड़ी समस्या हैं और मैं एक छोटीसी बात पर इतनी चिंता कर रहा हूँ और देखते ही देखते उनकी आँखो के सामे बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा, 'दिग्भ्रमित युवा पीढ़ी' कौंध गया।

अपने विचारो को वे अपने मित्र के पास प्रकट करते थे पूरे दिन जो अपने दिल में दबाये रहते थे। वह मिश्रा जी के सामने व्यक्त करते थे उनके अनुसार आजकल की पत्रिकाओं में-

"जनता पार्टी के मंत्रियों की तस्वीरे- - - - - - उनकी जीवनियाँ - - - - - उनके इंटरव्यूज - - - - - - - उनकी प्रशंसा - - - - - - - प्रशस्ति - - - - -" आदि को महत्त्व दिया जाता हैं।

इस प्रकार "तीसरा हिस्सा" कहानी का उद्देश्य हैं कि हममें अगर देश प्रेम की भावना आ जाए तो भारत देश को हम भ्रष्ट्र और घूस खोर लोगों से मुक्त कर सकते हैं, पर इसके लिए-

"हम सब को एक होना ही होगा"

९

त्रिशंकु

इकाई की रूपरेखा :

९.० उद्देश्य
९.१ प्रस्तावना
९.२ 'त्रिशंकु' कहानी की कथावस्तु
९.३ 'त्रिशंकु' कहानी में दो पीढ़ियों का अंतर
९.४ 'त्रिशंकु' कहानी का उद्देश
९.५ संदर्भ सहित व्याख्या किजिए

९.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई मे आप 'त्रिशंकु' कहानी का मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप-

- इस कहानी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे।
- 'त्रिशंकु' कहानी में दो पीढ़ियों के अंतर को दर्शाती है इस विषय को जान सकेंगे।
- कहानी के उद्देश्य को जान सकेंगे।
- कहानी के मूलपाठ की कुछ महत्त्वपूर्ण पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।

९.१ प्रस्तावना

प्रस्तुत कहानी में लेखिका ने तनु और उसकी माँ के माध्यम से दो पीढ़ियों के मध्य के अंतराल को रेखांकित किया है। तनु के ममी और पापा दोनों ही आधुनिक विचारो के हैं। तनु की मम्मी ने अपने पिता से विरोध करके प्रेम विवाह किया था। इस बात पर तनु के मम्मी-पापा को गर्व था। अपने माता-पिता की तरह तनु के विचार भी उन्मुक्त थे। तनु की मम्मी तनु को छेड़नेवाले लड़कों को घर बुलाकर सबका तनु से परिचय कराती है। उन्हीं में से एक शेखर और तनु के बीच जब नजदीकियाँ बढ़ने लगती है और तनु की मम्मी को मुहल्लेवालों से इसकी शिकायत मिलने लगती है तब उनकी सारी आधुनिकता धरी की धरी रह जाती है। वह तनु को खूब डाँटती हैं। तनु को अपनी मम्मी के भीतर नाना नजर आते हैं। अपने मम्मी के इस दोहरे व्यवहार से तनु के मन में विद्रोह की भावना जागती है। वह उन्हें दिखा देना चाहती हैं कि उनकी बेटी उनके ही नक्शे कदम पर चलेगी। अत: दो पीढ़ियों के मध्य टकराव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

९.२ त्रिशंकु कहानी की कथावस्तु

'त्रिशंकु' कहानीं में सिद्धांत और व्यवहार के बीच विद्यमान अन्तराल को मुख्य रूप से रेखांकित किया गया है। पुत्री तनु अपने माता-पिता की तथाकथित तथा मिथ्या आधुनिकता का निर्मम भांड़ाफोड़ करती है। उसकी शिकायत का मुख्य आधार है उसके माता-पिता के सिद्धांत और व्यवहार में लम्बी दूरी। उसका परिवार परंपरा और आधुनिकता के कुहासे से आच्छादित है, परंतु वैचारिक स्तर पर उसके माता-पिता आधुनिकता की साकार मूर्ति लगते हैं। उनकी आलोचना करने में तनु का स्वर काफी तीखा हैं।

तनु के माता-पिता का घर बुद्धि जीवियों का अखाड़ा है। ऐसा लगता है कि बुद्धिजीवियों के लिए काम करना-शायद वर्जित है। माँ तीन घंटे की तफरीह नूमा नौकरी के बाद मुक्त और पिता दो कदम और आगे। उनका बस चले तो वे नहाए भी अपनी मेज पर। बुद्धिजीवियों के इस घर में आधुनिकता की सबसे ज्यादा कताई होती है। यह ऐसी-वैसी आधुनिकता नही, ठेठ बुद्धिजीवियों की आधुनिकता है। इस आधुनिकता में विशेष रूप से लीक छोड़ने की बात सुनाई देती है -

"आप लीक को दुलत्ती झाड़ते आइये, सिर आँखो पर तीक से चिपक कर आइये, दुलत्ती खाइये।"

यह बहसों में दुनिया जहान के विषय पीसे जाते है और सबसे अधिक प्रिय विषय है शादी। इस आधुनिकता की बहस में शादी यानी बर्बादी। स्त्रियाँ एक तरफ और पुरुष दूसरी तरफ। ऐसा लगता है कि एक दो लोग तलाक दे बैठेंगे। पर व्यवहार में यह हादसा कभी नहीं हुआ।

तनु के घर में बुद्धिजीवियों की मजलिस ब्याह को कोसती है और फ्री लव और फ्री सेक्स को पोसती है उसके पापा इसके बड़े समर्थक हैं। पर जब दूर की एक "दिदिया" ने इस उदान्त सिद्धांत पर अमल कर डाला तो सारी आधुनिकता धम्म हो गई। उसके मम्मी-पापा का प्रेम विवाह हुआ था, पर उनके बीच प्रेम कम औ बहस ज्यादा होती है। इन लोगो को गर्व है कि रूढ़िवादी नाना से मोर्चा लिया था लीक से हटकर ब्याह करने का संतोष उनके चेहरे पर झलक उठता है।

इस घर में संकट तब आता है जब मुक्त और स्वच्छंद ढंग से पली तनु सामने रह रहे कॉलेज के लड़को का आकर्षण केन्द्र बनती है, और स्वयं उनकी ओर आकर्षित होती है। सामाजिक माहौल परंपरावादी है। सिर्फ तनु के घर में आधुनिकता की चादर टँगी है। यह मुहल्ला हाथरस, खुरजा के रुढ़िवादी लालाओं का है। उन्हे तनु के घर की आधुनिकता पसंद नही, जहाँ लड़के-लड़कियाँ मिलते-जुलते है। तनु के माता-पिता की आधुनिकता झलकती है जब वह शिकायत करती है कि सामने के लड़के उस पर सिर्फ रिमार्क करते हैं। उसकी मम्मी "मुक्त रहो और बच्चों को मुक्त रखो" के सिद्धांत के अनुसार उन लड़को को बुलाकर चाय पिलाती है और तनु से परिचय कराती है। आगे चलकर जब तनु और शेखर में प्रेमांकुरण होता है तो उसकी मम्मी का रुख बदलने लगता है। वह तनु को डांटती है -

"तुमको छूट दी .....आजादी दी, पर इसका यह मतलब नही कि तुम इसका नाजायज फायदा उठाओ। ..... बित्ते भर की लड़की और करतब देखो इनके जितनी छूट दो उतने ही पैर पसरते जा रहे है इनके। एक झापड़ दूंगी तो सारा रोमांस झड़ जाएगा दो मिनट में....."

अपने मम्मी के इस दोहरे व्यवहार से तनु के मन में विद्रोही की भावना जागती है। वह उनसे मोर्चा लेना चाहती है। वह दिखा देना चाहती है कि उनकी बेटी उनके नक्शे कदम पर चलेगी। सारा मुहल्ला इस बात से चकित है कि ममी जो आधुनिकता की डींग हाँका करती थी। अब रुढ़िवादी मुहल्ले वालों के सुर में सुर मिला रही हैं। सबसे आश्चर्य की बात तब होती हैं जब ममी शेखर और उसके मित्रों को बुलाकर उनके छुट्टियों में घर जाने के समय उन्हे दावत देती है। तनु सोचती है -

"नाना पूरी तरह नाना थे-शत-प्रतिशत-और इसी से ममी के लिए लड़ना कितना आसान हो गया होगा। पर इन ममी से लड़ा भी कैसे जाये जो एक पल नाना होकर जीती है एक पल ममी होकर।"

इस प्रकार लेखिका ने पुरातनता और आधुनिकता के बीच लटकी तनु की त्रिशंकु जैसी स्थिति को स्पष्ट किया है। भारतीय समाज की यही विडंबना है कि अपने जीवन में लीक छोड़कर चलने वाले लोग दूसरों को जीवन में लीक पर चलने के लिए मजबूर करते हैं।

९.३ 'त्रिशंकु' कहानी में दो पीढ़ियों का अंतर ।

'त्रिशंकु' कहानी में तनु और उसकी माँ के माध्यम से दो पीढ़ियों के अंतर को स्पष्ट किया गया है। तनु के माता-पिता दोनों ही आधुनिक विचार के है। उनका घर बुद्धिजीवियों का अखाड़ा था। उनके यहाँ सबसे अधिक चर्चा आधुनिकता पर ही होती थी। आधुनिकता में सबसे ज्यादा लीक छोड़ने की बात ही सुनाई देती थी। दुनिया-जहाज के प्रिय विषयों में से सबसे अधिक प्रिय 'शादी' विषय पर सबसे अधिक बहस होती थी। यद्यपि वे सभी अधिकतर विवाहित थे तथापि विवाह संस्था को ही खोखली बताया जाता, पति-पत्नी का संबध नकली और थोपा हुआ बताया जाता। इन गरमागरम बहसों के बीच तनु को लगता कि जरुर एक-दो लोग का तलाक हो जाएगा पर ऐसा कभी हुआ नहीं।

तनु की मम्मी ने प्रेम विवाह किया था। तनु के नाना उस विवाह के खिलाफ थे। विवाह के अपने इस निर्णय पर ममी को नाना से बहुत बहस करनी पड़ी थी। अपने प्रेम-विवाह का जिक्र तनु की ममी बड़े गर्व से किया करती। नाना से मोर्चा लेने की बात को वह इतने बार दोहराती हैं कि तनु को वो कंठस्थ हो जाता है। अपने प्रेम विवाह को लेकर कुछ लीक से हटकर करने का संतोष उनके चेहरे पर झलक उठता है। इतने मुक्त और स्वतंत्र वातावरण में पली बड़ी होने के कारण तनु में भी मुक्तता का आचरण होना स्वाभाविक था।

तनु के माता-पिता आधुनिक विचारों के होने के कारण फ्री लव और फ्री सेक्स के पक्ष में थे। परंतु तनु के संदर्भ में वे इस बात को पचा नहीं पाते। अपने आधुनिक विचारों के चलते तनु की ममी, तनु को छेड़ने वाले लड़कों से उसकी दोस्ती तो करा देती है पर तनु और शेखर

के प्रेम को स्वीकार नहीं कर पाती। ऐसा नहीं था कि वे प्रेम-विवाह की विरोधी थी क्योंकि उन्होंने तो स्वयं प्रेम विवाह किया था परंतु वे तनु को अभी इन सब चीजों के लिए छोटी मानती थी। अपनी पीढ़ी के अनुसार तनु भी अपना तर्क रखती है,

"मम्मी, तुम्हारी पीढ़ी जो काम पच्चीस साल की उम्र में करती थी, हमारी उसे पन्द्रह साल की उम्र में ही करेगी, इसे तुम क्यों नहीं समझती।"

तनु मम्मी से इस विषय पर खूलकर बात करना चाहती है पर वह देखती है कि मम्मी तो कहीं है ही नही, मम्मी के रुप में नाना बोल रहे हैं। जो मम्मी तनु को पूरी छूट देती है वही अब उस पर शक की नजर रखने लगती है। तनु हमेशा ही अपनी मम्मी के साथ खुलकर बात किया करती थी। वह अपनी मम्मी को समझाना चाहती थी कि उसके और शेखर के बीच में दोस्ती हैं। और दोस्ती है तो यह सब होगा ही। पर तभी खयाल आता है कि मम्मी हैं ही कहाँ। मम्मी के भीतर तो नानाजी प्रवेश कर चुके हैं। तनु की मम्मी, मम्मी बन जाने पर प्यार करती थी, स्थितियों को सहजता से लेती थीं और नाना बन जाने पर विरोध करने लगती थीं। तनु को इस बात से चिढ़ होती थी कि इतने ही बन्धन लगाकर रखना था तो शुरु से वैसे पालतीं। क्यों झूठ-मूठ आजादी देने की बातें करती-सिखाती रहीं। सारे दिन घर में हँसती-खिलखिलाती रहने वाली तनु गुमसुम सी रहने लगती है। उसके मन में हालांकि भविष्य की कोई निश्चित रूपरेखा नहीं है परंतु वह भी अपने मन की करने की ठान लेती है। इस प्रकार तनु और उसकी मम्मी के बीच विचारों को लेकर मतभेद शुरु हो जाते हैं।

अत: देखा जा सकता है कि खुले विचारों के होने पर भी पीढ़ीगत अन्तर चलता ही रहता है। समय के साथ-साथ मूल्य बड़ी तेजी से बदलते है और इन्हें व्यावहारिक रुप में अपना न पाने का कारण ही ये मूल्य दो पीढ़ियों की टकराहट का कारण बनते हैं।

९.४ त्रिशंकु कहानी का उद्देश्य ।

त्रिशंकु कहानी में सिद्धांत और व्यवहार के बीच विद्यमान अन्तराल को मुख्य रूप से रेखांकित किया गया हैं। पुत्री तनु जो इस कहानी की प्रमुख 'नायिका'हैं। उनका घर बुद्धिजीवियों का आखाड़ा था। आधुनिकता की समसे ज्यादा लीक छोड़ने की बात ही सुनाई देती हैं। उसका परिवार परंपरा और आधुनिकता के कुहासे से आच्छादित हैं, परंतु व्यवहारिकता के स्तर पर उसके माता-पिता आधुनिकता की साकार मूर्ति लगते हैं। उनकी आलोचना करने में तनु का स्वर काफी तीखा हैं।

तनु की मम्मी ने प्रेम विवाह किया था। तनु के नाना उस विवाह के खिलाफ थे। अपने इत निर्णय पर मम्मी को नाना से बहुत बहस करनी पड़ी थी। अपने प्रेम-विवाह का जिक्र तनु की मम्मी बड़े ही गर्व को वह इतनी बार दोहराती हैं की तनु को वो कंठस्थ हो जात हैं। अपने प्रेम-विवाह को लेकर कुछ लीक से हटकर करने का संतोष उनके चेहरे पर झलक उठता हैं। इतने मुक्त और स्वतंत्र वातावरण में पत्नी बड़ी होने के कारण तनु में भी मुक्तता का आचरण होना स्वाभाविक था।

तनु के माता-पिता आधुनिक विचारों के होने के कारण फ्री लव और फ्री सेक्स के पक्ष में थे परंतु तनु के संदर्भ में उनके विचार पूरी तरह बदल जाते हैं। अपने आधुनिकतावादी विचारों

के चलते तनु की मम्मी, प्रेम विवाह की विरोधी नहीं थी क्योंकि उन्होने तो स्वयं प्रेम-विवाह किया था परंतु वे तनु को अभी इन सब चीजों के लिए छोटी मानती भी। अपनी पीढ़ी के अनुसार तनु भी अपना तर्क रखती है-

"मम्मी, तुम्हारी पीढ़ी जो काम पच्चीस साल की उम्र में करती थी, हमारी उसे पंद्रह साल की उम्र में ही करेगी, इसे तुम क्यों नहीं समझती।"

अत: देखा जा सकता है कि खुले विचारों के होने पर भी पीढ़ीगत अन्तर चलता ही रहता है। समय के साथ-साथ मूल्य बड़ी तेजी से बदलते हैं और इन्हे व्यवहारिक रूप में अपना न पाने कारण ही मे मूल्य दी पीढ़ियो का टकराहट का कारण बनते हैं इन बहसों में दुनिया जहान के विषय पीसे जाते हैं और सबसे अधिक प्रिय विषय हैं-शादी। इस आधुनिकता की बहस में शादी यानी बर्बादी। स्त्रियाँ एक तरफ और पुरुष दूसरी तरफ ऐसा लगता हैं कि एक दो लोग तलाक दे बैठेंगे पर व्यवहार में यह हादसा कभी नही हुआ।

'त्रिशंकु' कहानी में यह एक बात हमारे समान के सामने आती हैं कि जब हम दूसरों को हिदायत देते हैं अर्थात जब वही कम कोई दूसरा करता है तो हम को बुरा नही लगता है और वही कोई अपना करता है तो बहुत लगता हैं। लेकिन इत ओर भी संकेत किया हैं।

९.५ संदर्भ सहित व्याख्या किजिए।

"बित्ते भर की लड़की और करतब देखो इनके! जितनी छूट दो उतने ही पैर पसरते जा रहे हैं इनके। एक झापड़ दूँगी तो सारा रोमांस झड़ जाएगा दो मिनट में..."

संदर्भ : प्रस्तुत गद्यांश 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' संग्रह में संकलित 'त्रिशंकु' कहानी से लिया गया है। इसकी लेखिका मन्नू भण्डारी जी हैं। मन्नू भण्डारी की कहानियाँ सामाजिक धारणाओं को प्रतिबिम्बित करती है। 'त्रिशंकु' भी एक ऐसी ही कहानी है। उपर्युक्त कथनों में तनु की मम्मी की कथनी और करनी का भेद स्पष्ट रुप से झलकता है। संकट-स्थिति के समय बड़े-बड़े आधुनिकतावादी परम्परा के सामने मैदान छोड़कर भाग जाते है। तनु की मम्मी उनमें से ही एक है। कहने को तो वो खुद को आधुनिक युग की 'मॉडर्न' विचारोंवाली कहती है परंतु यही यही आधुनिकता जब उनकी बेटी तनु अपनाने लगती है तो वे क्रोध से भर जाती है।

व्याख्या : तनु जब अपनी मम्मी को बताती है कि सामने वाले लड़के उसे देखकर कमेंट पास करते हैं, फब्तियाँ कसते हैं,तो इस बात को वह बहुत अलग ढंग से लेती है। आधुनिक विचारों की मम्मी उन्हें डाँटने की बजाय उन लड़को को चाय पर बुलाती है तथा तनु से दोस्ती करवाती है। वह उनसे कहती है कि जब उनका मन करे वे चले आया करें इससे हमारी तनु बिटिया को अच्छी कम्पनी मिलेगी। लड़को का तनु के घर आना-जाना शुरु हो गया। उनमें से एक लड़के शेखर के साथ तनु की दोस्ती गहरी हुई और फिर यह दोस्ती प्रेम में बदल गई। यह सच्चाई उन्हें बहुत कड़वी लगने लगी। लड़कों का घर में आना, उनके घर जान, उनके साथ घूमना-फिरना इत्यादी बातों को तनु की मम्मी गलत नहीं मानती पर मुहल्लेवालों की उस पर प्रतिक्रिया सुनकर इसे सहजता से नहीं ले पाती। वह क्रोध में तनु से कहती हैं कि छूट मिलने का ये मतलब नहीं कि उसका नाजायज फायदा उठाया जाए। ये अभी तनु की पढ़ने-लिखने की उम्र थी। इस कच्ची उम्र में तनु की ममी शेखर के साथ उसके संबंध को स्वीकार नहीं कर पातीं। उनके भीतर

रह रह कर तनु के नाना आ जाते थे। तनु के नाना पुराने विचारधारा के थे। तनु की माँ ने उनके खिलाफ जाकर प्रेम-विवाह किया था। तनु की माँ तनु को प्यार से समझाने की कोशिश करती हैं परंतु जब उनमें नाना प्रवेश कर जाते थे तो वे इसी प्रकार उस पर क्रोधित होती थी।

विशेष :

१. तनु की मम्मी वैचारिक स्तर पर आधुनिकताकी साकार मुर्ति थी। परंतु व्यावहारिक स्तर पर वे इस सिद्धांत का पालन करने में असमर्थ दिखाई देती हैं।

२. यहाँ बदलते जीवन मूल्यों की टकराहट और उससे उत्पन्न परिस्थिति का बड़ी सफलता पूर्वक चित्रण किया गया है।

१०

शायद

इकाई की रूपरेखा :

१०.० उद्देश्य
१०.१ प्रस्तावना
१०.२ 'शायद' कहानी में चित्रित यांत्रिकता ।
१०.३ 'शायद' कहानी में राखाल के वापस जहाज पर जाने की परिस्थिति
१०.४ 'शायद' कहानी में राखाल के मध्यमवर्गीय जीवन की कठिनाईयों का वर्णन
१०.५ मन्नू भण्डारी की कहानी कला

१०.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई मे आप 'शायद' कहानी का मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप-

- 'शायद' कहानी में चित्रित यांत्रिकता का विश्लेषण कर सकेंगे।
- कहानी में मध्यमवर्गीय जीवन की कठिनाईयों को जान सकेंगे।
- कहानी के नायक के वापस जहाज पर जाने की परिस्थिती का अध्ययन कर सकेंगे।
- कहानी के मूलपाठ की कुछ महत्त्वपूर्ण पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।
- अंत में मन्नु भंडारी की कहानी कला का विश्लेषण कर सकेंगे।

१०.१ प्रस्तावना

'शायद' कहानी का नायक राखाल सागरिक जहाज पर काम करता है। हर दो या तीन वर्ष बाद वह अपने घर आता है। इस बार वह अपनी पत्नी को बिना बताए घर आ जाता है। घर की स्थिति देख उसे दुख और आश्चर्य होता है। उसकी पत्नी माला इतनी कामकाजी है कि उसकी भावनाओं को पढ़ तक नहीं पाती। तीन सालों के बीच पारिवारिक व्यथा और बच्चों की समस्या उसे यांत्रिक बना देती है। राखाल अपने पारिवारिक ढर्रे को बदलने की कोशिश करता है। उसमें वह सफल भी होता है पर तब तक उसकी छुट्टी समाप्त हो जाती है। आर्थिक रुप से सुदृढ़ न होना उसे कहीं न कहीं कचोटता है। घर और जहाज दोनों जगह की मशीनी जिंदगी उसे रास नहीं आती है। परिवार के प्रति अपने कर्तव्यों को निभाने के बाद भी उसे तरेसा लगता है कि वह हमेशा के लिए परिवार को अपने नियमों में बाँधकर नही रख पाएगा। अत: राखाल जहाज पर ही यंत्रवत जीवन बिताने के लिए विवश हो जाता है।

१०.२ 'शायद' कहानी में चित्रित यांत्रिकता ।

'शायद' कहानी में कई बातों का समावेश है किन्तु यंत्रवत् जीवन और आर्थिक पक्ष अधिक उभरा है। कहानी का नामक राखाल दैत्यकार मशीनों से मुक्ति पाकर तीन साल विदेश रहने के बाद अपने घर लौटता है क्योंकि बीवी-बच्चो के पास आ रहा है। फ्लैश बैंक मे उसे याद आता है उसकी पत्नी माला बच्चों तथा आर्थिक संकोच के बीच जूझती इतना समय नहीं पाती कि एक लम्बा पत्र लिख सके। सारी चिट्ठियों में घर की कठिनाइयों की, बढ़ती महंगाई और बच्चो के बढ़ने आवारापन की बातें होती हैं। इसका मनोवैज्ञानिक असर उसके मन पर पड़ता है। वह बहुत ऊबने लगता है। हर पल में मशीनी ढंग से लिखा हुआ संबोधन "प्राणनाथ" अब "निष्प्राण" हो चुका है। लेखिका के अनुसार,

"अधिकांश मध्यमवर्गीय परिवारों की स्थिति यही है कि हम अपने-अपने ढंग से गृहस्थी की मशीनों में बस तेल-भर देते रहते हैं। और संबंधो के नाजुक सूत्र मशीनी जिन्दगी में अनजाने ही कहीं कुचल जाते हैं।"

दस साल पहले जब वह जहाज पर नौकरी करने आया था, तो माला की चिठ्ठियों में बड़ा आकर्षक था, कई-कई बार पढ़ता था । लेकिन अब मशीनों के बीच रहकर मशीन बनकर रह गई थी। कई बच्चे महंगाई की मार, छोटी बच्ची बुलबुल की मौत - मे सब उसे तोड़ कर रख देते हैं। राखाल घर पहुँचता हे। माला आश्चर्य - उल्लास से भर जाती है, पर गृहस्थी की गहरी मार उसकी नारीत्व की संवेदना छीन लेती है। समय की मार के निशान - "चेहरे पर झुर्रियाँ——— गालों पर पड़े काले -काले चकन्ते, रूखे बालों में से झाँकते कई सफेद बाल"- उसके चेहरे पर अंकित है।

राखाल दूसरे दिन बच्चों को कपड़े, फिलौने, पेन, रिबन, जरसी, मोजे वगैरह खरीद देता है। माला भीतर-ही-भीतर गदगद हो जाती है । राखाल माला को घड़ी देता है। आर्थिक तंगी से त्रस्त-माला कहती है,

"मैं अब क्या घड़ी लगाऊँगी। चलो रीना के काम आयेगी।" उसे कर्ज का बोझ सताता है। शंकर के कर्ज चुकाने की बात सुनकर राखाल को अच्छा नहीं लगता । उसे परिवार असह्य होने लगता है। रीना की शादी की चिंता उसे सताने लगती है। उसे रंजू की बात याद आती है कि, जहाज वालों को शादी करनी ही नही चाहिए। संक्षेप में, जब तक राखाल घर पर है, परिवार की समस्याएँ उसे घेरे रहती हैं। स्वीट होम में कोई मिंठास नही मिलता। माला इस प्रकार के स्वीट - होम में कैसे जीती है यह उसकी नारी सुलभ सहनशीलता तथा वात्सल्य ही है जो परिवार के बोझिल जहाज को खींच रही हैं।

राखाल के जहाज जाने का वक्त आ जाता है। वह गृहस्थी और जहाज की नौकरी के बीच खड़ा बेबसी की तस्वीर है। विदाई के समय हिचकियों के बीच माला के शब्द सुनाई देते हैं-

"अपना ख्याल रखना——————— चिट्ठी जल्दी-जल्दी भेजना ——————— शंकर के रूममे जाते ही भेजना इस बार तीन साल मत लगाना "

आर्थिक तंगी की काली छाया राखा की पीछा नहीं छोड़ती। जहाज में ही उसे राहत मिलती हैं यही उसकी शरणस्थली हैं । इस प्रकार लेखिका ने बताया है कि आर्थिक अभावो का

देश कितना भयानक होता है इसमें एक जीता-जागता मनुष्य भी मशीनी जिंदगी जीने के लिए विवश हो जाता हैं।

१०.३ मन्नू भण्डारी की कहानी कला ।

मन्नू भण्डारी आज की महिला कहानीकारों में शीर्षस्थ हैं। नई कहानी के विकास और उसके परिवर्तनकारी रूप को गति देने में मन्नू भण्डारी प्रमुख कहानीकार हैं। उन्होंने हिन्दी कहानी के नर प्रतिमानों की तलाश में नए प्रयोग किये । उनकी दृष्टि आधुनिक है, जीवन को उसके सम्पूर्ण बारीकियों में ढूँढ़ कर उपस्थित करती है। एक प्रमुख बात यह है की उनकी अधिकतर कहानियों में अन्तर्मुखी भावनाओं का विश्लेषण है इसका कारण है उनका आत्मपरक दृष्टिकोण। विघटित होते हुए परिवार और व्यक्ति के आपसी संबंधों और उनके बीच बढ़ते जा रहे तनावों का सूक्ष्म चित्रण मन्नू भण्डारी के कथा साहित्य मे मिलता है।

मन्नू भण्डारी की पहली कहानी 'नया समाज' १९५४ ई. में छपी, लेकिन उन्हें यहा १९५६ मे प्रकाशित "मै हार गई" से मिला। पिछले तीस-बत्तीस वर्षों में मन्नू भण्डारी ने लगभग ५० कहानियाँ लिखीं हैं। उनके प्रकाशित कहानी संग्रह इस प्रकार है-

१) मैं हार गई, २) तीन निगाहों की एक तस्वीर, ३) यही सच है,
४) एक प्लेट सैलाब, ५) त्रिशंकु।

मन्नू भण्डारी छठवे दशक के हिन्दी कथा-साहित्य की उन संवेदनशील कथाकारों में है जिन्होंने अपनी कृतियों में समकालीन परिस्थितियों का सशसक्त, निष्पक्ष, निर्भीक तथा जीवंत चित्रण किया है। डॉ. रामविलास शर्मा के मतानुसार,

"पिछले तीन दशकों में जितनी महिलाएँ आगे बढ़ी हैं, मन्नू भण्डारी उनमें समसे आगे है। बाहरी सामाजिक परिवेश की व्यापक जानकारी के साथ नारी के मन में गहरे पैठने की क्षमता ने उनके साहित्य को अद्‌भुत शक्ति प्रदान की है।" कुछ समीक्षको ने मन्नू भण्डारी की कहानियों को मुख्यतः वैयक्तिक चेतना पर आधारित माना है, लेकिन वैयक्तिक चेतना को ढूँढ़ निकालनेवाले समीक्षक भी मानते हैं कि वैयक्तिकता अन्ततः सामाजिक संदर्भो से जुड़ जाती है। मन्नू जी की कहानियों में व्यक्ति और समाज संश्लिष्ट है और एकदम निजी एवम् वैयक्तिक समस्याएँ कुछ ही कहानियों में उभरती है । उनकी कहानियाँ मुख्यतः भारतीय नारी की नियति को उसके विभिन्न संदर्भों में देखती और आँकती हैं। मन्नूजी दाम्पत्य-संबंधो से या काम-संबंधो से इतर नारी समस्याओं को कुछ इस तरह से कथात्मक रूप देती है कि वे समस्याएं न केवल नारी की अपितु जनसाधारण की समस्याएँ बन जाती हैं।

नर-नारी के काम संबंधों पर आधारित कहानियों में 'एक बार और। 'यही सच है', 'स्त्री-सुबोधिनी', 'तीसरा आदमी' आदि कहानियाँ दृष्टव्य है। 'तीसरा आदमी' और 'ऊँचाई' में विवाहित जीवन की स्थितियाँ हैं, जबकि अन्य कहानियों में अविवाहित युवतियों की काम विषयक गुत्थियां हैं। 'यही सच है' कहानी में उस 'मिथ'को तोड़ा गया है जिसमें प्रेमी दूर-दूर रहकर आहें भरता है; कुर्बानी देता है, देह-सामीप्य कोई मायने नहीं रखता है। 'त्रिशंकु'में तनु को मनी का विरोध सहना पड़ता है, जिन्होंने स्वयं प्रेम विवाह किया था। लेकिन तनु की परेशानी पुरानी मानसिकता का विरोध नहीं है, उसे तो वह सरलता से कर सकती है, लेकिन जहाँ 'पुराना' और

'नया' दोनों की बात हो, वहाँ उलझन वढ़ जाती है। त्रिशंकु की थीम को बृहत्तर अर्थ निया जारा और इसे तत्कालीन राज-व्यवस्था के संदर्भ में देखा जाए तो व्यंग्य करती हुई प्रतीत होती है। व्यवस्था का चरित्र न तो पूरी तरह जनवादी है और न एकदम जन-विरोधी । सर्वथा जन-विरोधी व्यवस्था से जूझना आसान नही होता। वैसे व्यवस्था के जन-विरोधी तेवर की पहचान 'तीसरा हिस्सा', 'राजा', 'खोटे सिक्के', जैसी कहानियों में स्पष्ट हुई है।

महिला कहानिकारों में यदि वह सबसे अलग दिखायी देती हैं तो इसका एक कारण यह भी है कि 'कथ्य'को सही और संतुलित ढंग से व्यक्त करनेवाली भाषा उनके पास है। उनकी भाषा का मुहावरा न तो चौकानेवाला है और न एकदम निजी है और न उसमें छायावादी किस्म का शहद घुला हुआ है। 'बन्द दराजों का साथ' के अंशो पर परेश की टिप्पणी इस प्रकार है-

"विवाह होने से लेकर पति पर सन्देह होने का यह वर्णन व्यंजनामय भाषा का अद्वितीय नमूना है। एक-एक वाक्य का एक-एक टुकड़ा देखने में लचीता, अर्थनें कसा हुआ और नारी मन में क्षण-क्षण में परिवर्तित होनेवाले गाढ़े रंगों की छाया से रंजित है। किसी भी टुकड़े के आधे अक्षर को छुआ तो लगता है कि रंग उँगली पर लग आता है।"

जहाँ काम संबंधों के लगाव या तनाव को उभारा गया है, वहाँ भाषा का भंगिमा लालित्य और कोमलता लिये हुए है। 'यही सच है', 'एक बार और', जैसी कहानियों में पाठक को वेध देनेवाली तीक्ष्णता के स्थान पर संदर्भों में रमा देनेवाली आत्मीयता है, लेकिन 'सजा', 'तीसरा हिस्सा' जैसी कहानियों की भाषा में चुभन और तल्खी है, जो व्यंग्य से अनुशासित है । 'स्त्री-सुबोधिनी' की भाषा में आक्रामकता है। अर्थ-ग्रहण करने के साथ-साथ 'बिम्ब-ग्रहण' के लिए मन्नू भण्डारी ने भाषा को अप्रस्तुतों, बिम्बों और संकेतों से समृद्ध किया है।

मन्नू भण्डारी की कहानियों में किस्सागोई नहीं है लेकिन कहानी पढ़ने और सुनने में मिलनेवाला कथा रस उनकी कहानियों में सदैव मिलता है। उन्होंने 'स्वप्न-विश्लेषण', पूर्वदीप्ति, फैण्टेसी आदि शिल्प विधियां को अपनाया लेकिन कहानियों के संबन्ध में किसी प्रकर की जटिलता और उलझाव प्रायः नहीं है। सामान्य पाठक इनमें रमता है। उनकी कहानियाँ मानवीय संवेदनाओं को जागृत कहानियाँ मानवीय संवेदनाओं को जागृत करने में सफल हैं। स्वयं मन्नू भण्डारी के शब्दों में-

"अच्छी कहानी वही है जो आपकी निरंतर भोथरी हुई संवेदना को फिर से जागृत कर दे और मनुष्य होने का एहसास दिला दे।"

अपने साहित्यिक प्रयासों से मन्नू भण्डारी जी ने यथार्थवादी चित्रण की शिल्प-विधि अपनायी है। यही कारण है की उनकी कृतियों में रंजित परिदृश्य इतना सशक्त एवम् जीवंत बन पड़ा है।

१०.४ 'शायद' कहानी में राखाल के मध्यमवर्गीय जीवन की कठिनाईयों का वर्णन ।

'शायद' कहानी में कई बातों का समावेश हैं किंतु यंत्रवत् जीवन और आर्थिक पक्ष अधिक उभरा हैं। कहानी का 'नायक', 'राखाल' हैं जो तीन साल बड़ बाद मशीनों और यंत्रो से दूर अपनी पत्नी और बच्चों से मिलने और यंत्रो से दूर अपनी पत्नी और उत्साह से भरा हुआ होता हैं क्योंकि बीवी-बच्चों के पास आ रहा हैं। उसे अपनी पत्नी के लिखे पत्रों की याद आती हैं

तो वह सोचता हैं कि अब उसके पत्र में पहलेवाली बात नही रही, अब बस वह आर्थिक तकलीफों और बच्चो का ही वर्णन करती हैं। इसका मनोवैज्ञानिक उसर उसके मन पर पड़ता हैं। अब पत्र पाकर बहुत ऊबने लगता हैं हर पल में मशीनी ढंग से लिखा हुआ संबोधन "प्राणनाथ" अब पूरी तरह निष्प्राण हो चुका हैं।

यहाँ पर माला अपनी गृहस्थी में इतनी तीन हो जाती हैं कि राखाल के लिए उसके मन में जो प्रेम था वह अभी पहले दस सालवाली बात नही दिखाई पड़ती थी। पहले जब माला का पत्र आता तो वह उसे बार-बार पड़ा करता था पर अब उसमें कुछ अपनामन की बात रहती ही नहीं भी। बस आर्थिक स्थिति का वर्णन आधिक किया गया था। नहीं तो पहले उसको उसके पत्र में अपना पन लगता था पर अब तो वह खो ही गया अब यह पंक्ति देखने मिलती हैं यर्था-

"उत्तर जल्दी नहीं दे सकी, क्योंकि समय ही नहीं मिला।" और अंत में लिखती हैं - "अब बस करती हूँ बहुत काम हैं।"

राखाल इस सब बातो से दूर जब माता उसके करीन आने की जगह उसे कई सारी आर्थिक परेशानी बताने लगी इसपर राखाल उसको दिलासा देता हैं। लेखिका कहती हैं ने इस स्थिति की और संकेत करते हुए कहा भी है "अधिकांश मध्यमवर्गीय परिवारो की स्थिति यही है कि हम अपने-अपने ढंग से गृहस्थी की मशीनों में बस तेल भर देते है और संबंधो के नाजुक सूत्र मशीनी जिन्दगी में अनजाने ही कहीं कुचल जाते हैं।"

राखाल दूसरे दिन बच्चो को कपड़े, खिलौने, पेन, रिबन, जरसी, मोजे बगैरह खरीद देते हैं। माला भीतर ही भीतर गदगद हो जाती हैं। राखाल माला को घड़ी देता हैं। आर्थिक तंगी से त्रस्त्र माला कहती हैं, "मैं अब क्या घड़ी लगाऊँगी! चलो रीना के काम आयेगी।" उसे कर्ज का बोझ सताता हैं। शंकर के कर्ज चुकाने की बात सुनकर राखाल को अच्छा नहीं लगता। उसे परिवार असह्य लगने लगता हैं। उसे रंजू की बात येद आती हैं कि जहाज वाले से शादी नही करनी चाहिए। स्वीट होम में लौटा लेकिन पर की मिठास नही थी।

इस प्रकार 'शायद' कहानी मध्यमवर्गीय परिवारो की आर्थिक स्थिति तथा बदलते रिश्तों को पूर्ण गहराई के साथ व्यक्त करती हैं।

१०.५ 'शायद' कहानी में राखाल के वापस जहाज पर जाने की परिस्थिति ।

'शायद' कहानी में कई बातों का समावेश हैं, किन्तु यंत्रवत् जीवन और आर्थिक पक्ष अधिक उभरा हैं। कहानी के प्रमुख नायक राखा हैं जो एक जहाज पर नौकरी करते हैं और तीन साल बाद वापस अपने परिवार से मिलने आते उन्हे बहुत प्रसंनता और उत्साह होता हैं।

राखाल पुरानी बातों को याद करता हैं कि दस साल पहले उसकी पत्नी चिट्ठी भेजा करती थी तो लगता था बार-बार उस चिट्ठी को पढ़ा जाए पर अब तो जब चिट्ठी भेजती है तो आर्थिक स्थिति और बच्चो की बातें करती हैं। महँगाई की मार, छोटी बच्ची बुलबुल की मौत यह सब उसको तोड़ देती हैं। राखाल घर पहुँचता है तो देखता गृहस्थी की मार माला के नारीत्व की संवेदना छीन ली है कि-

''चेहरे की झुर्रियों - - - - - - गालों पर पड़े काले धब्बे चकत्ते और रुखे-रुखे बालो में से झाँकते कई सफेद बाल'' उसके चेहरे पर अंकित हैं।

रात का समय आता है, राखाल माला की ओर आकर्षित होता है पर माला उसे हटा देती है। वह सारी आर्थिक स्थिति का जो भूकंप था वह राखाल के सामने खोल देती हैं वह उसे दिलासा देता है और फिर गले लगा लेता है और वह फिर दूर हट जाती हैं। राखाल की अब गुस्सा आ जाता है। उसे लगता हैं कि यही सारी बातें तो वह दूर रहकर भी किया करता था। आने का क्या फायदा।

राखाल दूसरे दिन बच्चो को कपड़े, खिलौने, पेन, रिबन, जरसी, मोजे वगैरह खरीदकर देते हैं। माला भीतर ही भीतर गदगद हो जाती है। राखाल माला को घड़ी देता है। आर्थिक तंगी से त्रस्त माला कहती है, "मैं अब क्या घड़ी लगाऊँगी! चलो रीना के काम आयेगी।"

उसे कर्ज का बोझ सताता हैं। शंकर के कर्ज चुकाने की बात सुनकर राखाल को अच्छा नही लगता रीना की शादी की चिंता उसे सताने लगती है। उसे रंजू की बात याद आती है कि जहाज वालों को शादी करनी ही नहीं चाहिए। संक्षेप में, जब तक राखाल घर पर हैं तब तक आर्थिक समस्या उसके सामने आएगी। होम स्वीट होम में कोई कैसे जीती हैं यह उसकी नारी सुलभ सहनशीलता तथा वात्सल्य ही हैं जो परिवार के बोझिल जहाज को खींच रहा हैं।

राखाल के जहाज जाने का वक्त आ जाता हैं। वह गृहस्थी और जहाज की नौकरी के बीच खड़ा बेबसी की तस्वीर हैं। विदाई के समय हिचकियो के बीच माला के शब्द सुनाई देते हैं-

"अपना ख्याल रखना- - - - - चिट्ठी जल्दी-जल्दी भेजना- - - - - शंकर के रूपये जाते ही भेजना और इस बर तीन साल आने में मत लगाना "

इस प्रकार 'शायद' कहानी में राखाल के माध्यम से लेखिका ने परिवार से दूर रहकर लेखिका ने परिवार से दूर रहकर जीने वाले व्यक्तियों की मानसिकता का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया हैं।

संदर्भ सहित व्याख्या

"तुम भी सोचोगे कि मैंने जब-जब बस पैसे काही रोना रोती हूँ पर तुम्ही बताओ, क्या करूँ, वहाँ गाई का तो कोई ठिकाना नहीं। तीन बच्चो का और अपना पेट कैसे भरती हूँ, मैं ही जानती हूँ।"

संदर्भ :

प्रस्तुत गद्यांश 'दस प्रतिनधि कहानियाँ' संग्रह में संकलित 'शायद' कहानी से लिया गया है । इनकी लेखिका 'मन्नू भण्डारी जी' हैं। मन्नू भण्डारी की कहानी सामाजिक धारणाओं को प्रतिबिम्बित करती हैं। 'शायद' एक ऐसी कहानी हैं जिसमें एक मध्यमवर्गीय परिवार किस कठिनाई से अपना घर चलाता है उसका वर्णन किया गया हैं माला राखाल से कहती हैं आप सोच रहे होंगे कि मैं हमेशा आप के पास जब देखो तब पैसो का रोना ही रोती रहती हूँ न । पर क्या करूँ जी, इस कठिन महंगाई में अपने और परिवार का भेट भरने में कितनी कठिनाई और मुश्कील से घर चलाती हूँ। यह कैसे करती हूँ मैं ही जानती हूँ।

व्याख्या :

माला अपने कमरें में जाती हैं और राखाल वही पहले से रहता हैं बिस्तर ठीक करते-करते वह राखाल से आर्थिक स्थिति के बारे में बात करते हुए कहते है कि में हमेशा तुम से आर्थिक स्थिति के बारे में ही बात करती हूँ। तुम को अच्छा नहीं लगता होगा ना। पर वह दुखी स्वर में कहती हैं कि में किस प्रकार परिवार को संभाल रही हूँ में ही जानती हूँ बस जैसे तैसे घर की गाड़ी चल रही है वह भी मेरी बदौलत, समझे आप। हर तरफ कटौती करती हूँ, जहाँ हो सके, वहाँ से पैसे बचाती हूँ। और किस प्रकार अपना और अपने तीन बच्चों का पेट भरती हूँ, वह तुम नही जानते हो। वह उसकी नारी सुलभ सहनशीलता तथा वात्सल्य ही है जो परिवार के बोझित जहाज को खींच रही हैं।

विशेष

यहाँ एक नारी की व्यथा का वर्णन किया गया हैं। जो अपने पति की आर्थिक स्थिति समझती है फिर भी आर्थिक मंदी के कारण वह कुछ नही कर पाती।

आठ एकांकी – संपादक: देवेन्द्र राजअंकुर, महेश आनंद

लेखक – डॉ. सतीश पाण्डेय

१

लक्ष्मी का स्वागत

-- उपेंद्रनाथ अश्क

इकाई की रूपरेखा

१.० इकाई का उद्देश्य
१.१ प्रस्तावना
१.२ कथानक
१.३ उद्देश्य
१.४ चरित्र चित्रण
१.४.१ रौशन
१.४.१ रौशन के माता – पिता
१.५ 'लक्ष्मी का स्वागत' का व्यंग्य
१.६ संदर्भ सहित स्पष्टीकरण
१.७ वस्तुनिष्ठ प्रश्न- उत्तर
१.८ बोधप्रश्न

१.० इकाई का उद्देश्य :

इस इकाई में हम 'लक्ष्मी का स्वागत' एकांकी का मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप –

- इस एकांकी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे।
- इसके चरित्रों की विशेषताएँ जान सकेंगे।
- एकांकी का उद्देश्य समझ सकेंगे।
- एकांकी के व्यंग्य को स्पष्ट कर सकेंगे।
- एकांकी के मूलपाठ की कुछ महत्वपूर्ण पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।
- एकांकी के आधार पर कुछ वस्तुनिष्ठ एवं आलोचनात्मक प्रश्नों को समझकर उनका उत्तर तैयार कर सकेंगे।

१.१ प्रस्तावना:

लक्ष्मी का स्वागत एकांकी उपेंद्रनाथ अश्क की अत्यंत ही सफल एवं प्रसिध्द एकांकी है। इसके माध्यम से एकांकीकार ने उन सामाजिक स्थितियों पर करारा प्रहार किया है, जिसके तहत पत्नी की मृत्यु के तुरंत बाद शादी का शगुन देने के लिए लोग तैयार हो जाते हैं। यहाँ तक कि माँ – बाप भी बेटे की मन: स्थिति की चिंता न करते हुए शगुन लेने के लिए लालायित दिखायी देते हैं।

१.२ कथानक

'लक्ष्मी का स्वागत' एंकाकी का रौशन अपनी पत्नी सरला की मृत्यु से एकदम अकेला हो जाता है । इसी बीच उसके बेटे अरुण की भी तबीयत खराब हो जाती है। बुखार के बाद उसको साँस लेने में भी कष्ट होता है। इस कठिन परिस्थिति में उसका मित्र सुरेंद्र उसका साथ देता है । वह भाषी को डॉक्टर ले आने के लिए भेजता है। वह रौशन को धीरज बँधाता है लेकिन अरुण की हालत नाजुक होती जाती है । उसे डिप्थीरिया हो गया है । डॉक्टर बच्चे को इंजेक्शन लगाकर दवा भेजने के लिए भाषी को साथ ले जाता है।

इधर रौशन की माँ उन लोगों के आने से खुश होती है जो सरला के मरने के बाद अपनी बेटी के रिश्ते की बात कर रहे थे। उसने सुन रखा था कि सियालकोट में उनका बड़ा व्यापार है। रौशन अपने माँ बाप की ह्रदयहीनता को अनुभव करता है। इसी लिए वह सुरेंद्र को अपने पास रोक लेता है। उसके माता-पिता उसके बच्चे का जीवन नहीं चाहते। वै लोग एक बड़ा रिश्ता पाने के मार्ग में उसे रोड़ा समझते हैं। उनके इस क्रूर और निर्भय व्यवहार के कारण रौशन उनसे नफरत करता है। सुरेंद्र उसे समझाते हुए भगवान पर भरौसा रखने का विश्वास दिलाता है लेकिन रौशन भगवान को भी निर्दयी मानता है।

सुरेंद्र दवा लाने गए भाषी को देखने के लिए रौशन के कमरे से बाहर निकलता है तो उसे रौशन की माँ मिल जाती है। वह डॉक्टर को ही कोसती है। उसका विश्वास हकीम की दवा और घुट्टी पिलाने पर है। वह रौशन को समझाने के लिए भी सुरेंद्र से कहती है। उसके अनुसार गिरे हुए मकान की नींव पर ही दूसरा मकान खड़ा होता है। सुरेंद्र उसे समझाता है कि उसका बेटा रौशन बिन ब्याहा नहीं रह जायेगा किंतु उसे तो सियालकोट वाले लोग बड़े ही शरीफ और लड़की बड़ी ही सुंदर –सुशील लगती है। सुरेंद्र उन्हें समझाता है कि रौशन अपने बेटे की बीमारी के कारण परेशान है, लेकिन माँ को इस बात की चिंता अधिक होती है कि वै लोग इतनी दूर से आँधी तूफान में आए हैं। उन्हें निराश कैसे लौटा दें। सुरेंद्र अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुए रौशन को समझाने से मना कर देता है।

इसी बीच रौशन कमरे से बाहर निकलता है। माँ उसे सियालकोट वाले लोगों से मिलकर दो-चार मिनट बात कर लेने के लिए कहती है । रौशन भड़क उठता है कि घर में बच्चा मर रहा है और उसको शादी की सूझ रही है। वह उन लोगों से मिलने से साफ मना कर देता है और बेटे के पास चला जाता है। इसी बीच पिता भी वहाँ आते हैं। उन्हें रौशन का अरुण की बीमारी के कारण उन लोगों से न मिलना बहाना, मात्र लगता है । वै शगुन लेने की सूचना देते हुए कहते हैं कि घर आई लक्ष्मी को वै नहीं लौटा सकते। उधर अरुण की तबीयत बहुत बिगड़ जाती है । सुरेंद्र डॉक्टर को बुलाने जाता है। रौशन अंदर से दरवाजा बंद किये है। माँ दरवाजा खुलवाती

है। रौशन माँ से कहता है कि तुम पहले लक्ष्मी का स्वागत कर लो। तभी दूसरी और से रौशन के पिता आते हैं और शगुन ले लेने की सूचना देते हुए अपनी पत्नी को बधाई देते हैं। इधर रौशन अपने मृत बेटे का शव लेकर बाहर आता हैं।

इस तरह लक्ष्मी का स्वागत करने में जुटे माता – पिता का अरुण के मरने के समय शगुन लेना इस क्रूर प्रथा पर करारा व्यंग्य है।

१.३ उद्देश्य :

'लक्ष्मी का स्वागत' एकांकी मध्यवर्गीय जीवन का एक कटु यथार्थ व्यक्त करती है। हमारे रुढ़िग्रस्त मध्यवर्गीय परिवारों की एक क्रूरतम प्रथा यह रही है कि पत्नी की मृत्यु के बाद उसकी चिता की राख भी ठंडी नहीं होने पाती कि शादी की बात चलाने वाले और शगुन के पैसे देने वाले तुरंत तैयार हो जाते हैं। विडंबनापूर्ण स्थिति यह होती है कि लड़के के माता-पिता भी अपने बेटे की भावनाओं को नहीं समझ पाते । पत्नी की मृत्यु के बाद उसके हृदय पर कितना बड़ा आघात लगा होगा, इसकी परवाह किये बिना वे बेटे के भविष्य की चिंता प्रकट करते हुए शगुन के पैसे लेने को तैयार हो जाते हैं। शायद इसके मूल में उनकी अर्थ लोलुपता होती है।

इस एकांकी का कथा- नायक रौशन अपनी पत्नी सरला की आकस्मिक मृत्यु से बहुत दुखी है। उसका इकलौता बेटा अरुण बीमार है। उसके बचने की आशा नहीं है फिर भी उसकी माँ उन मेहमानों के आने का इंतजार कर रही होती है जो लोग अपनी बेटी की शादी रौशन से करना चाहते हैं । रौशन अपने माता – पिता के इस व्यवहार से बहुत दुखी और अकेला अनुभव करता है। इसीलिए वह अपने मित्र सुरेंद्र को अपने पास रोक लेता है । उसके अनुसार उसके बच्चे के लिए यह घर वीराना है क्योंकि ये लोग उसका जीवन नहीं चाहते । वै उसे कोई बड़ा रिश्ता पाने के मार्ग में रोड़ा मानते हैं। इसलिए उसकी मृत्यु चाहते हैं।

रौशन को अपने माता पिता का व्यवहार हृदयहीनता से भरा लगता है क्योंकि एक तरफ वह अपनी पत्नी का दाहकर्म करके आया था और उसके माता – पिता दूसरी जगह उसकी शादी के लिए शगुन लेने की सोच रहे थे । सुरेंद्र इसे दुनिया का व्यवहार मानता है किंतु रौशन इस व्यवहार से नफरत करता है कि क्या ये लोग यह नहीं समझते कि यह जो मर जाती है वह भी किसी की लड़की होती है, किसी माता – पिता के लाडप्यार में पली होती है, फिर उसके मरते ही सगाइयाँ लेकर क्यों दौड़ते हैं। माँ और पिता का यह व्यवहार वस्तुतः उनकी अर्थलोलुपता और संवैदनहीनता का परिचायक है क्योंकि मृत्यु के बाद बेटे की बीमारी से टूट चुके रौशन को वै शगुन के पैसे देने आने वाले लोगों से बातचीत करने के लिए कहते हैं। रौशन साफ मना करते हुए माँ से सीधा सवाल करता है कि ' क्या शादी ही दुनिया में सब कुछ है । घर में बच्चा मर रहा है और तुम्हें शादी की सूझ रही है । इस पर माँ अनपढ़ राम प्रताप से उसकी तुलना करती हुई उसे पढ़लिख कर भी माँ बाप की अवज्ञा करने वाला मानती है और पिता उसकी बहानेबाजी। पिता को आँधी- तूफान में शगुन के पैसे लाने वालों की पीड़ा दिखायी देती है किंतु बेटे की मनः स्थिति वे नहीं समझ पाते। वै उन्हें अपने घर से निराश कर घर आयी लक्ष्मी नहीं लौटाना चाहते। एक तुरफ वै शगुन लेने की बधाई देते है। दूसरी तरफ रौशन मृत बेटे की लाश लेकर निकलता है ।

इस विडंबना को दर्शाते हुए अश्कजी ने एक तरफ मध्यवर्गीय परिवारों में व्याप्त स्वार्थ-परता और धनलोलुपता का चित्रण किया है, वहीं यह भी संकेत किया है कि धन की लालच में लोग कितने ह्रदयहीन और संवैदनशून्य बन जाते हैं । पुनर्विवाह और दहेज की लालच में बेटे की मानसिक दशा को न समझ पाने वाले माँ-बाप पर यहाँ करारा व्यंग्य करते हुए इन सामाजिक बुराइयों से निजात पाने की प्रेरणा भी दी गई है । रुढ़ियों और स्वार्थ में जकड़े समाज को इन स्थितियों से रचनाकार मुक्त कराना चाहता है ।

१.४ चरित्रचित्रण:

१.४.१ रौशन :

'लक्ष्मी का स्वागत' एकांकी का रौशन एक संवैदनशील शिक्षित युवक है जो अपनी पत्नी सरला और पुत्र अरुण से बेहद प्रेम करता है । पत्नी की मृत्यु के बाद उसका मन खिन्नता से भर उठता है । उसका पुत्र बीमार है। ऐसे में जब उसके माता पिता दूसरी जगह शादी करने के लिए शगुन लेने की बात सोचते हैं तो उसका मन और अधिक दुखी हो जाता है। वह अपने माता- पिता और शगुन लेकर आने वालों के प्रति आक्रोश से भर उठता है। उसे घर के लोग ह्रदयहीन तथा दुनिया का व्यवहार शुष्क, निर्मम और क्रूर लगने लगता है। उसके मन में ऐसे लोगों के प्रति नफरत भर उठती है। वह सोचता है कि क्या ये लोग नहीं समझते कि यह जो मर जाती है, वह भी किसी की लड़की होती है, किसी माता – पिता के लाड़में पली होती है, फिर उसके मरते ही सगाइयॉं लेकर क्यों दौडते हैं। ऐसे लोगों की स्मृतिमात्र से उसका खून उबलने लगता है।

उसके बेटे अरुण की तबीयत अधिक खराब हो जाती है। तेज वर्षा और ओले पड़ने के कारण डॉक्टर के आने में भी विलंब होता है तो उसकी बेचैनी और अधिक बढ़ती जाती है। ऐसे में उसका मित्र सुरेंद्र उसके साथ है। बेटे से अत्याधिक प्रेम के कारण वह उसके प्रति अधिक चिंतित हो उठता है। उसे लगता है कि कहीं बेटा भी अपनी माँ की तरह उसका साथ छोड़न जाए। उसका छोटा भाई भाषी डॉक्टर को बुलाकर लाता है किंतु उसकी माँ को इस बात से खुशी होती है कि रौशन की शादी के लिए शगुन लेकर सियालकोट वाले आये हैं।

डॉक्टर से पता चलता है कि अरुण की हालत नाजुक है। घबराया हुआ रौशन अपने मित्र सुरेंद्र को अपने साथ रौक लेता है क्योंकि उसे पता है कि घरवालों के लिए उसके बच्चे का कोई महत्व नहीं है। वै तो उसे बड़ा रिश्ता पाने के मार्ग में एक रोड़ा मानते हैं। रौशन को भगवान पर भी विश्वास नहीं रह जाता। वह सुरेंद्र से कहता भी है कि भगवान भी क्रूर और निर्दयी है। उसका काम सताये हुओं को और अधिक सताना है। उसने अपने जीवन में किसी को दुख नहीं दिया लेकिन उस पर ये बिजलियाँ गिरायी गई हैं। इस तरह दुखों के कारण रौशन का भगवान पर से भी विश्वास उठ जाता है ।

रौशन एक शिक्षित युवक है किंतु वह माता-पिता के उस आदेश को नहीं मानता जिसके अनुसार वे चाहते हैं कि वह सियालकोट वालों से दो- चार मिनट मिल ले। वह बच्चे की बीमारी के कारण परेशान होकर उनकी आज्ञा का उल्लंघन करता है। उसे अनपढ़ राम प्रताप से अपनी तुलना भी अच्छी नहीं लगती जिसने पत्नी की मृत्यु के तुरंत बाद शगुन स्वीकार कर लिया

और एक महीने बाद उसका विवाह भी हो गया । रौशन मानता है कि रामप्रताप अशिक्षित गँवार है। उसके पास महसूस करने की शक्ति नहीं है। इसलिए उसने पत्नी की मृत्यु के तुरंत बाद विवाह कर लिया। रौशन ऐसा नहीं कर पाता । वह माँ से कहता भी है कि'क्या शादी ही दुनिया में सब कुछ है । घर में बच्चा मर रहा है और तुम्हें शादी की सूझ रही है । आखिर तुम लोगों को हो क्या गया है ? वह अभी मृत्यु शैया पर पड़ी थी कि तुमने मेरी साली को लेकर शादी की बात चला दी। वह मर गई, मैं अभी रौ भी न पाया कि तुम शगुन लेने पर जोर देने लगीं। क्या वह मेरी पत्नी न थी ? क्या वह कोई फालतू चीज थी ?'

इस तरह रौशन अपने परिवार और समाज के लोगों की उस धारणा का विरोध करता है जहाँ पत्नी की मृत्यु के तुंरत बाद शादी की बात चला दी जाती है। उसके पिता भी सियालकोट वालों को वर्षा और आँधी-तूफान में अपने घर से निराश नहीं भेजना चाहते, घर आ रही लक्ष्मी को लौटाना नहीं चाहते। वै शगुन ले भी लेते हैं किंतु रौशन अपने माता – पिता की इस हृदयहीनता का स्पष्ट विरोध करता है।

इस तरह रौशन एक संवैदनशील और भावुक हृदय वाला युवक है जो अपनी पत्नी और बच्चे दोनों को बेहद चाहता है । पत्नी की मृत्यु के बाद तुरंत शादी की बात सोचने वाले रूढ़िगत समाज और माता – पिता का विरोध करता है। माता – पिता के उस स्वार्थी रूप का भी वह विरोध करता है जहाँ वै घर आई लक्ष्मी को लौटाना नहीं चाहते । इस रूप में वह एक संघर्षशील और जागरूक युवक के रूप में चित्रित हुआ है।

१.४.२ रौशन के माता पिता :

' लक्ष्मी का स्वागत' एंकाकी के रौशन के माता – पिता मध्यवर्गीय रुढ़ियों परंपराओं को मानने वाले और अर्थलोलुप व्यक्ति हैं। वै दोनों सामाजिक परंपराओं और व्यावहारिकता के नाम पर रौशन की मनोभावनाओं को बिलकुल नहीं समझते। रौशन अपनी पत्नी सरला की मृत्यु के बाद बेहद टूट जाता है। उसके मन की खिन्नता और भी बढ़ जाती है, जब एक तरफ उसका पुत्र अरुण मौत से जूझ रहा होता है और दूसरी तरफ उसकी माँ सियालकोट वालों के शगुन लेकर आने से खुशी अनुभव करती है। अरुण की मृत्यु के समय रौशन के माता –पिता का शगुन लेने के लिए एक दूसरे को बधाई देना उसे और भी अखर जाता है। माता पिता की यह हृदयहीनता रौशन को और अधिक दुखी कर जाती है। ऐसे में उसे सहारा देने वाला एकमात्र उसका मित्र सुरेंद्र है।

रौशन के माता- पिता पैसे के लालची हैं। उन्हें बेटे के मन की व्याकुलता नहीं दिखायी देती बल्कि बहू सरला की मृत्यु के तुरंत बाद अपनी लड़की देने के लिए कहने वाले सियालकोट वालों का वर्षा तूफान में आना अधिक प्रभावित करता है क्योंकि उन्होंने सुना है कि सियालकोट में उनका बड़ा कारोबार है। माँ के अनुसार वे लोग शरीफ आदमी हैं। घर अच्छा है। लड़की सुशील,सुंदर और सुशिक्षित है क्योंकि उसने लड़की की बड़ी बहन से बात की है। पिता भी इस वर्षा और आँधी तूफान में आने वाले उन लोंगों को अपने घर से निराश नहीं भेजना चाहते क्योंकि वे घर आई लक्ष्मी को नहीं लौटाना चाहते । अत: शगुन के पैसे ले लेते हैं। ऐसे माता पिता रौशन को हृदयहीन लगते हैं क्योकि वह पत्नी का दाहकर्म करके घर लौटता है और उधर ये लोग दूसरी जगह शादी के लिए शगुन लेने की सोचने लगते हैं। इतने शुष्क, निर्मम और क्रूर माता – पिता के प्रति उसके मन में नफरत भर जाती है। रौशन शिक्षित युवक है। इसलिए वह

पत्नी और बच्चे के बारे में संवैदनशील है जब कि उसके माता- पिता उसके बेटे अरुण का जीवन नहीं चाहते । बड़ा रिश्ता पाने के मार्ग में अरुण को वे एक बड़ा रोड़ा मानते हैं।

रौशन की माँ पुराने विचारों की है। इसी लिए वह मानती है कि गिरे हुए मकान की नींव पर ही दूसरा मकान खड़ा होता है। वह राम प्रताप का उदाहरण देकर यही चाहती है कि उसकी तरह रौशन भी दूसरी शादी के लिए मान जाए किंतु रौशन उसके इस विचार से सहमत नहीं हो पाता। उसके अनुसार अनपढ़ अशिक्षित और गँवार रामप्रताप में महसूस करने का माद्दा ही नही है लेकिन माँ राम प्रताप को ही आज्ञाकारी और रौशन को माँ बाप की अवज्ञा करने वाला मानती है । उसे लगता है कि अभी चार नाते आते हैं, फिर देर हो गई तो कोई मुँह भी नहीं करेगा।

इसी तरह अरुण की बीमारी में डॉक्टर को बुलाना भी माँ को उचित नहीं लगाता। वह मानती है कि अरुण को ज्वर हो गया है और छाती जम गई है जो वह घुट्टी दे देगी तो ठीक हो जाएगा। बहू की मृत्यु के बारे में भी वह डॉक्टर को ही दोषी मानती है । वह हकीम की दवा को ठीक मानती है जो दो वर्ष में ठीक कर देता।

इस तरह रौशन के माता पिता धन लोलुप,संवैदनहीन एवं पुराने विचारों वाले हैं जो रौशन ही नहीं बल्कि अपनी अंधविश्वासी जड़विचारधारा के कारण पूरे समाज के लिए घातक हैं।

१.५ 'लक्ष्मी का स्वागत' एकांकी का व्यंग्य :

'लक्ष्मी का स्वागत' एकांकी पुरानी मान्यताओं वाले समाज की इस परंपरा पर व्यंग्य करती हुई एक सफल एकांकी है, जिसके अनुसार पत्नी की मृत्यु के बाद अभी चिता की राख ठंडी भी नही होने पाती कि लोग दूसरी शादी की बात करने लगते हैं । समाज में यह क्रूर प्रथा प्रचलित रही है। विडंबना यह है कि लड़के के माता- पिता भी इस परंपरा का समर्थन करते हैं। वै अपने बेटे की मन: स्थिति के बारे में भी बिलकुल नहीं सोचते कि पत्नी की आकस्मिक मृत्यु के बाद उसके हृदय को कितना आघात लगा होगा और वै भी शगुन लेने के लिए तैयार हो जाते हैं।

'लक्ष्मी का स्वागत' का रौशन कुछ इन्हीं स्थितियों से गुजरता है। उसकी पत्नी सरला की मृत्यु के बाद चौथे दिन ही सियालकोट वाले लोग उसकी शादी की बात चलाने लगते हैं। पत्नी की मृत्यु के तुरंत बाद शगुन के पैसे लेने के लिए तत्पर माँ बाप के प्रति रौशन के मन में आक्रोश उत्पन्न हो उठता है। अपने परिवार की हृदयहीनता और दुनिया के व्यवहार की शुष्कता तथा निर्ममता के कारण उसके मन में नफरत की भावना भर उठाती है। वह सोचते लगता है कि लोग यह क्यों नहीं समझते कि जो मर जाती है वह भी किसी की लडकी होती है। किसी माता पिता के लाडप्यार में पली होती है।

रौशन का दुख और भी बढ़ जाता है क्योंकि पत्नी की मृत्यु के तुरंत बाद बेटा अरुण भी डिप्थीरिया के कारण जीवन/मृत्यु के बीच जूझ रहा होता है और उसकी माँ सियालकोट से आए लोगों से दो मिनट बात करने का जिद करने लगती है। ऐसे में रौशन की झुँझलाहट और उसकी संवेदनशीलता माँ-बाप की हृदयहीनता और अर्थलोलुपता पर करारा व्यंग्य है । रौशन

कहता है - ' क्या शादी ही दुनिया में सब कुछ है । घर में बच्चा मर रहा है और तुम्हें शादी की सूझ रही है । आखिर तुम लोगों को हो क्या गया है ? वह अभी मृत्यु शैया पर पड़ी थी कि तुमने मेरी साली को लेकर शादी की बात चला दी। वह मर गई, मैं अभी रौ भी न पाया, कि तुम शगुन लेने पर जोर देने लगी। क्या वह मेरी पत्नी न थी ? क्या वह कोई फालतू चीज थी ?

इस तरह रौशन की पीड़ा को न समझ पाने वाले माता- पिता की जड़ मानसिकता पर यहाँ तीखा व्यंग्य किया गया है लेकिन एकांकीकार ने उनकी अर्थलोलुपता तथा अतिव्यावहरिकता पर भी व्यंग्य किया है जहाँ एक तरफ रौशन अपने मृत पुत्र का शव लिए कमरे से बाहर निकलता है और माता – पिता एक दूसरे को शगुन लेने की बधाई दे रहे होते हैं। इस दृश्य के माध्यम से उपेन्द्रनाथ अश्क जी ने सामाजिक कुरीतियों अंधविश्वासों एवं जडमूल्यों में जकड़े मध्यवर्गीय समाज की अर्थलोलुप स्वार्थी दृष्टि पर भी निर्ममता से प्रहार किया है

१.६ संदर्भ सहित स्पष्टीकरण:

१) दुनिया का व्यवहार इतना शुष्क, इतना निर्मम, इतना क्रूर है ? मैं उससे नफरत करता हूँ। क्या ये लोग नहीं समझते कि यह जो मर जाती है, वह भी किसी की लड़की होती है ।

संदर्भ: उपेंद्रनाथ अश्क हिंदी के उन साहित्यकारों में से हैं जिन्होंने मध्यवर्गीय समाज के यथार्थ को सजीवता से अंकित किया है। पुराने संस्कारों के प्रति मोह और नई चेतना के प्रति आकर्षण मध्यवर्ग की प्रमुख विशेषता रही है। मध्यवर्ग की भावनाओं को अश्क जी ने अपने नाटकों एरां एकांकियों में विशेष रुप से चित्रित किया है। 'लक्ष्मी का स्वागत" इन्हीं की लिखी हुई एक सफल और लोकप्रिय एंकाकी है। जो हमारी पाठ्य पुस्तक आठ एकांकी में एंकलित है। इसमें मध्यवर्गीय समाज में प्रचलित एक क्रूर परंपरा का व्यंग्यात्मक चित्रण किया गया है। प्रस्तुत पंक्तियाँ इसी एकांकी से ली गई हैं।

स्पष्टीकरण: रौशन एक सुशिक्षित नवयुवक है जिसकी पत्नी सरला का देहांत होने के चौथे दिन ही कुछ लोग अपनी बेटी से उसके विवाह की बात चलाते हैं। अभी कुछ दिन ही बीतते हैं कि उसके बेटे अरुण को डित्थीरिया की बीमारी हो जाती है और वह जीवन – मृत्यु के बीच संघर्ष कर रहा होता है। इसी समय सियालकोट वाले लोग उसके विवाह का शगुन देने आ पहुँचते हैं। उसके माता पिता भी शगुन लेने को तैयार हो जाते है और रौशन को उन लोगों से मिलने के लिए कहते हैं। रौशन का मन अपने माता-पिता के इस व्यवहार से खिन्न हो उठता है। इस कठिन अवस्था में उसका मित्र सुरेंद्र उसका साथ देता है । वह सुरेंद्र से कहता है कि यह घर उसके बच्चे के लिए वीराना है। यह लोग इसका जीवन नहीं चाहते क्योंकि बडा रिश्ता पाने के मार्ग में इस रौड़ा समझते हैं। रौशन अपने परिवार के लोगों को तो हृदयहीन मानता ही है, समाज के उन लोगों के प्रति भी क्रोध से भर उठता है जो लोग किसी की पत्नी के मरते ही उसकी दूसरी शादी के लिए प्रस्ताव लेकर पँहुच जाते हैं। वह सुरेद्र से कहता है कि दुनिया का व्यवहार इतना शुष्क, इतना निर्मम और इतना क्रूर क्यों है ?क्या ये लोग यह नहीं समझते कि यह जो मर जाती है, वह भी किसी की लड़की होती है, किसी माता- पिता के लाड़में पली होती है। उसके मरते ही ये लोग सगाइयाँ लेकर दौड़ते हैं, यह याद करके ही उसका खून खौलने लगता है।

विशेष: इस तरह अश्क जी समाज की उस परंपरा का विरोध करते हैं जिसके तहत पत्नी की मृत्यु के तुरंत बाद लोग सगाई का प्रस्ताव लेकर दौड़ने लगते हैं। इस क्रूर प्रथा के साथ साथ समाज की हृदयहीनता की ओर भी संकेत किया गया है।

२) तो मैं शगुन ले रहा हूँ । इस वर्षा, आँधी और तूफान में मैं उन्हें अपने घर से निराश नहीं भेज सकता, घर आई लक्ष्मी को नहीं लौटा सकता ।

संदर्भ: उपेंद्रनाथ अश्क द्वारा लिखित 'लक्ष्मी का स्वागत' एकांकी एक सफल एवं लोकप्रिय एकांकी रही है। इसमें मध्यवर्गीय समाज में प्रचलित उस क्रूर प्रथा पर करारा व्यंग्य किया गया है जिसके अनुसार पत्नी की मृत्यु के बाद लोग शगुन लेकर पहुँच जाते हैं। प्रस्तुत पंक्तियाँ इसी एंकाकी से ली गई हैं।

स्पष्टीकरण: इस एंकाकी का प्रमुख चरित्र रौशन एक शिक्षित और संवैदनशील नवयुवक है। उसकी पत्नी सरला का बीमारी के बाद देहांत हो जाता है। वह अभी मृत्यु शैया पर ही होती है कि रौशन के माता-पिता उसकी साली से शादी की बात चला देते हैं। यहाँ तक कि उसकी मृत्यु के बाद चौथे दिन ही सियालकोट वाले अपनी बेटी की शादी की बात चलाते हैं। रौशन के माता – पिता भी इस विवाह के पक्ष में हैं। उधर पत्नी की मृत्यु से दुखी रौशन अपने बेटे अरुण की बीमारी के कारण परेशान है । अरुण को डिप्थीरिया हो गई है और उसकी तबीयत निरंतर खराब होती जाती है । रौशन बेटे को बचाने के लिए डॉक्टर का बुलाता है। वह डॉक्टर की बातें सुनकर निराश हो जाता है क्यों कि डॉक्टर बच्चे की हालत बहुत नाजुक बताते हैं। इसी बीच सियालकोट वाले रिश्ता तय करने के लिए रौशन के माता – पिता से मिलने आते हैं। रौशन के माता- पिता चाहते हैं कि वह उन लोगों से थोड़ी देर बातें कर ले लेकिन रौशन की मन: स्थिति ऐसी है कि वह मेहमानों से न मिलने की बात पर अड़ा रहता है। माँ इसे उसकी अवज्ञा मानती है और पिता बहानेबाजी । इसी लिए उसके पिताजी शगुन लेने का निश्चय करते हैं। वे कहते हैं कि इस वर्षा, आँधी और तूफान में वे उन लोगों को अपने घर से निराश नहीं भेज सकते। घर आई लक्ष्मी को नहीं लौटा सकते। उनके अनुसार लड़की अच्छी है, सुंदर है और घर के कामकाज में चतुर है । चार पाँच श्रेणी तक पढ़ी है। रामायण महाभारत बखूबी पढ़ लेती है।

विशेष: यहाँ एकांकी कार ने रौशन के पिता की धन – लोलुपता और निष्ठुरता का चित्रण किया है। रौशन के बेटे अरुण की बीमारी उन्हें प्रभावित नहीं करती। यह उनकी हृदयहीनता का ही परिचायक है।

संदर्भ सहित व्याख्या के कुछ अन्य अंश:

१) तुम मेरे पास रहना। देखो; जाना नहीं , यह घर उस बच्चे के लिए वीराना है। यह लोग इसका जीवन नहीं चाहते, बड़ा रिश्ता पाने के मार्ग में इसे रोड़ा समझते हैं।

२) यहाँ सब लोग हृदयहीन हैं, आपको मालूम नहीं। इधर मैं अपनी पत्नी का दाहकर्म करके आया था; उधर ये लोग दूसरी जगह शादी के लिए शगुन लेने की सोच रहे थे।

३) मुझे उस पर कोई विश्वास नहीं रहा । उसका कोई भरौसा नहीं- क्रूर, कठिन और निर्दयी । उसका काम सताए हुओं को और सताना है, जले हुए को और जलाना है।

४) तुम जानते हो बच्चा, दुनिया जहान का यह कायदा ही है। गिरे हुए मकान की नींव पर ही दूसरा मकान खड़ा होता है।

५) क्या शादी ही दुनिया में सब कुछ हैं। घर में बच्चा मर रहा है और तुम्हे शादी की सूझ रही है।

१.७ अतिलघूत्तरी प्रश्न / वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१) डॉक्टर को लेने कौन गया था ?

उत्तर : डॉक्टर को लेने भाषी गया था।

२) अरुण को कौन-सा रौग हो गया था ?

उत्तर : अरुण को डिप्थीरिया हो गया था।

३) खन्नाक रौग में तत्काल किसे बुलाना चाहिए ?

उत्तर : खन्नाक रौग में तत्काल डॉक्टर को बुलाना चाहिए।

४) बच्चे के लिए उसका घर कैसा है ?

उत्तर : बच्चे के लिए उसका घर वीराना है।

५) रौशन के घर वाले बच्चे का जीवन क्यों नहीं चाह रहे थे ?

उत्तर : रौशन के घर वाले बच्चे का जीवन नहीं चाहते थे क्योंकि वह बड़ा रिश्ता पाने के मार्ग में रोड़ा था ।

६) रौशन दुनिया का व्यवहार कैसा मानता है ?

उत्तरः रौशन दुनिया का व्यवहार शुष्क, निर्मम और क्रूर मानता है।

७) रौशन की माँ अरुण को क्या पिलाकर ठीक करना चाहती है।

उत्तर : रौशन की माँ अरुण को घुट्टी पिलाकर ठीक करना चाहती है।

८) सुरेंद्र माँ को क्या यकीन दिलाता है ?

उत्तरः सुरेंद्र माँ को यकीन दिलाता है कि उनका बेटा रौशन बिन- ब्याहा नहीं रहेगा ।

९) रौशन की शादी के शगुन देने कौन आए थे ?

उत्तर : सियालकोट वाले रौशन की शादी का शगुन देने आए थे।

१०) रौशन के पिता किसे नहीं लौटाना चाहते ?

उत्तर : रौशन के पिता घर आई लक्ष्मी को लौटाना नहीं चाहते है ?

१.८ बोध प्रश्न:

१) अश्कजी ने 'लक्ष्मी का स्वागत' एकांकी के माध्यम से किस सामाजिक कुप्रथा पर प्रहार किया है ?

२) लक्ष्मी का स्वागत एंकाकी का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

३) रौशन के चरित्र की विशेताएँ स्पष्ट किजिए।

४) 'रौशन के माता – पिता रुढ़ि परंपराओं को माननेवाले अर्थ लोलुप चरित्र हैं। स्पष्ट कीजिए।'

५) लक्ष्मी का स्वागत एकांकी का व्यंग्य समझाइए।

❖❖❖❖

२

रीढ़ की हड्डी

- जगदीशचंद्र माथुर

इकाई की रूपरेखा

२.० इकाई का उद्देश्य
२.१ प्रस्तावना
२.२ कथानक
२.३ उद्देश्य
२.४ चरित्र चित्रण
२.४.१ गोपाल प्रसाद
२.४.२ उमा
२.४.३ बाबूराम स्वरूप
२.५ टिप्पणा
२.५.१ रीढ की हड्डी शीर्षक की सार्थकता
२.६ संदर्भ सहित व्याख्या
२.७ वस्तुनिष्ठ प्रश्न
२.८ बहुविकल्पीय प्रश्न
२.९ बोध प्रश्न

२.० उद्देश्य:

इस इकाई में हम रीढ़ की हड्डी का विश्लेषण और मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप:

- इसकी कथावस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे।
- इसके चरित्रों की विशेषताएँ जान सकेंगे।
- एकांकीकार की दृष्टि एवं एकांकी के उद्देश्य को समझ सकेंगे।
- इसके शीर्षक की सार्थकता के बारे में अपना मत बता सकेंगे।
- इस एकांकी के मूल पाठ की कुछ महत्वपूर्ण पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।
- वस्तुनिष्ठ एवं बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर दे सकेंगे।

२.१ प्रस्तावना :

आपने ' रीढ़ की हड्डी ' एकांकी का ध्यानपूर्वक वाचन किया होगा। इसमें आधुनिक युग के एक मध्यमवर्गीय परिवार का चित्र प्रस्तुत हुआ है। विवाह के पूर्व लड़की देखने आने वाले लोगों की मानसिकता पर प्रहार करते हुए जागरूक आधुनिक नारी चरित्र का रूप यहाँ दिखायी देता है। कथानक और उद्देश्य तथा पात्रों के चरित्र – चित्रण आदि की दृष्टि से प्रस्तुत एकांकी का विश्लेषण और मूल्यांकन यहाँ किया जाएगा।

२.२ कथानक

'रीढ़ की हड्डी' स्त्रियों की सामाजिक स्थिति का यथार्थ चित्रण करने वाली एकांकी है जिसमें लड़की दिखाने की अपमानजनक प्रथा पर चोट की गई है। बाबू राम स्वरूप अपनी बेटी उमा का विवाह गोपाल प्रसाद के बेटे शंकर से करना चाहते हैं। शंकर और उसके पिता गोपाल प्रसाद उमा को देखने आने वाले हैं। अत: रामस्वरूप और उनकी पत्नी प्रेमा अतिथियों के स्वागत की पूरी तैयारी करते हैं लेकिन उमा इस रिश्ते से संतुष्ट नहीं है, उसके असंतोष का कारण पिता का यह कहना है कि बड़ी मुश्किल से इस रिश्ते के लिए राजी हुए हैं। राम स्वरूप उमा को तैयार करने के लिए प्रेमा से कहते हैं। प्रेमा को लगता है कि उमा ज्यादा पढ़- लिख लेने के कारण माता-पिता की बात नहीं मान रही है। रामस्वरूप जी प्रेमा को उमा की पढ़ाई - लिखाई के बारे में चुप रहने के लिए कहते हैं क्योंकि उन्होंने लड़के वालों से कहा है कि उमा मैट्रिक पास है। इसका कारण यह है कि गोपाल प्रसाद स्वयं पढ़े-लिखे हैं और शंकर भी मेडिकल कॉलेज में पढ़ रहा है लेकिन वे उसकी शादी ज्यादा पढ़ी – लिखी लड़की से नहीं करना चाहते।

गोपाल प्रसाद और शंकर के आने पर पता चलता है कि शंकर मेडिकल कॉलेज में पढ़ता है किंतु पढ़ाई में उसकी ज्यादा दिलचस्पी नहीं है । वह हर कक्षा पास करने में एकाध साल की मार्जिन रखता है। गोपाल प्रसाद की दिलचस्पी खातिरदारी से ज्यादा ' बिजनेस' यानी रिश्ते के बारे में बातचीत में होती है। वे अपने लड़के का विवाह एक चतुर, सुंदर और गुणी लड़की से करना चाहते हैं किंतु लड़की ज्यादा पढ़ी लिखी नहीं चाहते क्योंकि उससे उन्हें नौकरी तो करानी नहीं है। उनके अनुसार स्त्रियों को पुरुषों की बराबरी करने की जरूरत नहीं होती।

उमा के सामने आने पर गोपाल प्रसाद अच्छी – खासी जाँच पड़ताल करते हैं। उसकी चाल –ढाल, गाना – बजाना, पेंटिग – सिलाई आदि की जाँच करने के बाद उसे चश्मा लगाए देखकर चौंक जाते हैं। इस पर राम स्वरूपजी को सफाई देनी पड़ती है कि यह ज्यादा पढ़ाई के कारण नहीं लगा है। अधिकतर बातों का उत्तर राम स्वरूप ही देते हैं। अत: गोपाल प्रसाद उमा से भी बोलने के लिए कहते हैं। उमा लड़कियों के बेबस भेड बकरियों की तरह बाजार में बेचे जाने की नियति पर अपना असंतोष व्यक्त करती है। उसे लगता है कि लड़की की भावनाओं और उसके मान-अपमान का ख्याल किये बिना उसकी नाप – तोल की जाती है। उमा के इस व्यवहार से शंकर और गोपाल प्रसाद को अपनी बेइज्जती महसूस होती है और वे जाने लगते हैं। उमा गोपालप्रसाद के सामने शंकर के उस आचरण का पर्दाफाश कर देती है जब उसे लड़कियों के हॉस्टल के इर्द-गिर्द ताक – झाँक करते हुए पकड़ा गया था और वह नौकरानी के पैरों पर

पड़कर मुँह छिपाकर भागा था। गोपाल प्रसाद को यह भी पता चल जाता है कि उमा बी.ए. पास है तो वे राम स्वरूप पर ही सच्चाई छिपाने का दोष लगाकर जाने लगते हैं। उमा उन्हें जाने से रोकती नहीं बल्कि व्यंग्य करते हुए यह कहती है कि 'घर जाकर यह पता लगाइएगा कि आपके लाड़ले बेटे के रीढ़ की हड्डी भी है या नहीं।' उनके जाने के बाद उमा रो पड़ती है।

२.३ उद्देश्य :

'रीढ़ की हड्डी' एकांकी मध्यवर्गीय परिवारों की एक ज्वलंत समस्या को उजागर करने वाली एकांकी है जिसमें यह दर्शाया गया है कि शादी के पूर्व लड़कियों को देखने आने वाले अपने दुर्गुणों को तो छिपाने की कोशिश करते हैं किंतु लड़की के गुणों में भी दोष खोज लेते हैं। दूसरे, लड़कियो को भेड़ बकरियाँ मानकर कसाई की तरह उनका मोल भाव किया जाता है।

रामस्वरूपजी की पुत्री उमा को देखने आने वाले गोपाल प्रसाद और शंकर ऐसे ही व्यक्ति हैं। उनके माध्यम से लेखक लड़कियों की विवश स्थिति की ओर संकेत करते हुए भारतीय मध्यवर्गीय समाज की उस घृणित मनोवृत्ति को उजागर करता है जिसमें विवाह के लिए लड़की देखने के बहाने उसका मोल भाव किया जाता है। जिस तरह बाजार में कुर्सी मेज जैसी बेजान चीजें खरीदते समय उसे अच्छी तरह देख भाल लेते हैं, उसी तरह लड़कियों को देखने जाँचने की पद्धति भी हमारे समाज में प्रचलित है। इस पूरी प्रक्रिया में इस बात का बिलकुल ख्याल नहीं रखा जाता कि लड़की या उसके माँ बाप की भावनाओं को कोई ठेस पहुँच रही है या नहीं। न ही इस बात पर गौर किया जाता है कि जिस लड़के के रिश्ते के लिए लड़की को प्रदर्शन की वस्तु बनाकर परखा जाता है,वह स्वयं उस लड़की के योग्य है या नहीं। ऐसी स्थिति में लड़कियों की स्थिति बेजान वस्तुओं की तरह विवशता भरी होती है।

उमा अपनी शिक्षा, बुद्धिमानी, शारीरिक सौंदर्य और कला-संगीत की दृष्टि से शंकर से आगे है फिर भी पसंद-नापसंद करने का अधिकार शंकर और उसके पिता गोपाल प्रसाद को ही है। उमा की राय का कोई महत्व नहीं है। शंकर न तो पढ़ने लिखने में योग्य है और न ही चरित्र की दृढ़ता और आत्मविश्वास उसमें है। स्वास्थ भी उसका बहुत अच्छा नहीं है। वह इतना झुककर बैठता है जैसे उसके पास ' बैकबोन ' ही नहीं है। इसके बावजूद लड़के के पिता होने के कारण गोपाल प्रसाद अपने को श्रेष्ठ समझते हैं। उन्हें ज्यादा पढ़ी लिखी लड़की बहू के रूप में नही चाहिए। उनकी धारणा है कि पुरुष वर्ग स्त्रियोंसे जन्मजात रूप में श्रेष्ठ होता है। मर्दों का तो काम ही होता है पढ़ना और काबिल होना। अगर औरतें भी वही करने लगीं, अग्रेंजी अखबार पढ़ने लगीं और पॉलिटिक्स पर बहस करने लगीं तब तो हो चुकी गृहस्थी । वे मानते हैं कि मोर के पंख होते हैं मोरनी के नहीं, शेर के बाल होते हैं, शेरनी के नहीं। इसी तरह कुछ बातें दुनिया में ऐसी हैं जो सिर्फ मर्दों के लिए होती है। और ऊँची तालीम भी ऐसी ही चीजों में से एक है।

स्त्रियों के प्रति इस अमानवीय दृष्टिकोण को उजागर करना इस एकांकी का उद्देश्य रहा है। साथ ही, लेखक ने पिता की परिस्थितियों के साथ समझौता करने वाली उमा के सबल – समर्थ रूप को भी उजागर किया है। उमा यह मानती है कि खरीददार की तरह लड़की देखने आने वाले लोगों को लड़कियों की नाप तोल कर बेइज्जती करने के बदले अपने दुर्गुणों पर भी गौर करना चाहिए। लड़किंयों के हॉस्टल के इर्द-गिर्द ताक–झाँक करने वाले और नौकरानी के

पैरों पड़कर मुँह छिपाकर भागने वाले की असलियत उजागर कर गोपाल प्रसाद के अपमानजनक व्यवहार के विरुध्द वह विस्फोट करती है। परंपरा के विरोध में उसका व्यवहार स्त्रियों में आ रही चेतना का भी परिचायक है। लेखक यह दिखाना चाहता है कि पढ़ी- लिखी नारी अब परंपरा के नाम पर बलि चढ़ने से इनकार कर देती है।

इस तरह जहाँ नारी के प्रति परंपरागत संकीर्ण मनोवृत्तियों का विरोध करना इस एकांकी का उद्देश्य रहा है, वहीं शिक्षित युवतियों में नई चेतना के उभार और उनके विद्रोही स्वरूप को भी यहाँ दर्शाया गया हैं।

२.४ चरित्र चित्रण

२.४.१ गोपाल प्रसाद

गोपाल प्रसाद 'रीढ़ की हड्डी' एकांकी के प्रमुख पात्र हैं। वे पढ़े- लिखे और पेशे से वकील हैं। स्वयं लेखक ने संकेत दिया है कि उनकी आँखों से लोक चतुराई टपकती है। आवाज से मालूम होता है कि काफी अनुभवी और फितरती हैं। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण वे अपने बेटे शंकर के साथ बाबू राम स्वरूप की बेटी उमा की शादी के संबंध में लड़की देखने के लिए मुश्किल से तैयार होते हैं।

रामस्वरूप के घर आने पर वे बड़ी ही दुनियादारीपूर्ण बातें करते हैं। राम स्वरूप के यह कहने पर कि ' आप को तकलीफ तो दी,'वे तुरंत कह उठते हैं कि ' अरे नहीं साहब! जैसा मेरा काम, वैसा आपका काम । आखिर लड़के की शादी तो करनी ही है। बल्कि यों कहिए कि मैंने आपके लिए खासी परेशानी कर दी।

वे पुराने विचारो के हैं। इसी लिए बार-बार अतीत में चले जाते हैं। अपने बेटे शंकर के बीमार होने की बात कहते – कहते अपने जमाने की बात करने लगते हैं जब वे लोग स्कूल से आकर दर्जनों कचौडियाँ उड़ा जाते थे मगर फिर खाना खाने बैठते थे तो वैसी ही भूख होती थी । चार पैसे में ढ़ेर सी मलाई आती थी और अकेले ही वे दो आने की हजम कर जाते थे। तब खेलों में वॉलीबॉल, टेनिस या बैंडमिटन प्रचलित नहीं था। हॉकी या क्रिकेट कुछ लोग खेला करते थे लेकिन तब भी लड़के कमजोर नहीं होते थे।

गोपाल प्रसाद स्पष्टवादी एवं अर्थलोलुप भी हैं। वे बेटे की शादी की बातचीत को 'बिजनेस 'की बात मानते हैं। राम स्वरूप के अंदर जाने पर उनकी हैसियत का अंदाजा इसीलिए लगा लेते हैं। आजकल के जमाने पर व्यंग्य भी कर लेते हैं। इसीलिए वे खुबसूरती पर सरकार द्वारा टैक्स लगाने का सुझाव देते हैं। उनका मानना है कि यह ऐसा टैक्स होगा जिसे देने वाले चूँ भी नहीं करेंगे। बस, शर्त यह है कि हर एक औरत पर यह छोड़ दिया जाए कि वह अपनी खूबसूरती से स्टैंडर्ड के माफिक अपने ऊपर टैक्स तय कर ले ।

वे अपने बेटे शंकर के लिए ऐसी लड़की चाहते हैं जो ज्यादा पढ़ी- लिखी न हो किंतु सुंदर हो। इस मामले में उनके विचार दकियानूसी हैं। वे राम स्वरूप जी से साफ – साफ कहते हैं कि उन्हें ज्यादा पढ़ी – लिखी लड़की नहीं चाहिए क्योंकि उन्हें मेम साहब बनाकर नहीं रखना है। उनके नखरे कौन भुगतेगा। हद से हद मैट्रिक पास चाहिए। उन्हें उससे नौकरी भी नहीं करानी है । उनकी इस धारणा का एक कारण यह है कि वे लड़के और लड़कियों को समान नहीं

मानते हैं। ऊँची शिक्षा भी इन्हीं बातों में से एक है। यदि स्त्रियाँ भी पुरुषों के बराबर पढ़ लिख लेंगी तब घर- गृहस्थी कौन देखेगा। इस तरह वे पुरुषों को स्त्रियों से श्रेष्ठ मानते हैं। अपने इस मत की पुष्टि के लिए वे शेर और मोर के उदाहरण देते हैं। उनके अनुसार मोर के पंख होते हैं मोरनी के नहीं। शेर के बाल होते हैं, शेरनी के नहीं ।

इस तरह गोपाल प्रसाद रूढ़िवादी ढंग से सोचते हैं। उनमें पढ़े-लिखे क्यक्ति की तरह जागरूकता बिलकुल नहीं है। जब उमा उनके सामने आती है तो वे उसकी हर तरह से जाँच करते हैं। सबसे पहले वे यह जानना चाहते हैं कि उसकी आँखों पर चश्मा ज्यादा पढ़ाई के कारण तो नही है। इसके बाद उसकी चाल और खूबसूरती को परखते हैं। वे गाना- बजाना पेंटिंग, सिलाई आदि के बारे में भी पूछते हैं और अंत में उमा के मुख से इन बांतो के बारे में जानना चाहते हैं। उमा से खरी-खरी बातें सुनकर उन्हें अपनी बेइज्जती लगती है। यहाँ तक कि उमा के बी.ए.पास होने की बात सुनकर वे मानते हैं कि उमा के पिता राम स्वरूप ने उनके साथ दगा किया है। वे लड़की में तो सारे गुण चाहते है किंतु अपने बेटे के अवगुणों को छिपाते हैं। इस तरह गोपाल प्रसाद रूढ़िग्रस्त, पुराने विचारों वाले, धनलोलुप स्त्री शिक्षा विरोधी व्यक्ति हैं। वे स्पष्टवादी और लोकचतुराई से भरे तो हैं किंतु रूढ़िवादी चरित्र के रुप यहाँ प्रस्तुत हुए हैं।

२.४.२ उमा:

उमा बाबू रामस्वरूप और प्रेमा की पुत्री है। वह पढ़ी-लिखी एवं जागरूक युवती है जिसमें लड़की देखने जैसी परंपरागत रस्मों के प्रति आक्रोश है किंतु वह अपने पिता की परेशानियों को ध्यान में रखकर चुप रहती है। वह सज धज कर प्रदर्शन की वस्तु बनकर शंकर और उसके पिता के सामने नहीं आना चाहती है। उसके चेहरे पर तेज है। चाल में भी कोई खराबी नहीं है । कुल मिलाकर उसका बाहय् व्यक्तित्व आकर्षक है किंतु जब वह गोपाल प्रसाद के सामने आती है तो उसकी आँखों पर सुनहले रिम का चश्मा देखकर शंकर और उसके पिता दोनों को आश्चर्य होता है। रामस्वरूपजी आँख दुखने का बहाना करते हैं, जिससे उनको यह शक न हो कि अधिक पढ़ाई के कारण उसे चश्मा लगा है।

वह गीत – संगीत सिलाई-कढाई तथा पेंटिग आदि में भी निपुण है । गोपाल प्रसाद जब उससे गाने का आग्रह करते हैं तो वह ' मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरा न कोई 'गीत गाती है। गोपालप्रसाद के सवालों पर सवाल पूछने और अपना मुँह खोलने के लिए कहने पर उसका आक्रोश फूट पड़ता है। पिता के स्वाभिमान की रक्षा करते हुए भी अपने आहत स्वाभिमान के कारण वह दो टूक शब्दों में उत्तर देती है कि 'जब कुर्सी मेज बिकता है तब दुकानदार कुर्सी मेज से कुछ नहीं पूछता- सिर्फ खरीददार को दिखला देता हैं। पसंद आ गई तो अच्छा है वरना....!

पिता के रोकने पर भी उमा का आक्रोश फूट पडता है। वह कहती है कि 'ये जो महाशय मेरे खरीददार बनकर आए हैं , इनसे जरा पूछिए कि क्या लड़कियों के दिल नहीं होता? क्या उनको चोट नहीं लगती ? क्या वे बेबस भेड़ बकरियाँ हैं जिन्हें कसाई अच्छी तरह देख भाल कर खरीदते हैं? गोपाल प्रसाद को यह अपनी बेइज्जती प्रतीत होती है लेकिन वह अपने स्वाभिमान की रक्षा करती है। वह स्पष्ट करती है कि उसने बी.ए. पास किया है कोई चोरी नहीं की है। वह शंकर के चरित्र का पर्दाफाश करते हुए यह भी बताती है कि उसने शंकर की तरह ताक- झाँक करते हुए कायरता नहीं दिखायी है। शंकर तो नौकरानी के पैरों में पड़कर मुँह छिपाकर किसी तरह भागा था परंन्तु उसे उपनी इज्जत का खयाल है।

इस तरह उमा एक पढ़ी लिखी युवा लड़कियों की प्रतिनिधि चरित्र है जो लड़किंयों के प्रति हो रहे अपमानजनक अन्याय को सामाजिक परंपरा समझकर आसानी से स्वीकार नहीं करती । वह गोपालप्रसाद को यह ध्यान दिलाती है कि विवाह के लिए लड़की पसंद करने की परंपरा का निर्वाह करते समय लड़की की भावनाओं और उसके सम्मान का भी ध्यान रखना चाहिए । निर्जीव वस्तुओं या पशुओं की भाँति उनका नाप-तौल करने का कोई अधिकार पुरुषों को नहीं है। वह अपने स्वाभिमान को प्रकट करते हुए साहस के साथ युवा नारी के आक्रोश को प्रकट करती है। अत: कहा जा सकता है कि वह एक स्वाभिमानी, सुशिक्षित एवं समझदार लड़की है।

२.४.३ बाबू राम स्वरूप:

बाबू राम स्वरूप मध्यवर्गीय परिवार के ऐसे चरित्र हैं जो अपनी बेटी की शादी के लिए परेशान हैं । उनकी पत्नी प्रेमा और पुत्री उमा है। उनकी मूल चिंता पुत्री उमा की शादी संबंधी है । इसके लिए उन्हें अनेक परेशानियाँ उठानी पड़ती हैं। एक पढ़ी लिखी पुत्री के पिता होने पर भी उन्हें बेटी की शादी के लिए झूठ बोलना पड़ता है कि वह सिर्फ मैट्रिक तक पढ़ी है। किसी तरह वे लड़के के पिता गोपाल प्रसाद और उनके पुत्र शंकर को लड़की देखने के लिए राजी कर पाते हैं। उनकी बेटी उमा अपने अड़ियल स्वभाव के कारण उनकी चिंता का कारण बनती है। उमा को सज- धज कर या प्रदर्शन की वस्तु बनकर देखने आने वाले के सामने जाना अच्छा नहीं लगता किंतु लड़के वालों की पसंद के नाते रामस्वरूप अपनी पत्नी प्रेमा को समझाते हैं कि वह उमा को ठीक ठाक करके लाए।

राम स्वरूप अपने नौकर रतन और पत्नी प्रेमा की नासमझी से भी परेशान रहते हैं। इसीलिए वे नौकर को डाँटते हुए कहते हैं कि 'परमात्मा के यहाँ अक्ल बँट रही थी तो तू देर से पहुँचा था क्या? 'प्रेमा भी अपने स्वभाववश लड़की को पढ़ाना लिखाना जंजाल मानती है। उसके अनुसार लड़की को गिनती सीख लेना और स्त्री सुबोधनी पढ़ लेना पर्याप्त होता है।

राम स्वरूप उसकी आदतों पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि 'ग्रामोफोन दो तरह का होता है। एक तो आदमी का बनाया हुआ। उसे एक बार चलाकर जब चाहो तब रोक लो और दूसरा परमात्मा का बनाया हुआ । रिकार्ड एक बार चढ़ा तो रुकने का नाम नही'। इसी लिए उन्हें डर भी लगता है कि कहीं प्रेमा की बातों से यह प्रकट न हो जाए कि उमा ने बी.ए.पास किया है । वे उमा के पाउडर वगैर न लगाकर सादगी से आने की जिद्द पर भी महीन व्यंग्य करते हैं कि न जाने कैसा इसका दिमाग है। वरना आजकल की लड़कियों के सहारे तो पाउडर का कारोबार चलता है।'

राम स्वरूप पढ़े-लिखे सजग व्यक्ति हैं किंतु परंपराओं के आगे विवश भी हैं। उनकी विवशता उस समय और भी उजागार हो जाती है जब वे गोपाल और शंकर के दकियानूसी खयालों का मन ही मन विरोध करते हुए भी प्रत्यक्ष कुछ नहीं कर पाते । वे कहते हैं कि 'गुस्सा तो मुझे बहुत आता है इनके दकियानूसी खयालों पर। खुद पढ़े लिखे हैं, वकील हैं, सभा सोसाइटियों में जाते हैं, मगर लड़की चाहते हैं ऐसी कि ज्यादा पढ़ी लिखी न हो । वे मानते हैं कि मतलब अपना है, वरना इन लड़कों और इनके बापों को ऐसी कोरी सुनाता कि ये भी....! शंकर और गोपाल के आने पर वे बड़ी ही विनम्रता से पेश आते हैं। यहाँ तक कि स्वयं को उनका सेवक तक बताते हैं। वे उनकी हाँ में हाँ मिलाते रहते हैं ताकि रिश्ता तय हो जाए। इसी लिए गोपाल के स्त्री पुरुष में अंतर मानने पर तुरंत कह उठते हैं कि मर्द को दाढ़ी होती है, औरत को नहीं । उमा के खरी खोटी सुनाने पर भी वे उमा को चुप कराना चाहते हैं।

इस तरह राम स्वरूप लड़की के ऐसे पिता हैं जो अपने विचारों में प्रगतिशील हैं। अत: लड़की को पढ़ाते लिखाते हैं किंतु सामाजिक परिवेश के कारण विवश होकर अपनी योग्य और सुशिक्षित पुत्री का विवाह रीढ़ की हड्डी विहीन चरित्रहीन शंकर से करने के लिए विवश दिखायी देते हैं।

२.५ टिप्पणि

२.५.१ 'रीढ़ की हड्डी' शीर्षक की सार्थकता:

'रीढ़ की हड्डी' शीर्षक एकांकी मध्यवर्गीय समाज की एक ज्वलंत समस्या को केंद्र में रखकर लिखी गई है। रीढ़ की हड्डी एक प्रतीकात्मक शीर्षक है। प्राणी की शरीर रचना में रीढ़ की हड्डी का विशेष महत्व होता है। सभी हड्डियाँ इसीसे जुड़ी होती है। 'रीढ़ की हड्डी' जिनमें नहीं होती वे प्राणी सीधे खड़े नहीं हो पाते। रीढ़ की हड्डी' में असंतुलन आने से पूरी शरीर रचना असंतुलित हो जाती है। इस तरह शरीर को सुदृढ़ सुडौल और सशक्त बनाये रखने के लिए रीढ़ की हड्डी महत्वपूर्ण होती है। यह शरीर के संतुलन और शक्ति का आधार होती है। इसीलिए यह मुहावरे के रूप में प्रस्तुत होती है।

इस एकांकी के शीर्षक के रूप में इसका प्रयोग भी इसके मुहावरे वाले अर्थ का ही द्योतक है। असंतुलित और मूल्य विहीन व्यक्ति हो या समाज, वह रीढ़ की हड्डी के बिना ही कहा जाएगा । इस एकांकी में भी शंकर के चरित्र को प्रतीकात्मक ढंग से उद्घाटित किया गया है! शंकर और उसके पिता उमा को देखने जाते हैं। शंकर के पिता गोपाल प्रसाद चाहते है कि लडकी का खूबसूरत होना निहायत ही जरूरी है, चाहे पाउडर वगैरह लगाये या वैसे ही सुंदर हो। इसके विपरीत शंकर के बारे में वे स्वयं कहते हैं कि झुककर क्यों बैठते हो ? ब्याह तय करने आये हो , कमर सीधी करके बैठो। तुम्हारे दोस्त ठीक कहते हैं कि शंकर की बैकबोन नहीं है।

इसके अतिरिक्त वे उमा से भली भाँति पूछ- ताछ करते हैं। वे नहीं चाहते कि लड़की बहुत पढ़ी लिखी हो क्यों कि उन्हें नौकरी नहीं करानी है। वे मानते हैं कि शिक्षा सिर्फ मर्दों के लिए होती है। वे उमा के चलने – फिरने में कोई खराबी न पाकर उससे गाना- बजाना सुनते हैं। उसके पेंटिंग सिलाई-कढ़ाई और पुरस्कार आदि पाने की पूछताछ करके पूरी तरह संतुष्ट हो जाना चाहते हैं। इस प्रयास में वे यह बिलकुल नहीं सोचते कि इन सब बातों का लडकियों के दिल पर क्या असर होता हैं। भेड़- बकरियों की तरह मोल- भाव करने से अपमानित उमा बौखला उठती है। गोपाल प्रसाद उमा की शिक्षा, बुद्धिमत्ता, शारीरिक सौदर्य तथा कला और सिलाई आदि में निपुणता चाहते हैं लेकिन शंकर के चरित्र और उसकी शिक्षा आदि के बारे में सबकुछ छिपा जाते हैं। उमा यह प्रकट करती है कि शंकर लड़कियों के हॉस्टल में ताक-झाँक करते हुए पकड़ा गया था और अपनी इज्जत बचाने के लिए नौकरानी के पैर पड़कर मुँह छिपाकर वहाँ से किसी तरह भागा था। यह सुनकर शंकर और गोपाल प्रसाद को अपना अपमान प्रतीत होता है।

इस घटना के माध्यम से एकांकीकार यह स्पष्ट करता है कि विद्या, बुद्धि, चरित्र और आत्मविश्वास किसी भी दृष्टि से शंकर में दृढता नही है। चरित्र की दृढ़ता ही मनुष्य के जीवन में रीढ़ की हड्डी का काम करती हैं। शंकर में उज्ज्वल चरित्र का अभाव रीढ़ की हड्डी का ही अभाव है। इसी तरह जिस समाज में नारी के प्रति सम्मानपूर्ण भावना और मानवीय दृष्टिकोण नहीं है, उस समाज को भी रीढ़ की हड्डी से विहीन ही माना जा सकता है। इस तरह रीढ़ की

हड्डी शीर्षक जहाँ शंकर में चरित्रिक दृढता के अभाव की ओर संकेत करता है, वहीं समाज में भी नारी के प्रति उपेक्षापूर्ण धारणा उस समाज की मूल्यहीनता और रीढ़ विहीनता का ही सूचक है। अत: यह शीर्षक सार्थक अर्थपूर्ण एवं सांकेतिकता से पूर्ण सफल शीर्षक है।

२.६ संदर्भ सहित व्याख्या:

२.६.१ साफ बात है साहब, हमें ज्यादा पढ़ी – लिखी लड़की नहीं चाहिए । मेम साहब तो रखनी नहीं , कौन भुगतेगा उनके नखरों को। बस हद से हद मैट्रिक पास होनी चाहिए।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ हमारी पाठ्य पुस्तक ' आठ एकांकी ' में संकलित 'रीढ़ की हड्डी' एकांकी से ली गई हैं जिसके लेखक प्रसिद्ध नाटककार और एकांकी कार जगदीशचंद्र माथुर हैं। इस एकांकी में मध्यवर्गीय परिवारों में स्त्रियों की यथार्थ स्थिति का मार्मिक चित्रण किया गया है।

प्रसंग: माथुरजी ने लड़की दिखाए जाने की अपमानजनक प्रथा का चित्रण करते हुए मध्यवर्गीय समाज में स्त्रियों के प्रति पुरुष प्रधान मानसिकता वाले लोगों की असलियत भी उजागार की है। इस एकांकी में रामस्वरूप जी की बेटी उमा को देखने गोपाल प्रसाद और उनके बेटे शंकर आते हैं। रामस्वरूप बेटी की शादी के लिए परेशान हैं। अत: वे यह जानते हुए कि गोपाल प्रसाद दकियानूसी खयालों के हैं, उन्हें अपने यहाँ बुलाते हैं। बात- चीत के दौरान गोपाल प्रसाद प्रस्तुत पंक्तियों में अपने विचार प्रकट करते हैं।

स्पष्टीकरण: गोपाल प्रसाद खुद पढ़े लिखे और वकील हैं। सभा सोसाइटियों में उनका आना जाना भी होता रहता है परन्तु अपने बेटे शंकर के लिए वे ऐसी लड़की चाहते हैं जो बहुत अधिक पढ़ी – लिखी न हो । इसी लिए राम स्वरूप अपनी पत्नी प्रेमा को यह पहले ही समझा देते हैं कि वह उमा की पढ़ाई लिखाई के बारे में कुछ न बोले । उन्हें गोपाल प्रसाद के दकियानूसी विचारों पर गुस्सा तो बहुत आता है लेकिन मजबूरी के कारण उनसे कुछ कह नहीं पाते। गोपाल प्रसाद अपने बेटे शंकर की कमजोरियों को छिपाते है किंतु उसके लिए बहू सुंदर और गुणी चाहते हैं। वे ज्यादा पढ़ी लिखी बहू नहीं चाहते। इसीलिए वे कहते हैं कि साफ बात है, मेमसाहब तो रखनी नहीं, कौन भुगतेगा उनके नखरों को । बस हद से हद मैट्रिक पास होनी चाहिए । वे लड़कों को बी.ए., एम. ए. तक पढ़ाना चाहते हैं किंतु लड़कियों को नहीं । उनके अनुसार मर्दों का काम पढ़ना और काबिल होना है। यदि औरतें भी वहीं करने लगीं, अंग्रेजी अखबार पढ़ने लगीं और पॉलिटिक्स वगैरह पर बहस करने लगीं तो गृहस्थी नहीं चल सकती ।

विशेष:

इन पंक्तियों में गोपाल प्रसाद के रुढ़िग्रस्त और दकियानूसी विचार व्यक्त हुए हैं जिसमें पुरुष प्रधान मानसिकता झलकती है। इसके माध्यम से रचनाकार ने स्त्रियों की वास्तविक दशा की और संकेत करते हुए उनके अधिकारों के प्रति अपना समर्थन भी व्यक्त किया है।

२.६.२ क्या जवाब दूँ बाबूजी! जब कुर्सी मेज बिकती है, तब दुकानदार कुर्सी मेज से कुछ नहीं पूछता , सिर्फ खरीदार को दिखला देता है। पसंद आ गई तो अच्छा है वरना....!

संदर्भ :

प्रस्तुत गद्यांश 'रीढ़ की हड्डी' नामक एकांकी से लिया गया है । इसके रचयिता जगदीशचंद्र माथुर जी हैं। रीढ़ की हड्डी एक यथार्थवादी एकांकी है जिसमें रचनाकार ने मध्यमवर्गीय परिवारों में स्त्री की दशा का यथार्थ चित्रण किया है।

प्रसंग :

रामस्वरूप अपनी इकलौती पुत्री उमा के विवाह के लिए परेशान हैं। वे लड़की को पढ़ाने लिखाने और योग्य बनाने में विश्वास रखते हैं किंतु रुढ़िग्रस्त समाज की यथार्थ स्थिति जानकर वे उसकी उच्च शिक्षा द्विपाते हैं। उनके विपरीत गोपाल प्रसाद है। वे स्वयं पढ़े – लिखे वकील हैं। अपने बेटे को बी.ए. एम.ए. तक पढ़ाते है किंतु उन्हें उसके लिए बहू ऐसी चाहिए जो अधिक पढ़ी लिखी न हो। अधिक से अधिक मैट्रिक तक पढ़ी हुई लड़की वे चाहते हैं। उनका मानना है कि उन्हें नौकरी तो करानी नहीं है। यदि अधिक पढ़ी लिखी लड़की घर में बहू बनकर आएगी तो मेमसाहेब की तरह उसके नखरे उतारने पड़ेगे।

स्पष्टीकरण:

रामस्वरूप की पुत्री उमा बी.ए. पास है । वह संगीत, सिलाई- बुनाई, पेंटिग आदि में निपुण है। गोपाल प्रसाद अपने बेटे शंकर के लिए जब लड़की देखने आते हैं तो उमा को चश्मा लगाये देखकर पहला सवाल उसकी पढ़ाई को लेकर ही पूछते हैं। फिर उसकी चाल ढाल और चेहरे आदि की जाँच करने के बाद गाने बजाने के बारे में जानना चाहते हैं। उमा सितार पर मीरा का गीत सुनाती है। फिर उससे पेंटिग और सिलाई वगैरह के बारे में पूछते हैं। चुप बैठी उमा इन बातों से एकदम कुढ़ जाती है। इनाम वगैरह जीतने के बारे में पूछने पर वह कोई जवाब नहीं देती । पिता के कहने पर वह अपना आक्रोश दबा नहीं पाती। यह पूरी प्रक्रिया अत्यंत ही अपमान जनक लगती है। इसी लिए वह कहती है कि क्या जवाब दूँ बाबूजी! जब कुर्सी मेज बिकती है तब दुकानदार कुर्सी मेज से कुछ नहीं पूछता, सिर्फ खरीददार को दिखला देता है। उसके इस जवाब को सुनकर रामस्वरूप भी चौंक जाते हैं। गोपाल प्रसाद को यह अपमानजनक लगता है किंतु उमा अपने मन का आक्रोश निकालकर ही रहती है। वह स्पष्ट कहती है कि ये महाशय जो खरीददार बनकर आए हैं उनसे जरा पूछिए कि क्या लड़कियों के दिल नहीं होता? क्या उनको चोट नहीं लगती? क्या वे भेड़ बकरियाँ हैं, जिन्हें कसाई अच्छी तरह देखभाल कर खरीदते हैं!

विशेष :

इस तरह उमा के इस कथन से उसका स्वाभिमान झलकता है। वह एक पढ़ी लिखी लड़की है जो पुरुष प्रधान समाज की उस दकियानूसी प्रवृत्ति पर प्रहार करती है जिसके तहत स्त्री की अस्मिता को भेड़ बकरियों की तरह माना जाता है।

संदर्भ सहित व्याख्या के लिए अन्य अवतरण :

१. ये लोग जरा ऐसे ही हैं। गुस्सा तो मुझे बहुत आता है इनके दकियानूसी खयालों पर । खुद पढे-लिखे हैं, वकील हैं, सभा सोसाइटियों में जाते हैं, मगर लड़की चाहते हैं ऐसी कि ज्यादा पढ़ी –लिखी न हो।

२. क्या करूँ, मजबूरी है। मतलब अपना है, वरना इन लड़कों और इन के बापों को ऐसी कोरी – कोरी सुनाता कि ये भी....

३. यह ऐसा टैक्स है जनाब, कि देने वाले चूँ भी न करेंगे। बस शर्त यह है कि हर एक औरत पर यह छोड़ दिया जाए कि वह अपनी खूबसूरती के स्टैंडर्ड के माफिक अपने ऊपर टैक्स तय कर ले । फिर देखिए सरकार की कैसी आमदनी बढ़ती है।

४. भला पूछिए इन अक्ल के ठेकेदारों से कि क्या लड़कों की पढ़ाई और लडकियों की पढ़ाई एक बात है। अरे मर्दो का काम तो है ही पढ़ना और काबिल होना। अगर औरतें भी वही करने लगीं, अंग्रेजी अखबार पढ़ने लगीं और पॉलिटिक्स वगैरह पर बहस करने लगी तब तो हो चुकी गृहस्थी ।

५. ये जो महाशय मेरे खरीददार बनकर आए हैं, इनसे जरा पूछिए कि क्या लड़कियों के दिल नहीं होता? क्या उनके चोट नहीं लगती? क्या वे बेबस भेड़ -बकरियाँ हैं, जिन्हें कसाई अच्छी तरह देखभाल कर खरीदते हैं?

६. और हमारी बेहज्जती नहीं होती, जो आप इतनी देर से नाप – तोल कर रहे हैं?

७. जी हाँ, जाइए, जरूर चले जाइए। लेकिन घर जाकर जरा यह पता लगाइएगा कि आपके लाडले बेटे के रीढ़ की हड्डी भी है या नहीं - यानी बैकबोन, बैकबोन....

२.६ वस्तुनिष्ठ प्रश्न:

प्र.१. राम स्वरूप रतन से कौन सा वाद्ययंत्र लाने के लिए कहते हैं?
उ. राम स्वरूप रतन से हारमोनियम और सितार लाने के लिए कहते हैं।

प्र.२. किस ग्रामोफोन पर रिकार्ड एक बार चढ़ा तो रुकने का नाम नहीं लेता?
उ. परमात्मा द्वारा बनाये हुए ग्रामोफोन पर रिकार्ड एक बार चढ़ा तो रुकने का नाम नहीं लेता।

प्र.३. राम स्वरूप के अनुसार पाउडर का कारोबार किसके सहारे चलता है?
उ. राम स्वरूप के अनुसार पाउडर का कारोबार आजकल की लड़कियों के सहारे चलता है।

प्र.४. जब अक्ल बँट रही थी तब कौन देर से पहुँचा था?
उ. जब अक्ल बँट रही थी तब रतन देर से पहुँचा था।

प्र.५. राम स्वरूप के अनुसार किसे अपनी जबान पर काबू नहीं है?
उ. राम स्वरूप के अनुसार प्रेमा को अपनी जबान पर काबू नहीं है।

प्र.६ उमा को क्या लेकर भेजने के लिए राम स्वरूप कहते हैं?
उ. राम स्वरूप उमा को पान लेकर भेजने के लिए कहते हैं।

प्र.७. राम स्वरूप बाबू गोपाल प्रसाद को किस तरह के खयालों वाला मानते हैं?
उ. राम स्वरूप बाबू गोपाल प्रसाद को दकियानूसी खयालों वाला मानते हैं।

प्र.८. गोपाल प्रसाद किसे कमर सीधी करके बैठने को कहते हैं ?
उ. गोपाल प्रसाद शंकर को कमर सीधी करके बैठने के लिए कहते हैं।

प्र.९. गोपाल प्रसाद कैसी चाय पीना चाहते हैं ?
उ. गोपाल प्रसाद आधा दूध और आधी चाय पीना चाहते हैं।

प्र.१० सरकार की आमदनी बढ़ाने के लिए गोपाल प्रसाद किस पर टैक्स लगाने का सुझाव देते है ?
उ. सरकार की आमदनी बढ़ाने के लिए गोपाल प्रसाद खूबसूरती पर टैक्स लगाने का सुझाव देते हैं।

प्र.११ पढ़ना और काबिल होना किसका काम है ?
उ. पढ़ना और काबिल होना मर्दों का काम है।

प्र.१२ पंख किसके नहीं होते हैं ?
उ. पंख मोरनी के नहीं होते हैं।

प्र.१३ ऊँची तालीम किसके लिए होती है ?
उ. ऊँची तालीम मर्दों के लिए होती है।

प्र.१४ राम स्वरूप उमा के चश्मा लगाने का क्या कारण बताते हैं ?
उ. उमा के चश्मा लगाने का कारण राम स्वरूप आँखें दुखना बताते हैं।

प्र.१५ उमा किस बात से अपनी बेइज्जती अनुभव करती है ?
उ. उमा नाप तोल से अपनी बेइज्जती अनुभव करती है।

२.८ बहुविकल्पीय प्रश्न:

प्र.१ गोपाल प्रसाद अपने बेटे के लिए कितनी पढ़ी लिखी लड़की चाहते हैं ?
(i) बी.ए.(ii) एम.ए. (iii)मैट्रिक (iv) एम. एससी.
उ. मैट्रिक

प्र.२ उमा किसके गीत सुनाती है ?
(i) मीरा के (ii) कबीर के (iii)सूरदास के (iv) बच्चन के
उ. मीरा के

प्र.३ शंकर को कहाँ घूमते हुए भगाया गया था ?
(i) बाजार से (ii) समुद्र के किनारे से (iii)बागीचे से
(iv) लड़कियों के हॉस्टल से
उ. लड़कियों के हॉस्टल से

प्र.४ उमा ने कौन सी कक्षा पास की थी ?

(i) बी.ए.(ii) एम.ए. (iii)इंटरमीडिएट (iv) बी.एड.

उ. बी.ए.

प्र.५ गोपाल प्रसाद से अपने बेटे के बारे में उमा क्या पता लगाने को कहती है ?

(i) मेडिकल की परीक्षा परिणाम (ii) रीढ़ की हड्डी

(iii)चरित्र की दृढ़ता (iv) एम. ए. की परीक्षा का परिणाम

उ. रीढ़ की हड्डी

२.९ बोध प्रश्न

१. 'रीढ़ की हड्डी' एकांकी का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

२. 'रीढ़ की हड्डी' एकांकी में नारी की बेबसी का प्रखर विरोध प्रकट हुआ है ।' स्पष्ट कीजिए।

३. 'रीढ़ की हड्डी ' में लड़की देखने की प्रथा पर किस तरह व्यंग्य किया गया है ?

४. उमा आधुनिक नारी की प्रतिनिधि एवं सजग चरित्र है। विवेचन कीजिए।

❖❖❖❖

३

संस्कार और भावना

- विष्णु प्रभाकर

इकाई की रूपरेखा :

३.० इकाई का उद्देश्य

३.१ प्रस्तावना

३.२ कथा-सार

३.३ उद्देश्य

३.४ चरित्र चित्रण

- माँ
- अतुल
- उमा
- अविनाश
- अविनाश की पत्नी

३.५ संदर्भ सहित स्पष्टीकरण

३.६ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

३.७ बोध प्रश्न

३.० इकाई का उद्देश्य:

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- एकांकीकार के बारे में जान सकेंगे।
- संस्कार और भावना का कथा-सार अपने शब्दों में लिख सकेंगे।
- एकांकी के प्रतिपाद्य या उद्देश्य से परिचित हो सकेंगे।
- एकांकी के प्रमुख चरित्रों का विवेचन कर सकेंगे।
- एकांकी की कुछ महत्वपूर्ण पंक्तियों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।
- इससे संबंधित बोध-प्रश्नों एवं टिप्पणियों संबंधी जानकारी प्राप्त कर सकेंगें।

३.१ प्रस्तावना:

विष्णु प्रभाकर हिदीं के उन रचनाकारों में से एक हैं, जिन्होंने कहानी, जीवनी, नाटक, संस्मरण और एकांकी आदि विभिन्न विधाओं में खूब लिखा है। कथाकार और नाटककार के रूप में उन्हें विशेष ख्याति मिली। 'आवारा मसीहा' नाम से शरदचंद्र चट्टोपाध्याय की जीवनी उनकी सर्वाधिक प्रसिद्ध पुस्तक है। गांधी विचार दर्शन की ओर उनका विशेष झुकाव रहा है। इसी लिए वे हृदय परिवर्तन में अधिक विश्वास रखते थे। संस्कार और भावना में भी हृदय परिवर्तन के माध्यम से मानवीय मूल्यों और संवेदनाओं की रक्षा का प्रयास किया गया है। परंपरागत संस्कारों को महत्व देने के कारण अविनाश की माँ अपनी बहू को स्वीकार नहीं कर पाती लेकिन बेटे की बीमारी की खबर सुनकर उसकी ममता की भावना तीव्र हो उठती है यहीं संस्कार और भावना का द्वंद्व आंरभ होता है। अंततः पुराने संस्कारों को छाड़कर माँ अविनाश की बहू को स्वीकार करती है। संस्कारों पर भावना की विजय दिखाकर एकांकीकार ने रूढ़िबद्ध मानसिकता में बदलाव की प्रक्रिया को प्रस्तुत किया है।

३.२ कथा-सार

एंकाकी का आरंभ माँ और छोटी बहू उमा की आपसी बातचीत से होती है। माँ बताती है कि उसका बड़ा बेटा अविनाश बहुत बीमार था। वह हैजा से मरकर बचा है। उसकी पत्नी ने जी जान से प्रयत्न करके उसे बचा लिया है । उमा आश्चर्य व्यक्त करती है कि उसके पति अतुल को अपने बड़े भाई की बीमारी के बारे में कैसे पता नहीं चला। माँ का मानना है कि अतुल को यदि पता चलता तो भी वह उसे नहीं बताता क्यों कि उसके दोनों बेटे निर्मम हैं। जैसा मोह माँ के मन में बेटों के लिए है, वैसा बेटों के मन में माँ के लिए नहीं है।

उमा इन स्थितियों के लिए भाभी यानी बड़े बेटे अविनाश की पत्नी को ही जिम्मेदार मानती है। इसी लिए वह उनसे लड़ने भी जाती है । उसका मानना है कि बड़े भैया उन्हीं के कारण परिवार से अलग हो गये हैं। वह यह भी कहती है कि यदि वे भैया को छोड़ दें तो अभी भी माँ-बेटे एक हो सकते हैं। माँ भी बेटे को अपनाने को तैयार है किंतु वह उसकी पत्नी को नहीं अपनाना चाहती क्योंकि वह विजातीय और बंगाली परिवार की है। इसके विपरीत अविनाश की पत्नी भी मानती है कि माँ को बेटे से अलग करना पाप है किंतु पत्नी के नाते उस का भी अपना कर्तव्य है। इस लिए वह उनको दुखी करके माँ को सुखी नहीं कर सकती। उमा यह सब माँ को बताते हुए भाभी की सुंदरता एवं व्यवहार कुशलता की भी चर्चा करती है। माँ को उसी से यह भी मालूम होता है कि छोटा बेटा अतुल भी वहाँ जाता रहता है।

यह सब सुनकर माँ के मन की वेदना और अधिक बढ़ जाती है। वह परेशान हो उठती है कि छोटी बहू और बेटे दोनों अविनाश और उसकी बहू से मिल आये हैं किंतु वह अविनाश से इतना प्यार करते हुए भी उसे देखने को तरसती रही है। उसका मानसिक अंतर्द्वंद्व बढ़ता जाता है। उसे लगता है कि यदि वह संस्कारों की दासता से मुक्त होकर कुल, जाति और धर्म को अधिक महत्व नहीं देती तो बेटे से नहीं बिछड़ती । वह अपने संस्कारों और पुत्र के प्रति स्नेह के बीच संघर्ष में डूबी रहती है। उसे लगने लगता है कि दोष अविनाश की बहू का नहीं बल्कि उसक अपने संस्कारों का है जिनके कारण वह बेटे से अलग हो गई है।

इसी बीच छोटा बेटा अतुल आता है । वह अतुल से पूछती है कि जब वह जानता था कि उसका बड़ा भाई बीमार है तो उसने उसे क्यों नहीं बताया। अतुल कहता है कि उसे बताकर कोई फायदा नहीं था क्यों कि वह विजातीय और नीची जाति की बहू को घर लाने के लिए हरगिज तैयार नहीं होती । वह उससे यह भी कहता है कि भाई के लिए भाभी से बढ़कर दूसरा कोई व्यक्ति नहीं है, इस कटु सत्य को स्वीकार कर लेना चाहिए।

थोड़े दिनों बाद मिसरानी से माँ को जब यह पता चलता है कि अविनाश की बहू सख्त बीमार है और मृत्यु से संघर्ष कर रही है तो वह और अधिक विचलित होने लगती है । अतुल उसे यह बताता है कि भाई के पास इतनी शक्ति और साधन नहीं है कि वह अपनी पत्नी का इलाज करके उसे बचा सके किंतु वह किसी से पैसे की सहायता नहीं लेगा। यह सुनकर माँ का हृदय परिवर्तन होने लगता है। वह जानती है कि यदि बहू को कुछ हो गया तो अविनाश भी न बच सकेगा । उसका हृदय टूट जाएगा। अविनाश को बचाने की शक्ति केवल उसकी पत्नी में ही है। अंतत: वह बहू को स्वीकार करने के लिए तैयार हो जाती है। उमा को याद आता है कि जिन बातों का हम प्राण देकर विरोध करते हैं, एक समय आता है, जब हम उन्हीं बातों को स्वीकार कर लेते हैं।

३.३ उद्देश्य

'संस्कार और भावना 'रूढ़िबद्ध संस्कारों में जकड़ी पुरानी पीढ़ी के भावनावश उससे बाहर निकलने और नए संस्कारों और मूल्यों को स्वीकार करने वाली एकांकी है। इसके माध्यम से लेखक ने यह संकेत करने का प्रयास किया है कि जिन बातों का हम प्राण देकर भी विरोध करने को तैयार रहते हैं, एक समय आता है, जब हम उन्हीं बातों को स्वीकार कर लेते हैं। कारण भले ही कुछ भी हो सकता है।

प्रस्तुत एकांकी की माँ ऐसे ही पुराने रूढ़िगत संस्कारों से जकड़ी हुई है, जिसके कारण वह अपने बड़े बेटे अविनाश और उसकी बहू को स्वीकार नहीं कर पाती। अविनाश की बहू बंगाली परिवार की है जिसे अविनाश की माँ विजातीय और नीच कुल की मानती है। इसके विपरीत अविनाश का मानना है कि संस्कारों की दासता सबसे भयंकर शत्रु होती है। माँ जब अविनाश को अपने प्रेम की दुहाई देते हुए समझाती है तो भी वह दो टूक जवाब देता है कि संतान का पालन पोषण माँ बाप का नैतिक कर्तव्य है। वे किसी पर एहसान नहीं करते बल्कि राष्ट्र का ऋण चुकाते हैं। इस तरह लेखक ने यह उजागर करने का प्रयास किया है कि कुल, जाति या धर्म संबंधी कट्टर संस्कार मनुष्य के सोच को इतना संकीर्ण बना देते हैं कि वह अपने बुद्धि-विवेक आदि का त्याग कर अन्य जाति या धर्म के व्यक्तियों को अपने से छोटा मानने लगता है। वह अपनी श्रेष्ठता को हर कीमत पर कायम रखना चाहता है। इस एकांकी की माँ की मन:स्थिति ऐसी ही है लेकिन उनकी मन: स्थिति का बदलाव प्रस्तुत एकांकी में बड़े ही सहज ढंग से उभारा गया है।

कुल- जाति या धर्म संबंधी पुरानी मानसिकता को त्याग कर मनुष्य मात्र के रूप में मानकर अविनाश की माँ का उसकी बहू को स्वीकार करना उसकी आंतरिक आवश्यकता के आधार पर संभव हुआ है। संस्कारों में बँधी हुई माँ जब यह जानती है कि अविनाश बेहद बीमार था और उसका छोटा बेटा अतुल भी उससे मिलने गया था लेकिन उसने भी माँ को बताना उचित नहीं समझा तो वह अविनाश को देखने के लिए तरस उठती है। उसका मानसिक

अंतर्द्वंद्व बढ़ता जाता है क्योंकि बेटे के प्रति-स्नेह के कारण वह उससे मिलना चाहती है किंतु विजातीय बहू को न स्वीकार पाने के संस्कार के कारण रूक जाती है। इसी बीच जब उसे बहू के मृत्यु से संघर्ष करने की बात सुनाई देती है तो उसका मन बदलने लगता है। वह जानती है कि यदि बहू को कुछ हो गया तो अविनाश का हृदय टूट जाएगा और वह भी न बचेगा । अत: वह बहू को स्वीकार करने के लिए तैयार हो जाती है। उसकी ममता और दायित्व बोध उसके संस्कारों पर विजय पा लेते हैं।

माता-पिता और संतान के बीच संबंधों में आ रहे बदलाव को दर्शाना इस एकांकी का उद्देश्य रहा है। लेखक यह संकेत करता है कि माता- पिता की आज्ञा का पालन करना पुत्र का धर्म है किंतु इस आज्ञापालन में पुत्र के व्यक्तित्व और विवेक की भी रक्षा होनी चाहिए। आँख बंद करके माता की आज्ञा का पालन करने का लेखक ने विरोध किया है। अविनाश इस संदर्भ में ठीक ही कहता है कि संतान का पालन माँ – बाप का नैतिक कर्तव्य है। वे किसी पर कोई एहसान नहीं करते, केवल राष्ट्र का ऋण चुकाते हैं। वे ऋणमुक्त हों, यही उनका परितोष है, इससे अधिक मोह है।

इसके अलावा इस एकांकी में संस्कार और भावना के द्वंद्व में भावना के विजयी होने और परंपरागत संकीर्ण संस्कारों के धराशायी होने के माध्यम से लेखक ने आज के भौतिकवादी युग में शुष्क होते जा रहे संबंधों को बचा पाने की ओर भी संकेत किया है। यदि विवेक सम्मत विचारों को महत्व दिया जाए तो परिवार संस्था दीर्घजीवी हो सकती है।

इस तरह यह एकांकी बड़े ही सहज रूप में यह दृष्टिकोण व्यक्त करती है कि नई पीढ़ी अपने नये सोच के अनुरूप हर पुराने संस्कार को ढोने के लिए तैयार नहीं है। साथ ही, ममता, वात्सल्य और प्रेम आदि हृदय के कोमल भावों की सुरक्षा के लिए यदि कुछ संकीर्ण और पुराने संस्कारों को छोड़ना भी पड़े तो हमें इसके लिए तैयार रहना चाहिए।

३.४ चरित्र चित्रण:

माँ : 'संस्कार और भावना' की माँ एक तरफ अपने रूढ़िवादी और पुराने संस्कारों से जकड़ी हुई हैं तो दूसरी और बड़े बेटे के प्रति ममता से भरी हैं। इन्हीं दो स्थितियों के बीच अपने आप से जूझती हुई वे अंतत: प्राचीन जर्जर संस्कारों पर विजय प्राप्त कर अपनी ममता को महत्व देती हैं। इस प्रयास में उनके चरित्र के तीन पक्ष उजागर होते हैं। एक तरफ उनमें जहाँ अपने पुत्र के लिए ममता है , वहीं एक सास के रूप मे वे अधिक कठोर हैं। तीसरे उनमें पुराने संस्कारों और नई चेतना के बीच संघर्ष भी दिखायी देता है।

वे अपने दोनों बेटों से बहुत अधिक स्नेह और ममता रखती हैं। इसका परिचय हमें तब मिलता है जब उन्हें पता चलता है कि उनका बड़ा बेटा अविनाश बीमार था और मर कर बचा है। वे कहती हैं कि ' मेरा बेटा बीमार था और मुझे पता भी नहीं चला। यह सुनकर मैं शर्म से गड़ गई । बचपन में उसे कभी खाँसी हो जाती थी तो मै कई- कई दिन तक न खाती थी, न सोती थी। ' बेटे की बीमारी की बात सुनकर वे छटपटाने लगती हैं। जब उन्हें यह मालूम होता है कि अतुल भी भाई की बीमारी के बारे में जानता है और वह उससे मिलने भी गया था तो ममतावश ही कह उठती हैं कि तुम सब जाते हो, तुम जो निर्मम हो और मैं जो मोह- ममता में फँसी हूँ,

उसकी सूरत को तरसती हूँ। अंतत: अपनी ममता के कारण ही बहू को स्वीकाने को तैयार होती हैं क्यों कि वे जानती हैं कि यदि बहू नहीं बची तो अविनाश भी नहीं बचेगा।

माँ के चरित्र का दूसरा पक्ष सास के रूप में दिखायी देता है। यहाँ भी उनका मातृत्व प्रबल है किंतु सिर्फ बेटे के लिए। वे स्वयं के अविनाश से दूर होने का कारण बहू को मानती हैं। उन्हें लगता है कि बहू ने ही उनके बेटे को उनसे छीना है। अविनाश ने एक विजातीय लड़की से विवाह किया था किंतु इसके लिए माँ सिर्फ बहू को जिम्मेदार मानती थीं। उस पर उन्हें बहुत क्रोध आता था। बेटा माँ से अलग रहता था क्योंकि माँ बहू को स्वीकार नहीं करती थी। छोटा भाई अतुल यह जानता था कि भाभी से बढ़कर भैया का कोई नहीं है किंतु माँ इस बात को स्वीकार नहीं करना चाहती। वे बेटे पर किसी ऐसे व्यक्ति का अधिकार नहीं स्वीकार कर पातीं जिसे वे स्वयं पसंद नहीं करती हैं। इसी कारण वे बेटे को समझाती हैं, अपने प्रेम की दुहाई भी देती हैं किंतु अविनाश नही मानता । उसके अनुसार अपनी संतान का पालन-पोषण करना माँ-बाप का नैतिक कर्तव्य है। वे किसी पर एहसान नहीं करते, केवल राष्ट्र का ऋण चुकाते हैं। इस तरह माँ बहू को अपना नहीं पाती और बेटा बहू के साथ अलग रहता है। बेटे की बीमारी में बहू द्वारा की गई सेवा भी बहू के प्रति उसके भाव बदल नहीं पाती। अंतत: बहू की बीमारी के समय वे उसे स्वीकारने को तैयार होती हैं लेकिन वह भी इस लिए क्यों कि यदि बहू को कुछ हो गया तो बेटा भी जीवित नहीं बचेगा।

माँ के व्यक्तित्व का तीसरा पहलू रूढ़िबद्ध संस्कारों और आधुनिक चेतना के बीच मानसिक संघर्ष से जुड़ा है। कुल, धर्म और जाति के परंपरागत संस्कार माँ के मन में इतने घर किए हैं कि वे विजातीय बंगाली युवती से विवाह करने पर बेटे को त्याग देती हैं किंतु उसकी पत्नी को अपनी बहू के रूप में स्वीकार नहीं करतीं। कुलीनता और जाति-पाँति की जंजीरो में जकड़ी होने के कारण बीमार बेटे से मिलने भी नहीं जी पातीं। उन्हें यह पता चलता है कि बेटा अतुल भी बड़े भाई से मिलने जाता रहा है किंतु वही नहीं जा पा रही हैं तो वे छटपटा कर रह जाती हैं। वे सोचती हैं कि काश मैं संस्कारों की दासता से मुक्त हो सकती तो कुल, धर्म और जाति का भूत मुझे तंग नहीं करता और मैं अपनी बेटे से न बिछड़ती।

अंत में उनका ह्रदय परिवर्तन होता है। बहू की बीमारी की खबर जानकर वे बहू को घर लाने के लिए तैयार हो जाती हैं। संस्कारों की जंजीर तोड़कर वे बेटे को मुसीबत से उबारने के लिए बहू को स्वीकारने को तैयार हो जाती हैं।

इस तरह माँ उस पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करती हैं जो बदलाव को आसानी से तो स्वीकार नहीं करती किंतु अपनी भावनाओं से मजबूर होकर नई स्थितियों को स्वीकार कर लेती है।

अतुल: 'संस्कार और भावना' एकांकी में अतुल माँ का छोटा बेटा है। वह स्वस्थ युवक है साँवला रंग, मुख पर दृढ़ता और आँखों में सौम्यता है। बड़े भाई से स्नेह रखता है किंतु माँ और पत्नी से छिपकर उनसे मिलता है।

अतुल पुराने संस्कारों एवं रूढ़ियों से मुक्त है। अत: जिन कारणों से माँ ने बेटे –बहू को त्याग दिया था, उन कारणों को वह महत्व नहीं देता। उसके बड़े भाई अविनाश ने एक विजातीय बंगालिन लड़की से विवाह किया था। माँ को विजातीय बहू स्वीकार नहीं थी लेकिन अतुल भाभी को सम्मान देता है। भाभी के प्रति माँ की कटुता को वह गलत मानता है। माँ जब अविनाश की

बीमारी के बारे में जानते हुए उसे ने बताने का उलाहना देती है तो वह स्पष्ट कर देता है कि जब तक तुम नीची श्रेणी की विजातीय भाभी को घर नहीं ला सकतीं, तब तक प्रेम और ममता की दुहाई व्यर्थ है। वह माँ को निर्मम ही नहीं कायर भी मानता हैं क्योंकि वे जिन संस्कारों में पली हैं, उन्हें तोड़ने की शक्ति उनमें नहीं है।

इस तरह वह स्पष्टवक्ता की तरह माँ की कमजोरियों को उजागर करता है। भाई अविनाश के प्रति संवेदनशील है। इसी लिए उसकी बीमारी के समय दप्तर के काम का बहाना बनाकर उससे मिलने जाता है। वह भाई के स्वभाव से भलीभाँति परिचित है। वह जानता है कि भाई उसे ही नहीं उसके द्वारा भेजे गये डॉक्टर को भी स्वीकार नहीं करेगा। भाभी की बीमारी के समय भी वह कोई प्रयत्न नहीं करता क्योंकि वह अविनाश के स्वाभिमानी स्वभाव को जानता है । उसे पता है कि भैया किसी के आगे हाथ नहीं पसारेंगे।

इस तरह अतुल माँ का ह्रदय परिवर्तन कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वह सामाजिक कुरीतियों के सुधार के लिए सामाजिक परिवर्तन को उचित मानता है और पुरानी पीढ़ी के लोगों को उनकी भूलों का ध्यान दिलाकर उन्हें अपनी गलती सुधारने के लिए प्रेरित करता है। उसके उकसाने पर ही माँ बंगाली बहू को अपनाने के लिए तैयार हो जाती है।

उमा: उमा घर की छोटी बहू और अतुल की पत्नी है। वह पढ़ी-लिखी और रूपवती युवती है। अपने पति अतुल से वह बेहद प्यार करती है। पुस्तकें पढ़ने का उसे शौक है। सास के प्रति उसके मन में आदर एवं सम्मान का भाव है। इसी लिए मिसरानी से अपने बेटे अविनाश की बीमारी की बात सुनकर जब माँ अत्यंत दुखी होती हैं तो उमा उन्हें बड़े सम्मान के साथ समझाती है। यद्यपि उसकी सास मानती हैं कि सभी लोग अविनाश की इस दशा के लिए उसी को दोषी मानते हैं' किंतु उमा इसमें पूरा दोष अविनाश की पत्नी का मानती है। उसके अनुसार उसकी जेठानी देखने में बड़ी भोली लगती है लेकिन उसी के कारण माँ से एक बेटा अलग रहने लगा है। सास के दुख से दुखी होकर एक दिन वह अपनी जेठानी से लड़ने भी जाती है। उमा की दृष्टि में माँ को बेटे से अलग करना पाप होता है। इस लिए जेठानी को वह दोषी ठहराती है किंतु जेठानी के रूप – सौंदर्य और सद्व्यवहार से वह सँभल जाती है।

जेठानी का तर्क समझकर वह चुप हो जाती है। उसे भी पता चलता है कि पति को छोड़ने के लिए कोई कहे तो यह एक पत्नी के लिए कठिन कार्य है। वह अपनी सास को भी समझाती है कि सारा दोष भाभी का ही नहीं है। उमा और उसके पति अतुल के कारण ही उसकी सास एक विजातीय बहू को घर लाने के लिए तैयार हो जाती हैं। सास के राजी होने पर उसे अपनी पढ़ी हुई पुस्तक का एक वाक्य याद आता है कि जिन बातों का हम प्राण देकर भी विरोध करने को तैयार होते हैं, एक समय आता है, जब चाहे किसी कारण से भी हो, हम उन्हीं बातों को स्वीकार कर लेते हैं।

इस तरह उमा एक समझदार स्त्री है। वह पारिवारिक संबंधों को तोड़ना उचित नहीं समझती । इसीलिए अपनी जेठानी से लड़ने जाती है किंतु उनकी बातें समझकर उनसे भी लगाव रखने लगती है और प्रयास करके उन्हें घर लाने के लिए सास को राजी भी कर लेती है। जेठानी से जो कुछ कहती है, वह सिर्फ इस लिए कि सास को दुखी नहीं देख पाती। वस्तुत: वह सहृदय है और एक समझदार बहू की तरह घर में सामंजस्य बनाये रखना चाहती है। एक तरफ वह पुराने किंतु स्वस्थ जीवन मूल्यों को अपनाने का प्रयास करती है तो दूसरी और संकीर्ण परंपरांओं और रूढ़ियों को नकारने का भी प्रयास करती है।

अविनाश : 'संस्कार और भावना' एकांकी में अविनाश और उसकी पत्नी का प्रत्यक्ष चित्रण न करते हुए भी लेखक ने उनके बारे में बहुत कुछ संकेत किया है। अविनाश अतुल का बड़ा भाई है। उसने एक विजातीय बंगाली लड़की से विवाह कर लिया था। उसकी माँ ने उस लड़की को बहू के रूप में स्वीकार नहीं किया था। अत: वह परिवार से अलग रहता था। माँ को इस बात का बेहद दुख था कि उस विजातीय लड़की ने ही उसके बेटे को उसने छीना था।

अविनाश इसे माँ का अतिरिक्त मोह मानता है। उसका मानना है कि संतान का पालन माँ – बाप का नैतिक कर्तव्य है। वे किसी पर एहसान नहीं करते केवल राष्ट्र का ऋण चुकाते हैं। वे ऋण-मुक्त हों, यही उनका परितोष है। इससे अधिक मोह है, इसीलिए पाप है।

अविनाश अत्यंत ही स्वाभिमानी प्रकृति का है। इसीलिए बीमारी के समय किसी की सहायता नहीं लेता । उसके इसी स्वभाव के कारण कोई सहायता करने भी नहीं आता। यहाँ तक कि मिलने जाने के संदर्भ में उमा के पूछने पर अतुल कहता है कि मुझे तो क्या मेरे डॉक्टर को भी वे अपने पास नहीं आने देते । अविनाश को अपनी पत्नी से बेहद लगाव था। पत्नी की बीमारी के समय भी वह किसी के सामने हाथ नही फैलाता । अतुल कहता भी है कि भैया में एक दोष हैं – वे जो कहते हैं, उसे करना जानते हैं। उनके पास पैसा नहीं है, पंरन्तु उसके लिए वे किसी के आगे हाथ नही फैलाएँगे। वे फौलाद के समान है जो टूट जाएँगे पर झुकेंगे नहीं। अविनाश की इसी दृढ़ता के कारण माँ भी अपने संस्कारों मे ं परिवर्तन लाती है और विजातीय बंगाली बहू को स्वीकारने के लिए तैयार हो जाती है।

अविनाश की पत्नी:

अविनाश की पत्नी का चरित्र भी प्रत्यक्ष रूप में एकांकी में चित्रित नहीं हुआ है किंतु माँ और उमा की बातों के बीच उसका चरित्र उभर कर आया है। माँ की मूल समस्या यही है कि अविनाश ने विजातीय बंगाली लड़की से विवाह किया है और पंरपरागत संस्कारों तथा जाति-पाँति के भेदभाव के कारण माँ उसे स्वीकार नहीं कर पाती। अविनाश की बहू देखने में बड़ी भोली और प्यारी लगती है। जो एक बार देख लेता है वह फिर उस रूप को भुला नहीं पाता। बार-बार देखने को मन करता है। बड़ी-बड़ी काली आँखें, आँखों में शैशव की भोली मुस्कराहट, लज्जा से लाल कपोलों पर हँसी। बाहर से जितना निर्मल रूप-सौंदर्य है, भीतर से भी उतनी ही पवित्र है। देखने वाले पर ऐसा प्रभाव पड़े कि मोहिनी छा जाए।

वह अपने पति से बेहद प्रेम करती है। इसका यह अर्थ नहीं कि पति के अन्य परिवार वालों से द्वेष का भाव रखती है। जब उमा उससे लड़ने जाती है और अविनाश के घर से अलग होने का सारा दोष उस पर लगाती है तो भी वह उमा को समझाते हुए गले लगाती है। वह बड़े ही सामान्य ढंग से यह स्वीकार करती है कि माँ बेटे के संबंध से बढ़कर कुछ और नहीं होता किंतु उसका यह तर्क है कि पति से बढ़कर पत्नी के लिए और कुछ भी नहीं है और फिर उसने तो पति के लिए समाज की ही नहीं बल्कि अपने हृदय की भी साक्षी दी है। उनके कहने पर वह प्राण दे सकती है परंतु उनको दुखी करके वह किसी को सुखी करने की कल्पना नहीं कर सकती । वह उमा से अतुल को छोड़ने संबंधी प्रश्न पूछकर उमा को निरूत्तर कर देती है। उमा उसके साथ लड़ने जाती है किंतु वह उसे गले लगाकर उसका स्वागत करती है। उसके इस सद्व्यवहार के कारण की उमा यह मानती है कि उसमें एक मोहिनी शक्ति है। पति से गहन प्रेम के कारण ही वह उसकी बीमारी के समय धैर्य पूर्वक सेवा कहती है और पति के प्राण बचा लेती है। अकेली होते हुए भी किसी के सामने हाथ नहीं फैलाती है।

इस तरह अविनाश की पत्नी भी अविनाश की तरह ही स्वाभिमानिनी, व्यवहार कुशल एवं अपने सिद्धांतों पर अडिग रहने वाली स्त्री है। पति से उसके अटूट प्रेम एवं दृढ़ता के कारण ही परंपरागत संस्कारों में जकड़ी माँ को अपने विचार बदलने पड़ते हैं।

३.५ संदर्भ सहित व्याख्या:

१) काश कि मैं निर्मम हो सकती, काश कि मैं संस्कारों की दासता से मुक्त हो सकती! हो पाती तो कुल, धर्म और जाति का भूत मुझे तंग न करता और मैं अपने बेटे से न बिछुड़ती । स्वंय उसने मुझसे कहा था, संस्कारों की दासता सबसे भयंकर शत्रु है।

संदर्भ: 'संस्कार और भावना' सुप्रसिद्ध नाटककार विष्णु प्रभाकर जी द्वारा लिखी गई प्रसिद्ध एकांकी है। प्रस्तुत पंक्तियाँ इसी एकांकी से ली गई हैं। इसके माध्यम से लेखक ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि भावनाओं की आँधी में परंपरागत संस्कारों के कारण किये गए निश्चय कई बार धराशायी हो जाते हैं। संस्कारों और भावना के बीच संघर्ष चित्रित करते हुए लेखक ने भावनाओं की जीत के माध्यम से आज के भौतिकवादी युग में सूखते जा रहे संबंधों को फिर से सजाने का संकेत भी किया है।

प्रसंग: अविनाश एक नीची श्रेणी की विजातीय बंगाली लड़की से विवाह कर लेता है, जिसे उसकी माँ अपनी बहू के रूप में स्वीकार नहीं करती। इस कारण अविनाश को अपनी माँ से अलग रहना पड़ता है । इसी बीच अविनाश को हैजा हो जाती है। उसकी पत्नी अपने प्राणों की बाजी लगाकर उसकी सेवा करती है और अपने पति को बचा लेती है। अविनाश की बीमारी की खबर जब माँ को मिलती है तो उसे बड़ा दुख होता है कि उसे किसी ने बताया ही नहीं। माँ को सांत्वना दिलाने के लिए उमा यह बताती है कि वह एक बार अपनी जेठानी से इस बात के लिए लड़ने गई थी कि उसके नाते ही बड़े भैया माँ और परिवार से अलग रहते हैं। माँ को बेटे से अलग करना पाप है किंतु अविनाश बहू अपने तर्कों से उमा को निरूत्तर कर देती है। उमा से ही यह मालूम होता है कि अतुल भी बहाना बनाकर बड़े भाई अविनाश को देखने गया था। तब माँ को लगता है कि सब लोग वहाँ जाते हैं और वह मोह –ममता में फँसकर उसकी सूरत देखने को तरसती रही है। माँ इसे रक्त का खिंचाव मानती है। इसी संदर्भ में वह कहती है कि काश! वह भी निर्मम हो सकती । उसे लगता है कि यदि वह भी अपने संस्कारों की दासता से मुक्त हो जाती तो कुल, जाति व धर्म का भूत उसे भी तंग नहीं करता और तब वह अपने जवान बेटे से न बिछुड़ती । उसे याद आता है कि अविनाश ने भी एक बार बात – बात में कहा था कि संस्कारों की दासता सबसे भयंकर शत्रु होती है।

विशेष: इस कथन से जहाँ बेटे के प्रति माँ की ममता झलकती है, वहीं यह संकेत भी दिया गया है कि संस्कारों में बँधा व्यक्ति कई बार सही कार्य का भी विरोध करता है। जब तक वह संस्कारों एवं रूढ़ि परंपराओं से मुक्त नहीं हो जाता, सड़ी – गली मान्यतांओं का पालन करता रहता है।

संदर्भ सहित स्पष्टीकरण के अन्य अंश :

१. मेरे ही तो बेटे हैं। माया – ममता किसी को भी नहीं छू गई है। हर बात में देश,धर्म और कर्तव्य की दुहाई देना उन्होंने सीखा है।

२. माँ को बेटे से अलग करना पाप हैं, माँ का ह्रदय तोड़ना अत्याचार है। उस अत्याचार को दूर करने के लिए प्राण भी देने पड़े तो कम हैं।

३. पति भी वह जिसके लिए उसने समाज की ही नहीं, वरन् अपने ह्रदय की साक्षी दी है; जिसे वह प्यार करती है। उसके कहने पर वह प्राण दे सकती है, पंरन्तु उसको दुखी करके वह किसी को सुखी करने की कल्पना नहीं कर सकती

४. संतान का पालन माँ – बाप का नैतिक कर्तव्य है। वे किसी पर एहसान नहीं करते केवल राष्ट्र का ऋण चुकाते हैं। वे ऋण- मुक्त हों, यही उनका परितोष है। इससे अधिक मोह है, इसीलिए पाप है।

५. मैं जानता था, तुम वहाँ नहीं जा सकोगी और जाने से भी क्या होता है । जब तक तुम नीची श्रेणी की विजातीय भाभी को घर नहीं ला सकती, तब तक प्रेम और ममता की दुहाई व्यर्थ है। तुम सब निर्मम हो, निर्मम....

६. जिन बातों का हम प्राण देकर विरोध करने को तैयार रहते हैं, एक समय आता है, जब चाहे किसी कारण से भी हो, हम उन्हीं बातों को स्वीकार कर लेते हैं।

३.६ वस्तुनिष्ठ प्रश्न:

प्र.१. समय आने पर हम किन बातों को चुपचाप स्वीकार कर लेते हैं ?
उ. जिन बातों का हम प्राण देकर विरोध करने को तैयार रहते हैं, समय आने पर हम उन्हें चुपचाप स्वीकार कर लेते हैं।

प्र.२. अविनाश के बीमार होने की बात माँ को किसने बतायी ?
उ. अविनाश के बीमार होने की बात माँ को मिसरानी ने बतायी।

प्र.३. अविनाश को कौन सी बीमारी हुई थी ?
उ. अविनाश को हैजा हो गया था।

प्र.४. माँ के अनुसार उनके बेटे हर बात में किसकी दुहाई देते हैं ?
उ. माँ के अनुसार उसके बेटे हर बात में देश, धर्म और कर्तव्य की दुहाई देते हैं।

प्र.५. अविनाश के अलग रहने का दोषी उमा किसे मानती है ?
उ. अविनाश के अलग रहने के लिए उमा भाभी को दोषी मानती है।

प्र.६. उमा किससे लड़ने गई थी ?
उ. उमा अपनी जेठानी से लड़ने गई थी।

प्र.७. उमा अपनी जेठानी से लड़ने क्यों गई थी ?
उ. उमा अपनी जेठानी से लड़ने गई थी क्योंकि उसके अनुसार माँ के दुखों का कारण उसकी जेठानी ही थी।

प्र.८. अतुल किस काम से अविनाश के पास गया था ?
उ. अतुल दप्तर के काम से अतुल के पास गया था।

प्र.९ माँ के अनुसार चेतन से अधिक शक्तिशाली कौन होता है ?
उ. माँ के अनुसार चेतन से अधिक शक्तिशाली अचेतन होता है।

प्र.१०. अविनाश के अनुसार सबसे भयंकर शत्रु कौन होता है ?
उ. अविनाश के अनुसार सबसे भयंकर शत्रु संस्कारों की दासता होती हैं।

प्र.११. संतान का पालन करना किसका नैतिक कर्तव्य है ?
उ. संतान का पालन करना माँ – बाप का नैतिक कर्तव्य है।

प्र.१२. माँ को निर्मम और कायर कौन मानता है ?
उ. माँ को निर्मम और कायर अतुल मानता है।

प्र.१३. अतुल ने भाभी के स्वास्थ्य के बारे में क्या सुना था ?
उ. अतुल ने सुना था कि भाभी मरणासन्न हैं।

प्र.१४. अतुल के अनुसाार भैया में क्या दोष है ?
उ. अतुल के अनुसार भैया में यह दोष है कि वे जो कहते हैं, उसे करना जानते हैं।

प्र.१५. अविनाश को बचाने की शक्ति किसमें है ?
उ. अविनाश को बचाने की शक्ति केवल माँ में है।

प्र.१६. उमा के अनुसार कौन बड़े सुंदर होते हैं ?
उ. उमा के अनुसार बंगाली बड़े सुंदर होते हैं।

३.७ बोध प्रश्न:

प्र.१ ' संस्कार और भावना' की माँ पुराने संस्कारों और मातृ - प्रेम के द्वंद्व से किस तरह उबरती हैं ?
प्र.२ ' संस्कार और भावना' के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।
प्र.३ ' संस्कार और भावना' में पीढ़ियों का अंतराल किस तरह प्रकट हुआ है।
प्र.४ ' संस्कार और भावना' शीर्षक की सार्थकता पर प्रकाश डालिए।

४

हरी घास पर घंटे भर

- सुरेंद्र वर्मा

इकाई की रूपरेखा :

४.० इकाई का उद्देश्य
४.१ प्रस्तावना
४.२ कथा - सार
४.३ उद्देश्य
४.४ चरित्र चित्रण
- वृद्ध दंपति
- स्त्री पुरुष
- युवक-युवती
४.५ संदर्भ सहित व्याख्या
४.६ वस्तुनिष्ठ प्रश्न
४.७ बोध प्रश्न

४.० उद्देश्य:

इस इकाई में हम 'हरी घास पर घंटे भर' एकांकी का मूल्यांकन करेंगे ।
इस इकाई को पढ़कर आप:

- इस एकांकी की कथावस्तु का सार जान सकेंगे और उसका विश्लेषण कर सकेंगे।
- एकांकी के चरित्रों की विशेषताएँ जान सकेंगे ।
- एकांकी का उद्देश्य समझ सकेंगे।
- एकांकी के मूल पाठ से कुछ महत्वपूर्ण पक्तिंयों की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।
- एकांकी से संबधित कुछ वस्तुनिष्ठ एवं आलोचनात्मक प्रश्नों का उत्तर तैयार कर सकेंगें।

४.१ प्रस्तावना:

सुरेंद्र वर्मा समकालीन हिंदी नाटककारों में बहुचर्चित हस्ताक्षर हैं। नाटकों के अतिरिक्त इन्होंने कहानियाँ और उपन्यास भी लिखे हैं। 'आठवाँ सर्ग', 'शंकुतला की अंगूठी' और 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' इन के प्रसिद्ध नाटक है। 'मुझे चाँद चाहिए ' इनका बेहद लोकप्रिय उपन्यास है। पौराणिक प्रसंगों के माध्यम से समकालीन जीवन

मूल्यों की प्रतिष्ठा इनके अधिकांश नाटकों-एकांकियों में मिलती है। नींद क्यों रात भर नहीं आती इनका एकांकी संग्रह है जिसमें स्त्री- पुरूष संबंधों को एक नए धरातल पर परखा गया है। प्रस्तुत एकांकी 'हरे घास पर घंटे भर' में लेखक ने तीन दंपतियों के माध्यम से युवा, प्रौढ़, और वृद्धावस्था के संबंधों, उनकी आकांक्षाओं, सपनों और दृष्टियों को चित्रांकित करने का प्रयास किया है।

४.२ कथा – सार

एकांकी का आरंभ पार्क के एक कोने में बैठे युवा जोड़े के संवादों से होता है। युवती अपनी माँ को पत्र द्वारा नया घर सजाने की व्यस्तता में समय न मिलने की सूचना देती है । लोगों के देख लेने के संकोच में वे जगह बदलना चाहते हैं किंतु फिर उन्हें लगता है कि पार्क में हर जगह कोई न कोई तो होगा ही । युवती बताती है कि उसका दिन घर की साफ – सफाई करने और दोपहर को खाकर थोड़ा आराम करने के बाद मिसेज खन्ना के साथ बातचीत करने में बीत गया।

अधेड़ स्त्री – पुरूष घर की जरूरी आवश्यकताओं में उलझे हुए बातें करते हैं। बाजार से चाय लाना भूल जाना, बीमे की किस्त, बिजली का बिल ज्यादा आना, प्रेस खराब होने के कारण बाहर कपड़ा प्रेस कराने का खर्च और दप्तर के नजदीक घर लेले की चिंता में वे परेशान दिखायी देते हैं। वृद्ध और वृद्धा दो रोज पहले हुई मीटिंग के कारण चारों और फैले पोस्टरों और झंडियों की चर्चा करते हैं। उन्हें खुशी होती है कि ऐसा कानून बनने वाला है, जिससे मकान किराएदारों के ही हो जाएँगे।

युवक दप्तर में बिताये अपने व्यस्त समय का जिक्र करता है। सिगरेट जलाने पर युवती द्वारा पाबंदी लगाने को याद कर सिगरेट न पीने, युवक को सिरदर्द होने की बात सुनकर युवती के चिंतित हो जाने आदि द्वारा उन दोनों के प्रेमभरे जीवन को उभारा गया है। अधेड़ स्त्री को बेटे रज्जू के आई. आई. टी. में दाखिला हो जाने से राहत मिलती है किंतु अधेड़ पुरूष को उसके साथ – साथ और तीनों बच्चों की पढ़ाई के खर्च की चिंता होने लगती है। उन्हें आगे के पाँच – छह साल बड़े कठिन होने की चिंता होती है। उन्हें आशा की नौकरी लग जाने की उम्मीद बँधती है। उन्हें बेटी की शादी की चिंता नहीं होती।

वृद्ध अपनी पोती डॉली और बहू के पहनावों की शिकायत करते हैं। वृद्धा उनसे जानना चाहती है कि वे डॉली और पिंटू से बात क्यों नहीं करते तो वृद्ध चिढ़ते हुए कहते हैं कि डॉली के बित्ते भर की मिनी स्कर्ट पहनने या पिंटू के कानों तक कलम रखने की वे तारीफ नहीं कर सकते। वे सब कुछ देखकर भी नजरअन्दाज कर देते हैं।

युवती का हाथ देखकर युवक उसके जीवन से जुड़ी कुछ बातों की भविष्यवाणी करता है। युवती को हँसी आती है क्योंकि वह दाहिना हाथ देख रहा होता है। युवक इसे पामिस्ट्री की नई थ्योरी बताता है। अधेड़ पुरूष अपने बेटों के पढ़ाई में अच्छा होने पर संतोष जाहिर करता है। उसकी इच्छा है कि उसने भले ही कोई बड़ा काम नहीं किया लेकिन उसके बेटे बड़े आदमी बनें। इधर वृद्धा अपनी बेटी की चिट्ठी में उन दोनों को कलकत्ता बुलाये जाने की बात बताती है

लेकिन वृद्ध जाने से मना कर देता है। वृद्ध को अफसोस होता है कि उसने पत्नी को कोई सुख नहीं दिया। वह चूल्हे - चौके में लगी रही किंतु वृद्धा मानती है कि वह बड़ी नसीब वाली है क्यों कि परिवार और पति का साथ भी है।

युवक दस हजार का इंश्योरेंस कराने और गैस सिलेंडर लेने की सूचना युवती को देता है। दोनों में प्रेम की प्रगाढ़ता दिखायी देती है। युवती जगह बदलकर थोड़ा बड़ा घर लेना चाहती है। वे दोनों पिक्चर देखने जाने और बाहर ही खाना खाने की योजना बनाते हैं। उन दोनों को देखकर अधेड़ स्त्री-पुरूष उनमें नई शादी का उत्साह मानते हैं और अपने बच्चों के घर आने की चिंता में डूब जाते हैं। इधर वृद्ध डाइबिटिज पर काबू पाने, चश्मे से दिखायी न देने और घुटनों का दर्द बढ़ जाने के साथ – साथ ब्लडप्रेशर बढ़ने की चर्चा करते हैं। उनकी बातों में निराशा झलकती है। उन्हें लगता है कि जिंदगी बोझ बन गई है। चाहे खुशी से चाहे मजबूरी से इसे बिताना ही होगा।

४.३ उद्देश्य:

'हरी घास पर क्षण भर' प्रसिद्ध नाटककार सुरेंद्र वर्मा की बहुचर्चित एकांकी है। इसमें लेखक ने तीन दंपतियों माध्यम से मध्यवर्गीय जीवन स्थितियों को व्यक्त किया है। इसके साथ ही लेखक ने तीन आयुवर्ग के दंपतियों के माध्यम से उनकी आशाओं – आकांक्षाओं और सपनों को भी रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। युवा मन की उमंगें अलग तरह की होती हैं। उनमें आपसी प्रेम और आकर्षण होता है जब कि प्रौढावस्था में परिवार की जिम्मेदारियाँ बढ़ जाती हैं। इसलिए उन्हें पास सिनेमा देखने जाने और बाहर ही खाना खाने के बदले बीमा की किश्त भरने, बिजली का बिल बढ़ जाने, इस्तरी ठीक कराने से लेकर बच्चों की पढ़ाई के खर्च और रिश्तेदारों पर होने वाले खर्च की चिंता सताती रहती है।

इनसे भी अलग जीवन वृद्धावस्था में होता है । वे अपने ही परिवार के अन्य सदस्यों से उपेक्षित होते हैं। अतः आपस में एक दूसरे से सुख- दुख बाँटते हैं। वृद्ध पोते- पोतियों का व्यवहार और उनका पहनावा उन्हें खटकता रहता है। इस एकांकी की वृद्ध दंपति यह अनुभव करती है कि डॉली के पास अब उनसे बात करने का समय नहीं है। डॉली और पिंटू सोचते हैं कि दादाजी उनसे नाराज हैं कितु दादाजी न किसी से नाराज होते हैं न खुश बल्कि वे अब खामोश रहकर तमाशा देखते रहते हैं। बित्ते भर की मिनी स्कर्ट पहने डॉली या तात्या टोपे जैसी कानों तक की कलम रखे पिंटू का यह रहन – सहन उन्हें पसंद नहीं आता लेकिन वे यह सब देखकर भी नजरअंदाज कर देते हैं । वे सोचते हैं कि जिसको जो पसंद हो वो करे पीढ़ियों के के इस अंतराल के साथ – साथ वृद्धावस्था की कुछ अपनी मुसीबतें भी हैं। इस वृद्ध दंपति के माध्यम से लेखक ने उन परेशानियों को भी व्यक्त किया है। वृद्ध स्त्री घुटने के दर्द से परेशान है। ब्लडप्रेशर भी है और आँखों में मोतियाबिंद भी हो गया है। वृद्ध पुरूष को डाइबिटीज है। चश्मा लगाने पर भी अक्षर पहचान में नहीं आते । दोनों कानों से सुनाई भी कम देता है। इस तरह दोनों वृद्धावस्था की विभीषिका झेलते हुए जी रहे हैं। ऐसे में वृद्ध को जिंदगी बोझ लगती है किंतु वह जिंदगी से हारता नहीं है। उसे लगता है कि चाहे खुशी से या चाहे मजबूरी से इसे बिताना ही होगा। वृद्ध को इस बात का कष्ट होता है कि चालीस वर्षों के वैवाहिक जीवन में उसने पत्नी को कोई सुख नहीं दिया। वह चूल्हे चौके में ही व्यस्त रही किंतु वृद्ध स्त्री को अपने जीवन से कोई शिकायत नहीं होती। वह संतुष्ट है कि बाल- बच्चों से भरा पूरा उसका परिवार है। बेटे-बहू और पोते-पोतियों के साथ उसकी बेटी भी अपने घर में संतुष्ट है। वह पति से कहती भी है कि वह

अपने को बहुत ही नसीब वाली समझती है क्योंकि उसके परिवार में लिहाज करने वाले बेटा-बहू हैं और सिर पर पति का हाथ है । वह चाहती है कि जब उसकी अर्थी उठे तो उसके पति उसे कंधा दें।

इस तरह इस एकांकी के माध्यम से लेखक ने पारिवारिक जीवन को महत्व दिया है। इन तीनों दंपातियों को अकेलेपन का बोध नहीं है वे आपस में अपना सुख- दुख बाँट लेते हैं। रचनाकार ने तीन आयुवर्गो के दंपातियों के माध्यम से जैसे एक ही व्यक्ति के जीवन की तीन स्थितियों का जीवन यथार्थ साकार कर दिया है।

४.४ चरित्र चित्रण:

'हरी घास पर क्षण भर' में तीन दंपतियों को प्रस्तुत किया गया है।

४.४.१ युवक - युवती

युवक - युवती की बातों से यह प्रतीत होता है कि वे दोनों नव विवाहित हैं। वे पार्क में एकांत चाहते हैं किंतु कोई ऐसी जगह मिलती नहीं है। उन्हें लगता है कि हर जगह कोई न कोई तो होगा ही। युवती का नाम मधु है । वह अपनी नई गृहस्थी को सजाने – सँवारने में अपना समय बिताती है। माँ को लिखे उसके पत्र से यह मालूम होता है कि नई गृहस्थी के काम काज में वह बहुत व्यस्त रहती है लेकिन पति के साथ वह बहुत खुश है। युवक भी अपने दफ्तर के कामों में बहुत व्यस्त रहता है। बिल तैयार कराना, रिमाइंडर भिजवाना, कांट्रेक्टर को नोटिस भेजना आदि तमाम कामों में ही उसका दिन बीत जाता है ।

वह मधु से बहुत प्रेम करता है । उसकी बातों से भी इसका आभास होता है। मधु ने दस से अधिक सिगरेट न पीने का प्रतिबंध लगाया है। अत: वह सिगरेट जलाने के पहले अपना हाथ रोक लेता है। मधु की ही ताकीद मानकर वह चाय का ऑर्डर देते – देते रुक जाता है और फिजूलखर्ची से अपने आप को बचाता है । मधु भी उससे उतना ही प्रेम करती है। अत: उसके सिर दर्द की बात सुनकर बेचैन हो उठती है। वह घर के प्रबंध की सारी जिम्मेदारियाँ उठा लेती है, साफ – सफाई से लेकर बाजार से जरूरी सामान ले आने, लांड्री से कपड़े लाने और घर के पर्दे सिलने तक की जिम्मेदारियाँ वह उठा लेती है।

वे दोनों जीवन में खुश होने के छोटे- छोटे क्षण खोजते रहते हैं। अत: युवक मधु के हाथ देखने का प्रयत्न करता है। वह उसकी जन्म रेखा और जिंदगी की लकीर देखकर कुछ बातें बताते हुए उसे प्रभावित करने की कोशिश करता है लेकिन जब मधु यह बताती है कि वह दायाँ हाथ देख रहा है तो वह पामिस्ट्री की नई थियरी का हवाला देते हुए अपनी झेंप मिटाता है।

युवक जागरूक है। अत: वह दस हजार का इंश्योरेंस कराता है और अपनी कीमत दस हजार बताता है तो मधु एक आदर्श पत्नी की तरह उसे बेशकीमती बताती है। इससे उन दोनों के बीच आपसी प्रेम की प्रगाढ़ता झलकती है। युवक उसकी हर सुविधा का ध्यान रखता है। अत: सिलेंडर की व्यवस्था कर लेता है। उसके कहने पर दो कमरे और किचन वाला मकान लेने का निश्चय करता है। वे साथ- साथ फिल्म देखने जाते हैं और बाहर ही खाना खाने का निश्चय भी करते हैं।

इस तरह एकांकीकार ने युवक - युवती के बीच आपसी प्रेम की प्रगाढ़ता और युवा मन की उमंग भरी जिंदगी चित्रित की है।

अधेड़ स्त्री और पुरूष:

अधेड़ स्त्री और पुरूष के माध्यम से एकांकीकार ने घर परिवार की जिम्मेदारियों में उलझे परिवार के लोगों की जिदंगी को उभारा है। अधेड़ स्त्री को घर- गृहस्थी की विशेष चिंता रहती है। आवश्यक सामानों की सूची में चाय भूल जाती है तो उसे याद करके लाने के लिए कहती है। आधा किलो अरहर की दाल खराब निकल जाती है तो उसके पैसे कटवाने का निर्देश देती है। इसी तरह बीमे की किस्त, बिजली का बिल ज्यादा आने, प्रेस के खराब हो जाने और बाहर से कपड़े इस्तरी कराने पर होने वाले खर्च की उसे चिंता सताती रहती है। मध्यवर्गीय सोच के तहत वे घर भी दप्तर के नजदीक लेने की सोचते हैं जिससे तीन लोगों के बस का खर्च बच जाए।

बच्चों की पढ़ाई- लिखाई पर ये विशेष ध्यान देते हैं। इन्हें संतोष होता है कि रज्जू का आई आई टी में दाखिला हो गया परंतु उसके खर्च के साथ – साथ तीन और बच्चों की पढ़ाई का खर्च भी उनके लिए चिंता का विषय बन जाता है। इसके साथ ही हारी –बीमारी और नाते – रिश्तेदारी का खर्च भी लगा रहता है। इससे अधेड़ पुरूष को लगाता है कि आगे के पाँच – छह साल बड़ी कठिनाई से भरे होंगे। इसी लिए वे बड़ी बेटी आशा की नौकरी लग जाने के बारे में भी विचार – विभर्श करते हैं। उन्हें लगता है कि अभी उसका अठारहवाँ साल है। अत: शादी की कोई जल्दी नहीं है किंतु कोई नौकरी लग जाने की चिंता उन्हें विशेष रूप से होती है जिससे उन्हें थोड़ा सहारा हो जाए। रज्जू के आई. आई .टी. प्रवेश लेने पर उन्हें गर्व भी होता है। प्रौढ़ पुरूष यह मानता है कि उसने तो कुछ नहीं किया लेकिन उसका लड़का जरूर बड़ा आदमी बनेगा। वह दूसरे बेटे को भी टेक्निकल लाइन में डालने की सोचता है। इस तरह ये दोनों अपनी संतान के भविष्य के लिए सिर्फ चिंतित ही नहीं बल्कि आशान्वित भी हैं।

इस तरह इस दंपति के चित्रण द्वारा एकांकीकार ने मध्यवर्गीय गृहस्थ जीवन का यथार्थ प्रस्तुत किया है जिसमें भविष्य की आशाएँ हैं। कठिन परिस्थितियों में भी यह दंपति अपने बच्चों को योग्य बनाने के लिए प्रयत्नशील है। उसे विश्वास है कि वे आगे चल कर अवश्य सफल होंगे।

वृद्ध-वृद्धा :

वृद्ध दंपति पुराने विचारों और पुरानी जीवन शैली के परिचायक है। उन्होंने जीवन अपने ढंग से जिया है। अत: नए विचारों और नई पीढ़ी से वे सामंजस्य नहीं बिठा पाते । नई पीढ़ी के तौर तरीके, रहन – सहन एवं पहनावों को लेकर उनमें असंतोष दिखायी देता है। वृद्ध को अपनी ही पोती डॉली की पोशाक पसंद नहीं आती। वे नहीं चाहते हैं कि डॉली बित्ते भर की मिनी स्कर्ट पहने या पिंटू तात्या टोपे जैसी कानों तक की कलम रखे। बहू का डॉली द्वारा उसके जन्मदिन पर दिया गया बैलबॉटम पहनना भी वे पसंद नहीं करते। वृद्ध के मन में आक्रोश है। इसी लिए डॉली और पिंटू को लगता है कि दादाजी उनसे नाराज हैं और उनसे बाते नहीं करते किंतु वृद्ध के मन में डॉली के प्रति आक्रोश है। वे कहते हैं कि उसे फुरसत ही कहाँ है उनके पास बैठने की। अभी तो कायनात खुल रही है उसके सामने परत –दर-परत । अपनी इसी नाराजगी में वे कहते हैं कि अब खामोश रह कर जमाने को देखना ज्यादा अच्छा है। जिसको जो पसंद हो, वह वही करे। अब वे सब कुछ नजर अंदाज करना ठीक मानते हैं।

वस्तुतः उनका इस तरह सोचना पीढ़ियों का अंतराल है। वे जिंदगी के उस मुकाम पर पहुँच चुके हैं जहाँ उन्हें अपने होने का भी पता नहीं होता । दूसरों की बात कौन करे किंतु वे मानते हैं कि परिवार और बच्चे अपने ही हैं । उनके साथ ही घर में रहना है। बच्चे अपने में खुश हैं तो वे भी अपने में खुश रहना चाहते हैं। इसीलिए लीला के बुलावे पर कलकत्ता जाना भी टाल जाते हैं। उन्हें लगता है कि बूढ़े की नुमाइंदगी बूढ़े की लकड़ी ही करती है।

वृद्धा का दृष्टिकोण अलग है। वह परिवार और बच्चों का पक्ष लेती है। अपने चालीस वर्षों के वैवाहिक जीवन में यद्यपि चूल्हा- चौके में ही लगी रही किंतु वह खुद को खुशनसीब मानती है। उसके साथ लिहाज करने वाले बेटा- बहू हैं, लड़की भी अपने गृहस्थी में खुश है। पोते- पोतियों के साथ – साथ पति का हाथ भी उसके सिर पर है। वह चाहती है कि जब उसकी अर्थी उठे तो वृद्ध उसकी अर्थी को कंधा दे किंतु वृद्ध को लगता है कि वृद्धा की तरफ से बेफिक्र होने के कारण जिंदगी बोझ लगती है।

वृद्ध स्त्री घुटने के दर्द से परेशान है। उसे ब्लडप्रेशर भी है और मोतियाबिंद भी। वृद्ध को भी डाइबिटीज है। चश्मा लगाने पर भी अक्षर पहचान में नहीं आते। दोनों कानों से भी उन्हें सुनाई नहीं देता। इस तरह दोनों वृद्धावस्था की जर्जर शरीर लिए परेशान हैं किंतु वे हिम्मत नहीं हारते। इस तरह वृद्ध दंपति के माध्यम से बूढ़े लोगों के जीवन की समस्याओं को सार्थक रूप में उभारा गया है।

४.५ संदर्भ सहित स्पष्टीकरण :

"मैं तो अपने को बहुत अच्छे नसीब वाली समझती हूँ और क्या चाहिए किसी को ? लिहाज करने वाले बेटा – बहू हैं, लड़की अपनी गिरस्ती में मगन है, सिर पर तुम्हारा हाथ है"।

संदर्भ : सुरेंद्र वर्मा हिंदी नाटक और एकांकी साहित्य के प्रमुख हस्ताक्षर हैं। उन्होंने अपनी अधिकांश रचनाओं में वर्तमान जीवन की विविध समस्याओं को यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत किया है। ' हरी घास पर घंटे भर ' उनका ही लिखा हुआ एक बहुचर्चित एकांकी है। प्रस्तुत पंक्तियाँ इसी एंकाकी से ली गई हैं।

प्रंसग : इस एकांकी में लेखक ने युवक, अधेड़ एवं वृद्ध दंपतियों के वार्तापाल द्वारा वर्तमान जीवन को संपूर्णता में व्यक्त करने का प्रयास किया है। एक तरफ वह युवक दंपति है जो नवविवाहित जीवन की उमंगों से भरे हैं। वे अभाव के क्षणों में भी आपसी प्रेम अनुभव कर लेते हैं। अधेड़ पुरूष और स्त्री अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए तमाम अभावों के बीच भी अपने बेटे के बड़ा आदमी बनने का सपना पाले हुए हैं। वृद्ध दंपति के माध्यम से लेखक ने पीढ़ियों के अंतराल को व्यक्त करते हुए तमाम शारीरिक असमर्थताओं का उल्लेख किया है। इन पंक्तियों में वृद्धा स्त्री की मनः स्थिति व्यक्ति की गई है।

स्पष्टीकरण : वृद्ध दंपति का भरा – पूरा परिवार है किंतु वृद्ध को अपने ही नाती- पोती से वैचारिक मतभेद झेलना पड़ता है। डॉली का मिनी स्कर्ट पहनना या पिंटू का तात्या टोपे की तरह कानों तक कलम रखना पसंद नहीं आता लेकिन वे न तो किसी से नाराज होते हैं, न खुश । अपने चालीस वर्षों के वैवाहिक जीवन में पत्नी को कोई विशेष सुख नहीं दिया है बल्कि चूल्हा - चौके में ही उसकी पूरी जिंदगी बीत गई है। वृद्ध की बातें सुनकर वृद्धा उन्हें आश्वस्त करती है। उसके अनुसार यह सच नहीं । इसके विपरीत वृद्धा अपने को बहुत ही खुशनसीब मानती है क्योंकि उसके जीवन में उसका लिहाज करने वाले बेटा और बहू हैं। लड़की का जीवन भी सुखी है। वह अपनी घर- गृहस्थी में मगन है। सिर पर पति का हाथ है जो सहारा देने के लिए हमेशा तैयार रहता है। ऐसे भरे – पूरे परिवार में वह तमाम शारीरिक असमर्थताओं के बावजूद खुश रहती है और अपने को भाग्यशाली मानती है।

विशेष : इन पंक्तियों में एकांकीकार ने एक मध्यमवर्गीय परिवार की वृद्ध किंन्तु सौभाग्यवती स्त्री की मन: स्थिति का यथार्थ रूप प्रस्तुत किया है। मध्यमवर्गीय मानसिकता के तहत यह स्त्री बहू-बेटे व नाती – पोतों से भरे अपने परिवार तथा पति के साथ के कारण चूल्हे- चौके में जीवन के चालीस वर्ष बिता देने के बाद भी स्वयं को भाग्यशाली मानती है।

संदर्भ सहित व्याख्या के लिए अन्य अंश :

१) तो क्या किया जाए रज्जू की माँ! मन पक्का करना ही पड़ेगा.... थोड़ा तजुर्बा हो जाए उसे तो आगे चलकर मेरे ऑफिस में भी गुंजाइश हो सकती है।

२) मैं न किसी से नाराज हूँ, न खुश । अब तो बस, खामोश हैं और तमाशा-ए-अहले –जहाँ देखते हैं।

३) जिसको जो पसंद हो, वो करे । मैंने सब अनसुना कर दिया। सब नजरअन्दाज कर दिया.... मैं वहाँ हूँ जहाँ से मुझको भी, कुछ अपनी खबर नहीं आती।

४) मैं तो तुम्हें कोई सुख नहीं दे सका । सारी जिंदगी तुम्हारी चूल्हे - चौके में ही चली गई।

५) जिंदगी मेरे लिए बोझ बन गई है। कोई रास्ता नहीं। चाहे खुशी से हो चाहे मजबूरी से – इसे बिताना ही होगा।

४.६ वस्तुनिष्ठ प्रश्न:

प्र.१. युवक के अनुसार वह दिल्ली में बैठा था और युवती कहाँ बैठी थी ?
उ. युवक के अनुसार वह दिल्ली में बैठा था और युवती त्रिचनापल्ली में।

प्र.२. युवक दफ्तर कितने बजे गया ?
उ. युवक दप्तर साढ़े नौ बजे गया।

प्र. ३. युवक बचे हुए खाने की जगह कहाँ मानता है ?
उ. युवक बचे हुए खाने की जगह कूड़े के डिब्बे में मानता है।

प्र.४. युवती से मिलने कौन आया था ?
उ. युवती से मिलने मिसेज खन्ना आयी थी।

प्र.५. अधेड़ स्त्री लिस्ट में क्या लिखना भूल गई थी ?
उ. अधेड़ स्त्री लिस्ट में चाय का डिब्बा लिखना भूल गई थी।

प्र.६. स्त्री के अनुसार बिजली का बिल ज्यादा क्यों आया था ?
उ. छुट्टियों में दोनों पंखे चलने के कारण बिजली का बिल ज्यादा आया था।

प्र.७. पुरूष के अनुसार प्रेस का क्या जल गया होगा ?
उ. पुरूष के अनुसार प्रेस का क्वायल जल गया होगा।

प्र.८. पुरूष किसके आसपास घर लेना चाहता है ?
उ. पुरूष पहाड़गंज के आसपास घर लेना चाहता है।

प्र.९ बहू के अनुसार जुलूस किसके लिए था ?
उ. बहू के अनुसार जुलूस 'गौरमेंट' के लिए था।

प्र.१०. बहू कौन - सा कानून बनने की बात कह रही थी ?
उ. बहू ऐसे कानून के बनने की बात कर रही थी जिससे मकान किरायेदारों के ही हो जाएँगे।

प्र.११. किसी को टा – टा करके युवक कितने बजे ऑफिस पहुँचा ?
उ. किसी को टा – टा करके युवक सवा दस बजे ऑफिस पहुँचा।

प्र.१२. सिगरेट जलाते समय युवक को क्या याद आया ?
उ. सिगरेट जलाते समय युवक को याद आया कि किसी ने दिन भर में दस की पाबंदी लगा दी है।

प्र.१३. युवक चाय का ऑर्डर देते – देते क्यों रूक गया ?
उ. युवक चाय का ऑर्डर देते – देते रुक गया क्यों कि किसी ने फिजूल खर्ची से बचने की ताकीद की थी।

प्र.१४. युवती का क्या नाम था ?
उ. युवती का नाम मधु था।

प्र.१५. रज्जू का दाखिला कहाँ हुआ था ?
उ. रज्जू का दाखिला आई. आई. टी. में हुआ था।

प्र.१६. स्त्री-पुरुष किस को नौकरी पर लगाना चाहते हैं ?
उ. स्त्री-पुरूष आशा को नौकरी पर लगाना चाहते हैं।

प्र.१७ बहू को बैल – बॉटम कब और किसने भेट दिया था ?

उ. बहू को बैल – बॉटम डॉली ने जन्म दिन पर भेट दिया था।

प्र.१८. तात्या टोपे जैसी कानों तक कलम किसने रखी थी ?

उ. तात्या टोपे जैसी कानों तक कलम पिंटू ने रखी थी।

प्र.१९. युवती का कौन-सा हाथ देखकर युवक उसके बारे में बता रहा था ?

उ. युवती का दायाँ हाथ देखकर युवक उसके बारे में बता रहा था।

प्र.२० वृद्ध कहाँ की यात्रा नहीं करना चाहते ?

उ. वृद्ध कलकत्ता की यात्रा नहीं करना चाहते थे।

प्र.२१. वृद्ध के अनुसार बूढ़े की नुमाइंदगी कौन करता है ?

उ. वृद्ध के अनुसार बूढ़े की लड़की बूढ़े की नुमाइंदगी करती है।

प्र.२२. वृद्ध को जिंदगी बोझ क्यों मालूम पड़ती है ?

उ. अपनी पत्नी की तरफ से बेफिक्र होने के कारण वृद्ध को अपनी जिदंगी बोझ मालूम पड़ती है।

प्र.२३. युवक कितने रुपयों का इंश्योरेंस करवाता है ?

उ. युवक दस हजार का इंश्योरेंस करवाता है।

मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई (I.D.O.L.)का निर्धारित पाठ्यक्रम

व्दितीय वर्ष बी.ए.

हिन्दी प्रश्न पत्र - III आधुनिक गद्य

१. दौड़ (उपन्यास) : **ममता कालिया**

वाणी प्रकाशन
२१-ए, दरियागंज,
नवी दिल्ली-११०००२.

२. दस प्रतिनिधि कहानियाँ : **मन्नु भंडारी**

किताबघर प्रकाशन
४८५५-५६/२४,
अंसारी रोड,
दरियागंज

पाठ्यक्रम हेतु निर्धारित कहानियाँ

१. अकेली
२. मजबूरी
३. तीसरा आदमी
४. नई नौकरी
५. असामयिक मृत्यु
६. बंद दराजों का साथ
७. क्षय
८. तीसरा हिस्सा
९. त्रिशंकु
१०. शायद

३. आठ एकांकी - सम्पादक - देवेन्द्र राज अंकुर, महेश आनंद

वाणी प्रकाशन,

रा. ए. दरियागंज, नवी दिल्ली-११०००२.

पाठ्यक्रम के लिए निर्धारित एकांकी

१.	लक्ष्मी का स्वागत	उपेन्द्रनाथ अश्क
२.	रीढ़ की हड्डी	जगदीश चंद्र माथुर
३.	संस्कार और भावना	विष्णु प्रभाकर
४.	हरी घास पर घंटे भर	सुरेन्द्र वर्मा

❖❖❖❖